सौन्दर्य बोध की दृष्टि से शिवानी एवं उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय की पी - एच० डी०
उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध प्रबन्ध

निर्देशक
डा० गिरवाण दत्त मिश्र
रीडर, हिन्दी विभाग
अतर्रा पोस्ट ग्रेजुएट कालेज
अतर्रा [बाँदा]
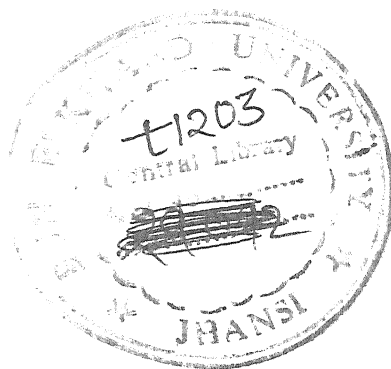
शोधकर्त्री-
सुमित्रा देवी
एम० ए० [हिन्दी]

1997

डॉ0 गिरवाण दत्त मिश्र
रीडर, हिन्दी विभाग
अतर्रा महाविद्यालय, अतर्रा

निवास:
लखन कालोनी
इलाहाबाद बैंक के पास
अतर्रा (बाँदा)

प्रमाण – पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि कु0 सुमित्रा देवी ने मेरे निर्देशन में हिन्दी विषय में शीर्षक **"सौन्दर्य बोध की दृष्टि से शिवानी एवं उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन"** पर अपना शोध कार्य किया है। इन्होंने विश्वविद्यालय द्वारा निर्धारित अवधि 200 दिनों से अधिक समय तक मेरा निर्देशन प्राप्त किया है।

कु0 सुमित्रा देवी का यह शोध – प्रबन्ध मौलिक, नवीन तथा अभिनव साहित्यिक–अभिव्यक्तिगत–सौष्ठव से युक्त है। अतएव मैं इसे बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी में प्रस्तुत करने की अनुमति प्रदान करता हूँ।

(डॉ0 गिरवाण दत्त मिश्र)
रीडर, हिन्दी विभाग
अतर्रा महाविद्यालय, अतर्रा

अनुक्रमणिका

उपसंहार

प्राक्कथन

प्राक्कथन

प्राक्कथन

हिन्दी कथा साहित्य में **"शिवानी"** और **"उषा प्रियंवदा"** ने अनुभूतिप्रवण चित्रण, आधुनिक जीवन की विसंगतियों, आधुनिक यथार्थबोध, नारी संवेदना, सामाजिक मूल्यों के परिवर्तन, मानवीय चेतना के विविध परिदृश्यों को जिस व्यापक सौन्दर्य दृष्टि से चिन्तित किया है, वह तुलनात्मक दृष्टि से शोध–अध्ययन के लिए अपरिहार्य सिद्ध हुआ।

शिवानी और उषाप्रियंवदा जैसी लोकप्रिय, संवेदनशील, संस्कृति के प्रति अगाध निष्ठा रखने वाली आधुनिक महिला कहानीकारों के तुलनात्मक अध्ययन की दिशा में अद्यावधि कोई शोधस्तर का कार्य नहीं हो सका था, इस अभाव की पूर्ति हेतु प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध की प्रेरणा मुझे डॉ0 विश्वम्भरदयाल अवस्थी, डी. लिट, अध्यक्ष हिन्दी विभाग अतर्रा महाविद्यालय, अतर्रा एवं डॉ0 वेद प्रकाश द्विवेदी संयोजक हिन्दी पाठ्यक्रम एवं शोधसमिति, बुन्देलखंड विश्वविद्यालय झाँसी के द्वारा प्राप्त हुई।

प्रस्तुत शोध प्रबंध का लक्ष्य शिवानी और उषा प्रियंवदा के कथा–साहित्य की तुलनात्मक अध्ययन सौन्दर्य बोध की दृष्टि से करना ही अभीष्ट है, ताकि सौन्दर्यबोध के विविध प्रयत्नों का तुलनात्मक मूल्यांकन हो सके तथा हिन्दी भाषा–भाषी इस शोध प्रबंध के माध्यम से दोनों अतिशय विशिष्ट महिला कथाकारों की सौन्दर्यपरक कथा सृष्टि के मार्मिक रहस्यों से परिचित हो सके।

इसी लक्ष्य को दृष्टि में रखते हुए प्रस्तुत शोध–विषय को 6 अध्यायों में विभाजित करके व्यवस्थित एवं प्रबंधित किया गया है।

सर्वप्रथम प्रस्तुत अध्ययन के महत्व, पूर्वकार्यों के विवरण, हिन्दी कथा–साहित्य के विकास से परिचित कराया गया है।

अध्याय एक **"सौन्दर्य संवेदन"** है, जिसको सौन्दर्य का स्वरूप, सौन्दर्य के तत्व, सौन्दर्य एवं अन्य शास्त्र, भारतीय काव्य-सम्प्रदाय एवं सौन्दर्य, पाश्चात्य काव्य शास्त्र एवं सौन्दर्य, मनोविश्लेषण एवं सौन्दर्य दर्शन, नैतिकता एवं सौन्दर्य तथा सौन्दर्य एवं कुरूपता, साहित्य और सौन्दर्य रसानुभूति के सन्दर्भ में आदि उपखण्डों में विभाजित किया गया है। इस अध्याय में सौन्दर्य-बोध को उजागर करने का प्रयत्न किया गया है तथा सौन्दर्य दृष्टि के विस्तार एवं बहुआयामी रूवरूप का सघन संक्षिप्त विवेचन किया गया है।

अध्याय दो शिवानी एवं ऊषा प्रियंवदा के कथा साहित्य का सामान्य परिचय है। जिसके अन्तर्गत दोनों कथाकारों की कहानियों, उपन्यासों एवं कृतियों का परिचय दिया गया है। कहानी ओर उपन्यास के क्षेत्र में इन दोनों लेखिकाओं के प्रमुख योगदान का उल्लेख किया गया है।

अध्याय तीन - "अलोच्य कथाकारों के साहित्य में मानवसोन्दर्य" है, जिसके अन्तर्गत पुरुष सौन्दर्य एवं स्त्री सौन्दर्य की पृथक्-पृथक विवेचना की गई है। साथ ही दोनों कथाकारों की तुलनात्मक समीक्षा भी की गई है। पुरुष ओर नारी सौन्दर्य के तुलनात्म्क अध्ययन में दृष्टिकोणों के परिवर्तन के कारणों का भी विश्लेषण किया गया है।

अध्याय चार - "शिवानी एवं ऊषा प्रियंवदा के कथा साहित्य में मानवेतर सोन्दर्य" के नाम से अभिहित है। इसे दो उपखण्डों में विभाजित किया गया है, प्राकृतिक सोन्दर्य तथा वस्तु सौन्दर्य। मानवेतर सौन्दर्य का तुलनात्मक अध्ययन भी दिया गया हे।

अध्याय पाँच - "शिवानी एवं ऊषा प्रियंवदा के कथा साहित्य में भाव सोन्दर्य" के नाम से अभिहित है, इसे पाँच उपखण्डों में विभक्त किया गया है, प्रेम, वत्सलता, करुणा, क्रोध एवं घ्रणा, कर्म सोन्दर्य ये पाँच उपशीर्षक हैं, अंत में भाव सोन्दर्य का विश्लेषण दिया गया है।

अध्याय 6 – "शिवानी एवं उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य का अभिव्यंजनात्मक सौन्दर्य" है। इसे 4 उपखण्डों में विभक्त किया गया है, शिवानी का भाषा सौन्दर्य, उषा प्रियंवदा का शब्द संसार, शैली सौन्दर्य तथा तुलनात्मक विश्लेषण।

उपसंहार के अन्तर्गत पार्थिव – अपार्थिव सौन्दर्य, शीलगत सौन्दर्य, सौन्दर्य और प्रेम की अन्योन्याश्रितता, सौन्दर्य सम्बन्धी विशिष्ट शब्दावली तथा वाक्यावली और विवेच्य कथाकारों के सौन्दर्यबोध का लोकरूचि और परवर्ती प्रयास विश्लेषित किया गया है।

प्रस्तुत शोध प्रबंध के प्रणयन में सर्वप्रथम में शिवानी और उषा प्रियंवदा के कथा–साहित्य पर चर्चा करने वाले, विद्वानों एवं समीक्षकों के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ, जिनमें डॉ0 पारुकांत देसाई (बड़ोदा) कु0 शशिबाला पंजाबी (अहमदाबाद), डॉ0 मृत्युंजय उपाध्याय (धनबाद), डॉ0 विश्वंभर नाथ उपाध्याय (जयपुर), श्रीमती डॉ0 सत्यवती राहगीर (बुन्देलखंड विश्वविद्यालय, झाँसी), आदि प्रमुख हैं।

मैं पूज्यपाद गुरुवर डॉ0 विश्वंभर दयाल अवस्थी, डी.लिट., डॉ0 वेद प्रकाश द्विवेदी, डॉ0 महावीर प्रसाद सिंह, डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित ललित, डी.लिट. के प्रति श्रद्धा सम्पूरित हृदय से नतमस्तक हूँ, जिनके पुत्रीवत वात्सल्य के कारण वह दुरूह कार्य सुगम बन पड़ा।

मैं अपने शोध निदेशक डॉ0 गिरवाण दत्त मिश्र के प्रति किन शब्दों में आभार व्यक्त करूँ, जिसका मार्गदर्शन मेरे शोध प्रबन्ध की रचना में प्रत्येक पद–पद पर मिलता रहा।

हीरालाल यादव पुस्तकालयाध्यक्ष अतर्रा महाविद्यालय के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ जिन्होंने प्रचुर मात्रा में शोध की सामग्री एवं सहायक संदर्भ ग्रंथों को उपलब्ध कराया।

इसी प्रकार, अपनी पूज्य माता श्रीमती सुशीला देवी जिनके अपरिमित वात्सल्य एवं सहयोग के कारण ही यात्रायें संभव हो सकी, जो मेरे शोध कार्य में छाया की तरह अपना वरदहस्त प्रदान करती रहीं, उनके प्रति आभार व्यक्त करने में वाणी छोटी पड़ जाती है। मेरे पूज्य पिताजी पं0 लोकनाथ द्विवेदी (भरुआ सुमेरपुर) का असीम योगदान मुझे सहज रूप में मिला, जिसके कारण मैं अपना समय शोध कार्य में निश्चिंत होकर लगा सकी।

शोध कार्य में श्री आर.बी. तिवारी, निवासी 8/105, राजनगर गाजियाबाद तथा श्री ओ.पी. तिवारी, एयरफोर्स, अम्बाला केंट एवं छोटी बहन विजय लक्ष्मी द्विवेदी एम.एस.सी. वनस्पति विज्ञान, व छोटे भाई श्री देवेन्द्र कुमार द्विवेदी बी.एस.सी. ने भी अपना पूरा सहयोग प्रदान किया, कथाकारों से सम्पर्क करने में मेरी यथासंभव सहायता की।

श्री राजेश कुमार त्रिपाठी, तथा अपनी बहन श्रीमती रानी त्रिपाठी के सहयोग को विस्मरण करना असंभव है। उन्होंने बार–बार प्रोत्साहन देकर, मेरे हर जटिल कार्य को सुगम बनाया, उनके कारण मुझे महाविद्यालय तथा विश्वविद्यालय स्तर का सहयोग संभव हो सका। मैं उनके प्रति हृदय से कृतज्ञ हूँ।

इस शोधयात्रा में अनेक ऐसे व्यक्ति हैं, संस्थाये हैं, पुस्तकालय हैं तथा शिवानी और उषा प्रियंवदा के प्रिय पाठकगण हैं, जिनका नामोल्लेख करना संभव नहीं है। मैं उन समस्त सहयोगियों के प्रति अपना विनम्र आभार व्यक्त करती हूँ।

विश्वविद्यालय के अधिकारियों एवं शोध प्रबंध के मूल्यांकन करने वाले विद्वान परीक्षकों के श्री चरणों में अपना विनम्र आभार व्यक्त करते हुए उनसे अनुरोध

करती हूँ कि वे अपना आशिर्वाद देकर मेरे विद्या एवं शोध श्रम को कृतार्थ करें।

और अन्त में मैं आकृति **कामर्शियल प्वाइन्ट** के संचालक **श्री विमल तिवारी एवं श्रीमती सुनीता तिवारी** को धन्यवाद देती हूँ, जिन्होंने बड़ी ही मेहनत व लगन से शोध प्रबन्ध को टंकित, फोटोकापी एवं बाइन्ड कराकर मुझे सहयोग प्रदान किया।

शोध कर्त्री

कु. सुमित्रा देवी

(कु0 सुमित्रा देवी)

एम0ए0 (हिन्दी)

प्रस्तुत अध्ययन का महत्व –

सौन्दर्य साहित्य और जीवन का नित्य एवं जीवंत तत्व है। सौन्दर्य बोध की दृष्टि से कलाकृतियों के मूल्यांकन का महत्व अक्षुण्य है। प्रस्तुत शोध प्रबंध "सौन्दर्य बोध की दृष्टि से शिवानी एवं ऊषा प्रियंवदा के कथा साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन" इसलिए आवश्यक एवं महत्वपूर्ण है क्योंकि दोनों कथाकारों ने सौन्दर्य भावना के क्षेत्र में संवेदनशील साहित्य साध्य की भाँति ऐन्द्रिय बोध, कलात्मकता, एवं मनोमय आनन्द पर बल दिया है।

सौन्दर्य बोध के अन्तर्गत, मानव सौन्दर्य, मानवेतर सौन्दर्य, भाव सौन्दर्य और अभिव्यक्ति सौन्दर्य को लेने के कारण सौन्दर्यानुभूति का क्षेत्र व्यापक हो गया है। सौन्दर्यबोध के बिना रसानुभूति, मनोविज्ञान एवं दार्शनिक विवेचन अपूर्ण ही रहते हैं। कलाकार की दृष्टि सौन्दर्य के कितने व्यापक रूप में प्रतिफलित हुयी है। रचनात्मक संसार में सौन्दर्यबोध कितने रूपों में प्रसरित हुआ है, इन सबका अध्ययन प्रस्तुत शोध प्रबंध में हुआ है।

प्रस्तुत अध्ययन के माध्यम से हिन्दी के पाठक अपने लोकप्रिय कथाकारों की सौन्दर्य दृष्टि से परिचित हो सकेंगे। सौन्दर्य बोध की दृष्टि से रचनाकारों का अध्ययन प्रायः नहीं होता। सौन्दर्यशास्त्रीय अध्ययन की ओर हिन्दी साहित्यकारों का ध्यान आकृष्ट करने वालों में डॉ0 नगेन्द्र, आचार्य पं0 हजारी प्रसाद द्विवेदी, आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी, डॉ0 वासुदेव शरण अग्रवाल, महादेवी वर्मा, आचार्य नलिन विलोचन शर्मा प्रभृति आचार्यों का विशिष्ट योगदान है। डॉ0 वासुदेवशरण अग्रवाल ने इस ओर संकेत करते हुए लिखा है, "कला की आँख से साहित्य और साहित्य की आँख से कला को देखना हमारे वर्तमान सांस्कृतिक युग की एक महती आवश्यकता है।

सौन्दर्य बोध के अध्ययन से हम रचना के समग्र और आन्तरिक महत्व से परिचित हो सकते हैं। सौन्दर्य का क्षेत्र व्यापक है। अतः साहित्य और रचना में ऐसी व्यापकता का अध्ययन आवश्यक है।

पूर्व कार्यों का विवरण

महिला कहानीकारों पर स्वतंत्र रूप से डॉ0 उमेश माथुर, डॉ0 उर्मिला गुप्त, डॉ0 सरिता सूद एवं डॉ0 अचला शर्मा के शोध ग्रन्थ मिलते हैं। किन्तु लोकप्रिय कहानी लेखिका शिवानी और उषा प्रियंवदा पर स्वतंत्र शोधकार्य नहीं हुए और न ही इन दोनों कथाकारों का तुलनात्मक अनुशीलन ही हुआ। दोनों कहानी लेखिकाओं ने सौन्दर्य के मानसिक, शारीरिक सभी रूपों का वर्णन किया है। सौन्दर्य संवेदन की दृष्टि से दोनों विशिष्ट हैं। हिन्दी कथाकारों की भीड़ में दोनों अपनी पहचान बनाए हुए हैं, किन्तु उन पर शोधकार्य का न होना, चिंताजनक है।

कहानी हो या उपन्यास, आज की सर्वाधिक लोकप्रिय विद्या है। इन्हीं विद्याओं को शिवानी और उषा प्रियंवदा ने चुनकर साहित्य को गोरव प्रदान किया। दोनों ने जीवन में सोन्दर्य को विशेष महत्व दिया है। दोनों ने सोन्दर्य को जीवन और लेखन में उतारकर अभिव्यक्तियाँ की हैं। दोनों लोक जीवन में कथा क्षेत्र के लिए सम्मानित एवं पुरस्कृत हुए, दोनों लोकप्रियता की ऊँचाइयों को छू सकने में सफलता को वरण किया, किन्तु उन पर कोई भी तुलनात्मक शोधकार्य न हो पाना दुर्भाग्य का विषय रहा। इस दृष्टि से भी शिवानी और उषा प्रियंवदा के कथासाहित्य का सोन्दर्य बोध की दृष्टि से अनुशीलन अपरिहार्य प्रतीत हुआ।

हिन्दी कथा साहित्य का विकास

"**कथा**" शब्द की व्युत्पत्ति "**कथ**" धातु से सिद्ध होती है, जिसका अर्थ कथन करना अथवा कहना है। यह साहित्य का प्राचीन रूप है। कथा का क्षेत्र व्यापक है और समय के अनुसार उसमें परिवर्तन भी होते रहे हैं। 1888 ई0 के आसपास लिखी गई है। सैयद इंशा अल्ला खाँ की "**रानी केतकी कहानी**" को हिन्दी कहानी का पूर्वाभ्यास माना जा सकता है। कतिपय विद्वानों ने पं0 गौरी दत्त कृत "**देवरानी जेठानी कहानी**"(1870 ई0) को हिन्दी की प्रथम कहानी माना है। वस्तुतः वे दोनों रचनाएँ लघु उपन्यास रचना के अधिक निकट प्रतीत होती है।[1] वस्तुतः सन् 1900 ई0 से ही हिन्दी कथा का प्रारम्भ होता है। "**सरस्वती**" पत्रिका में प्रकाशित किशोरी लाल गोस्वामी की "**इन्दूमती**" कहानी को डॉ0 श्रीकृष्ण लाल ने हिन्दी की आधुनिक कहानी कहा है।[2] हिन्दी कथा की विकास यात्रा को पाँच भागों में विभाजित करना होगा –

प्रथम सोपान (सन् 1900 से सन् 1910 तक)

द्वितीय सोपान (सन् 1911 से सन् 1919 तक)

तृतीय सोपान (सन् 1920 से सन् 1935 तक)

चतुर्थ सोपान (सन् 1936 से सन् 1950 तक)

पंचम सोपान (सन् 1950 से अब तक)

प्रथम सोपान के अन्तर्गत सरस्वती पत्रिका (1900) के माध्यम से प्रकाशित कहानियों का है। सरस्वती के अतिरिक्त "इन्दु" नामक हिन्दी कहानी पत्रिका भी उल्लेखनीय हैं।

---

1. बीसवीं सती की हिन्दी कहानी का समाज – मनोवैज्ञानिक अध्ययन, डॉ0 महेश दिवाकर, पृ0 – 22

2. आधुनिक हिन्दी साहित्य, डॉ0 श्रीकृष्ण लाल, पृ0 – 32–33

प्रथम सोपान में जिन कथाकारों के नाम उल्लेखनीय है। उनमें निम्नलिखित प्रमुख हैं –

1. किशोरीलाल गोस्वामी कृत इन्दुमती (1900)
2. माधव प्रसाद मिश्र कृत "मन की चंचलता" (1901)
3. किशोरी लाल गोस्वामी कृत "गुलबदन" (1902)
4. भगवानदास कृत "प्लेग की चुड़ैल" (1902)
5. गोपालराम गहमरी कृत "माल गोदाम की चोटी" (1903)
6. गिरजादत्त बाजपेयी कृत "पंडित और पंडितानी" (1903)
7. रामचन्द्र शुक्ल कृत "ग्यारह वर्ष का समय" (1903)
8. वंग महिला "दुलाईवाली" (1907)
9. वृन्दावन लाल वर्मा कृत "राखी बंधभाई" (1909)

सन् 1900 से 1910 तक हिन्दी कहानी अपने आरम्भिक रूप में विद्यमान रही। इन कहानियों का स्वर प्रेम एवं लोकरंजन रहा। इस काल में पौराणिक एवं एतिहासिक कहानियों की भी रचना हुई, जासूसी एवं वीरतामूलक कहानियाँ भी लिखी गईं।

द्वितीय सोपान हिन्दी कथा के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण सोपान सिद्ध हुआ। जयशंकर प्रसाद को "इन्दू" मासिक में प्रकाशित 1911 ई0 की ग्राम कहानी। सन् 1911 ई0 में ही जे0पी0 श्रीवास्तव की "पिकनिक" और चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की "सुखमय जीवन" कहानो प्रकाशित हुयी। कहानी के द्वितीय सोपान के यही प्रमुख कथाकार थे। कहानी विकासयात्रा के द्वितीय सोपान के अन्तिम चरण में हिन्दी कथा क्षेत्र में मुंशी प्रेमचंद का पदार्पण हुआ। उनके प्रगतिशील दृष्टिकोण के कारण कथा क्षेत्र में एक अपूर्व परिवर्तन आया। डॉ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी के

शब्दों में, "यह कहानी मनुष्य जीवन की यथार्थ जटिलताओं के भीतर से निकलकर उसकी यथार्थ सीमाओं को स्पष्ट करती है और सत्य को स्वीकार करने की उस महिमामयी क्षमता का परिचय देती है, जो अनेक व्यवधानों के कारण सत्य ही नहीं दिखाई देती।[1] वस्तुतः प्रेमचन्द ने कथा के क्षेत्र में विभिन्न टैक्निक के बीच अपनी नवीन टैक्निक अपनाई। उन्होंने ही प्रथम बार निम्न वर्ग के आदमी को अपनी कहानियों का विषय बनाया। इस सोपान के प्रतिनिधि कथाकारों के रूप में जयशंकर प्रसाद, विश्वम्भर शर्मा, कौशिक, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, आचार्य चतुरसेन शास्त्री, पं0 ज्वालाप्रसाद शर्मा, राधिकारमण सिंह आदि थे।[2]

तृतीय सोपान – इस सोपान के प्रतिनिधि कथाकार थे जयशंकर प्रसाद और प्रेमचंद ही थे, जैसा कि डॉ0 जयकिशन प्रसाद खण्डेलवाल ने लिखा है –

"प्रेमचन्द भारतीय जीवन की सामुहिक और समसामयिक परिस्थितियों के चित्रण में अन्यतम हैं। प्रसाद की कहानियाँ एक श्रेष्ठ रोमांटिक कवि की कहानियाँ हैं। उनकी कहानियों का संसार भावात्मक है। वस्तुजगत की क्रूरताओं, विषमताओं, भौतिक घात–प्रतिघातों की सच्चाइयों की तस्वीर प्रस्तुत करना प्रसाद का उद्‌देश्य नहीं है। उनका भाव जगत मूलतः प्रेम का जगत है। इसमें टीस है, साथ ही आदर्श की कौंधमी।[3]

इस सोपान के लेखकों में सुदर्शन, पदुमलाल पन्नालाल बख्शी, शिवपूजन सहाय, रायकृष्णदास चण्डी प्रसाद हृदयेश , सुमित्रानन्दन पंत, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, महादेवी वर्मा, भगवती चरण वर्मा, भगवती प्रसाद बाजपेयी, पण्डित वेचन शर्मा "उग्र", उपेन्द्रनाथ अश्क, जेनेन्द्र आदि प्रमुख हैं। कहानी की कथावस्तु में कलात्मकता और मनोविज्ञान का प्रभाव परिलक्षित हुआ।

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास, पं0 रामचन्द्र शुक्ल, पृ0 – 463
2. बीसवीं शती की हिन्दी कहानी का समाज – मनोवैज्ञानिक अध्ययन, डॉ0 मनोहर दिवाकर, पृ0 – 26
3. हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ, डॉ0 जयकिशन खण्डेवाल, पृ0 – 737

संवादों में पूर्व की तुलना में स्वाभाविकता एवं नाटकीयता का समावेश हुआ। शैली में भी वैविध्य परिलक्षित हुआ।

चतुर्थ सोपान – कथा के विकास में जिन प्रमुख दिशाओं की ओर रचनाकारों ने अपनी दृष्टि दोड़ायी उनमें मनोविश्लेषण, वातावरण चिन्तन तथा चरित्रों के मानसिक अन्तर्द्वन्द्व प्रमुख थे। मनोविश्लेषण को प्रमुखता देने वाले कथाकारों में जैनेन्द्र कुमार अज्ञेय और इलाचन्द्र जोशी। अज्ञेय जी ने मनोविश्लेषणपरक कहानियों की रचना की। यशपाल ने मनोवैज्ञानिक कहानियों के साथ मध्यमवर्गीय जीवन का स्वभाविक चित्रण किया। यशपाल की भाँति कुछ प्रगतिशील कहानीकार उन्पयास के क्षेत्र में भी आए, जिनमें राहुल अश्क, डॉ0 रांगेय राघव, चन्द्रकिरण सोनेरेक्शा, भगवतशरण उपाध्याय, विष्णु प्रभाकर, कृष्णचन्द्र, नरेन्द्र शर्मा, अमृतलाल नागर, प्रभाकर मार्चेन्ट आदि प्रमुख हैं।

इस सोपान के कहानी लेखकों में भाषा, शिल्प, ओर कथ्य सभी क्षेत्रों में नए–नए प्रयोग किये।

बीसवीं शताब्दी तक हिन्दी कथा के विकास में युग चेतना का भी प्रस्फुटन हुआ। राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक परिवर्तनों के प्रभाव के कारण हिन्दी कथा में एक विशाल परिवर्तन हुआ। बीसवीं शताब्दी उत्तरार्द्ध की हिन्दी कथा – विकास को तीन भागों में विभाजित किया गया हे –

प्रथम सोपान (सन् 1956 से सन् 1960 तक)

द्वितीय सोपान (सन् 1961 से सन् 1975 तक)

तृतीय सोपान (सन् 1975 से आज तक)

प्रथम सोपान –

स्वतंत्रता–प्राप्ति के पश्चात् हिन्दी कथा साहित्य ने एक नया

आयाम ग्रहण किया। कहानियाँ, विषयवस्तु, चेतना शिल्प आदि की दृष्टि से नवीन भंगिमाओं की ओर अग्रसर हुयीं। पाश्चात्य साहित्य के प्रभाव के कारण राष्ट्रीयता के स्थान पर अन्तर्राष्ट्रीयता ने स्थान ग्रहण किया। गाँधीवाद के स्थान पर साम्यवाद का प्रभाव परिलक्षित होने लगा। भारतीय जीवनादर्श के स्थान पर पाश्चात्य का रंग परिलक्षित हुआ। सामाजिक पारिवारिक, वैयक्तिक विषमताओं, विसंगतियों और विकृतियों को इस सोपान की कहानियों में स्थान मिला। इन्हें "नई कहानी" के नाम से जाना गया।[1] डॉ0 नामवर सिंह ने इलाहाबाद से प्रकाशित होने वाली "कहानी पत्रिका" में सन् 1952 के आसपास नई कहानी को परिभाषित किया। निर्मल वर्मा की "परिन्दे" नामक कहानी को नई कहानी की प्रथम कहानी कहा। समकालीनों में निर्मलवर्मा पहले कहानीकार हैं जिन्होंने पुरानी कहानियों के दायरे को तोड़ा है – बल्कि छोड़ा है, और आज के मनुष्य की गहन आन्तरिक समस्या को उठाया है।[2] इस सोपान के प्रसिद्ध कहानीकारों में निर्मल वर्मा, धर्मवीर भारती, मोहन राकेश, कमलेश्वर, राजेन्द्र यादव, अमरकान्त, भीष्म साहनी, मन्नू भण्डारी, उषा प्रियंवदा, कृष्णा सोवती, प्रभृति नाम विशेष उल्लेखनीय है। इनके कहानियाँ आधुनिक जीवन के साथ–साथ नारी की विविध स्थितियों, मान्यताओं, भावनाओं, इच्छाओं, संवेदनाओं विकृतियों एवं विषमताओं के यथार्थ चित्र भी बड़ी सजीवता एवं तत्परता के साथ अंकित हुए हैं।

द्वितीय सोपान –

सन् 1960 के बाद की हिन्दी कहानियों में

---

1. हिन्दी साहित्यः युग और प्रवृत्तियाँ, डॉ0 शिवकुमार शर्मा, पृ0 – 702
2. कहानी, नई कहानी, डॉ0 नामवर सिंह, पृ0 –67

एक बदलाव आया। सन् 60 के बाद की कथारचना की एक ऐसी रचनात्मक चेतना सामने आयी जो अपनी पूर्ववर्ती रचनाओं से कई अर्थों में भिन्न थी। यह भिन्नता जीवनदर्शन, रचनाबोध प्रतिबद्ध जीवनमानों के अन्तर्गत आयी। इस सोपान की कहानियों को "समकालीन कहानी" कहा गया। "समकालीन" का अर्थ "समसामयिक" से है। गंगाप्रसाद विमल के शब्दों में "पूर्ववर्ती पीढ़ी से अलगाव का मोटा बिन्दु "समकालीन जीवन दृष्टि" का बिन्दु है।"[1]

सातवें दशक की कहानी संवेदना और अभिव्यक्ति में पहले पूरी तरह भिन्न थी। राजेन्द्र यादव के शब्दों में "साठोत्तरी कथाकारों ने सचमुच कहानी को नया अर्थ दिया।[2]

इन कहानियों में मध्य और निम्न वर्गों की कुण्ठा, निराशा, अकुलोहट, पीड़ा, अभावग्रस्त, विवशता आदि का चित्रण अधिक गहनता और मार्मिकता के साथ हुआ। इस सोपान के प्रसिद्ध कहानीकारों में निर्मलवर्मा, धर्मवीर भारती, मोहन राकेश, कमलेश्वर, राजेन्द्रयादव, अमरकान्त, भीष्मसाहनी, मन्नू भण्डारी, ऊषा प्रियंवदा, कृष्णा सोबती प्रभृति नाम उल्लेखनीय है। अन्य कहानीकारों में हरिशंकर परसाई, रमेश बक्षी, केशव प्रसाद मिश्र, शेखर जोशी, मार्कण्डेय, रामकुमार, नरेश मेहता, रवीन्द्र कालिया, कृष्ण बलदेव वेद, अनीता , ज्ञानरंजन रेणु, से0रा0 यात्री, शानी, राजेन्द्र अवस्थी, नरेन्द्र कोहली आदि अनेक कहानीकार हैं। हिन्दी में चीनी, रूसी, फ्रेंच इत्यादि से कहानियों का अनुवाद भी किया गया। इन अनुवादकों में शिवदान सिंह चौहान, सन्तोष गार्गी, कान्तिचन्द्र

---

1. समकालीन कहानी: दिशा और दृष्टि, डॉ0 घनंजय, पृ0 – 165
2. समकालीन हिन्दी कहानी: दशा और दृष्टि में प्रकाशित राजेन्द्र यादव का लेख, "प्रयोग की प्रक्रिया" सं0 राजेन्द्र यादव पृ0–7

सोनेरेक्शा, राजेन्द्र यादव आदि के नाम उल्लेखनीय हे।

द्वितीय सोपान –

सन् 1960 के बाद हिन्दी कहानियों में एक बदलाव की स्थिति उत्पन्न हुयी। एक ऐसी कथा रचना की चेतना सामने आयी, जो पूर्ववर्ती रचना–पीढ़ी से कई अर्थों में भिन्न थी।

सचेतन कहानी –

सन् 60 के पश्चात् सचेतन कहानी अस्तित्व में आई। डॉ0 महीप सिंह और डॉ0 आनन्द प्रकाश जेन सचेतन कहानी के आधार स्तम्भ बने। डॉ0 महीप सिंह ने 20 सचेतन कहानियों का एक सचेतन कहानी विशेषांक नवम्बर, 1964 में निकाला। डॉ0 महीप सिंह ने सचेतन को एक दृष्टि माना है।[1]

उपेन्द्रनाथ अश्क ने "सचेतन" कहानी के समर्थन में अपने विचार व्यक्त किये –– "अधिकांश सचेतन कहानीकारों की दृष्टि सचेतन, स्वस्थ और समाजपरक है और शिल्प अधिकांश का सीधा–सरल और कहानी का आकार छोटा है।[2]

डॉ0 महीप सिंह ने सचेतन कहानी को सक्रिय भाव क्रोध, तथा जीवन की स्वीकृति की कहानी कहा है।[3] डॉ0 राजीव सक्सेना ने इसे मनुष्य की चेतना एवं सक्रियता की कहानी कहा है।[4]

---

1. हिन्दी कहानी का विकास, सं0 डॉ0 देवेश ठाकुर पृ0–116

2. तदुपरोक्त, पृ0 – 15

3. सचेतन कहानी विशेषांक (भूमिका), नवम्बर, 1964, सं0 डॉ0 महीप सिंह

4. सचेतन कहानी: साहित्य का नया परिप्रेक्ष्य, डॉ0 राजीव सक्सेना।

तृतीय सोपान –

साठोत्तरी, समकालीन, सामयिक या सचेतन अथवा अक्श की कहानी आदि नाम सन् 60 के बाद की हिन्दी कहानी को दिए गए। 1974 के "सारिका" के अंक में कमलेश्वर ने "समानान्तर" कहानी के नाम से एक नया नारा दिया। उन्होंने "समानान्तर" कहानी के नाम से "आम आदमी" के आस–पास की कहानियाँ प्रस्तुत की। ये कहानियाँ सामान्य जन की अपराजेय परम्परा की कहानियाँ बनकर आयीं। इन कहानीकारों ने राजेन्द्रयादव, निर्मल वर्मा, ऊषा प्रियंवदा, मन्नू भण्डारी, भीष्म साहनी, कमलेश्वर, अमर कान्त, ज्ञान रंजन, धर्मवीर भारती, श्री लाल शुक्ल, रवीन्द्र कालिया, कृष्णा सोबती, मृदुला गर्ग, नरेन्द्र कोहली, आदि प्रमुख कहानीकारों को स्थान मिला।

बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध की कहानियों को विभिन्न नारों अथवा आन्दोलनों के द्वारा सजाया गया। इन्हें अकहानी, लघु–कहानी व ग्रामकथा (आंचलिक कथा) कहा गया।

हिन्दी कहानी अपने विकास की महत्वपूर्ण यात्रा में निरंतर गतिशील है। आज के कथा साहित्य में नए भाव बोध, नई शैली, नए शिल्प, नए कथ्य तथा नई भाषा की सर्जना की है। आज कथा साहित्य की समृद्धि को देखकर यह आशा दृष्टिगोचर होने लगी है कि भारतीय कहानी–साहित्य विश्व कहानी साहित्य की कोटि में अपने उज्जवल भविष्य को सुरक्षित करती हुयी निरंतर परिष्कृत एवं परिवर्द्धित होती रहेगी।

कथा साहित्य संस्कृत, पालि, प्राकृत तथा अपभ्रंश साहित्य से थाती के रूप में हिन्दी को मिले और आधुनिक कथा–रूप उपन्यास तथा कहानी – पश्चिम या अंग्रेजी साहित्य की देन है। कथा शब्द का आशय है, "जो किसी से कहा जाए"। कहना एक कला है। डॉ0 शशि भूषण सिंह के शब्दों में, "कथा वह रोचक मानव–सापेक्ष गतिविधि है, जो काल के आयाम में विकसित होकर किसी परिणाम पर पहुँचती है।[1]

हमारे देश में कथा पद्धति भारतीय चिंतन से होकर अवतरित हुयी। प्राचीन काल से ही नियायक पर आस्था होने के कारण, जीवन सुखी तथा भविष्यत् के प्रति आस्थावान था। भारतीय कथाओं ने जीवन और जगत के रहस्यों को व्यक्त करने की एक विद्या कथा–साहित्य भी रहा।

कथा – साहित्य मनोरंजक परक भी था, जैसे वृहत्कथा, सिंहासन द्वात्रिंशिंका, वैताल पंच दिशतिकका

काव्यात्मक – वासवदत्ता, दशकुमार चरित, हर्षचरित, कादम्बरी।

उपदेशात्मक – पंचतन्त्र, हितोपदेश

प्रारम्भ में कथा साहित्य जीवन के लिए तो था, किन्तु वह जीवन में से होकर नहीं, किसी कल्पित मनुष्य या कल्पित प्राणी के माध्यम से व्यक्त होता था।

---

1. हिन्दी उपन्यास, बदलते सन्दर्भ, डॉ0 शशि भूषण सिंह, पृ0 – 1

भारतीय जीवन दृष्टि से ओत-प्रोत कथा परम्परा मर्यादाओं से भावदर्शी पशिचम की संघर्षशील चेतना ने कुछ प्रश्नचिन्ह खड़े किये। जीवन की विवेचना के लिए कथा ने उपन्यास का रूप ले लिया। उपन्यास पर कथा साहित्य का ही प्रभाव परिलक्षित हुआ। उपन्यास प्रारंभिक रूप में कुतूहल सृष्टि, भावुकता और नीतिपरक ही रहे। मुंशी प्रेमचन्द ने उपन्यास को एक नया ढाँचा प्रदान किया। राष्ट्रीय नवजागरण ने वैज्ञानिक एवं जनतांत्रिक चेतना उत्पन्न की। उपन्यास का बाह्य जीवन और आम आदमी से संयुक्त हुआ। उपन्यास में अंकित जीवन यथार्थ जीवन का प्रतिबिम्बन करने लगा। प्रेमचन्द के शब्दों में उपन्यास जीवन का चरित्र हो गया। भावी उपन्यास जीवन-चरित्र होगा, चाहे किसी बड़े आदमी का या छोटे आदमी का।[1] उपन्यास जीवन के यथार्थ को चेतन स्तर पर व्यक्त करने की ओर अग्रसर हुआ। अमृतनागर के उपन्यास "अमृत और विष" (1966 ई0) का नायक अरविंद शंकर अपने चिंतन द्वारा वर्तमान से अतीत, अतीत से वर्तमान और फिर वर्तमान से भविष्य की ओर अग्रसर होता है। आज स्वातंत्र्योत्तर जगत में उपन्यास मनोवैज्ञानिक, ऐतिहासिक एवं आधुनिक संदर्भों को लेकर लिखे जाते हैं।

मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में शेखर: एक जीवनी, नदी के द्वीप, अपने- अपने अजनबी, सुनीता, त्याग पत्र, कल्याणी, संयासी, पर्दे की रानी, प्रेत और छाया, ऋतुचक्र, पथ की खोज आदि प्रमुख उपन्यास हैं। इन उपन्यासों का मुख्य विषय यौन-मनोविज्ञान से सम्बन्धित है। जीवन की असामान्य दशाएँ इन मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में चित्रित हुयी हैं। जैसे कथा (कहानी) में 'मनोवैज्ञानिक प्रयोग हुए हैं, उसी प्रकार उपन्यास के क्षेत्र में भी।

ऐतिहासिक उपन्यासों में ऐतिहासिक तथ्यों को संकलित करके, उनके अध्ययन, मनन के द्वारा देशकाल को रेखांकित किया गया। वर्मा जी के उपन्यासें में जहाँ एक ओर इतिहास तत्व की प्रधानता है। वहीं दूसरी ओर कल्पना का सुन्दर सामंजस्य है। चतुरसेन शास्त्री का उपन्यास "सोना और खून" ऐतिहासिक सन्दर्भों को लेकर अंग्रेजों के भारत में शासन करने को चित्रित करता है।

ऐतिहासिक उपन्यासों में आम्रपाली (वैशाली की नगर वधू) कुमुद (विराटा की पद्मिनी) मृगनयनी, टूटे काँटे (नूरबाई) माधव जी सिंधिया, दुर्गावती, दिव्या, अमिता, शतरंज के मोहरे, बाणभट्ट की आत्मकथा, चित्रलेखन आदि हिन्दी के प्रमुख ऐतिहासिक उपन्यास हैं। हिन्दी–उपन्यासों का भविष्य आशामय है।

कथा साहित्य के विकास क्रम को देखते हुए यह स्पष्ट है कि भारतीय कथा साहित्य विश्वकथा साहित्य की कोटि में निरंतर अग्रसर है। हिन्दी कथा साहित्य का भविष्य उज्जवल है, वह दिन दूर नहीं जब हिन्दी की महिला कथाकार शिवानी और उषा प्रियंवदा विश्व की प्रमुख कहानी लेखकों की पंक्ति में अग्रगण्य स्थान की अधिकारी होंगी।

प्रथम अध्याय

अध्याय - 1

सौन्दर्य संवेदन

भारतीय चिन्तकों के अनुसार सौन्दर्य का स्वरूप एवं परिभाषा –

सौन्दर्य जीवन की कला हैं। इसके निरूपण एवं विवेचन के लिए सर्वप्रथम वैदिक धरातल पर दृष्टिपात करना श्रेयस्कर होगा। साहित्य का पुरातन आधार वेदों को ही माना जाता है। वैदिक ऋचाओं के गायक मात्र विचारक ही नहीं थे, वरन् द्वन्दातीत एवं दृष्टा थे। उनका ज्ञान अर्जित किया हुआ नहीं वरन् उद्भाषित होता था। इसीलिए वे रागातीत एवं वीतराग कहे जाते थे। उन्होंने सौन्दर्य की एकांतिक परिभाषा के स्थान पर परमात्म एवं प्रकृति के संयोग–सानिध्य से मन्त्रों की अवतारणा की है। और इन मन्त्रों में उन्हें सौन्दर्य के दर्शन होते थे। इन्हीं काव्य सृष्टाओं के द्वारा उपमालंकार के माध्यम से काव्य सौन्दर्य का अभिधान निम्नांकित ढंग से प्रस्तुत किया गया है।

अहलहिं पर्वते शिश्रयाणं त्वष्टास्मै वज्रं स्वर्यं ततक्ष,
वाश्रा इव धेनवः स्वयन्दमाता अंजः समुद्रभव जग्भुरापः ।।"[1]

इसीप्रकार आकर्षक उषा की दिव्य–छवि, भव्यता, सुन्दरता और वाह्य सौन्दर्य से अभिभूत ऋषि ने, आन्तरिक सौन्दर्य का चित्रण भी किया है। उसे कुमारी, गृहिणी और मातृरूप के परिदर्शन में भी प्रस्तुत किया गया है। यथा

अभ्रातिव पुंस एति प्रतीची गर्तारुगिव सनयेधनानाम्,
जायेव पत्य उशती सुवासा उषा हस्तेव निरिणीते अप्सः ।।[2]

इसके अतिरिक्त उषा के माध्यम से ही अन्य विम्ब स्थापित करते हुए वे कहते हैं कि– हे प्रकाशवती उषा! तुम कमनीय कन्या के समान अत्यन्त आकर्षण मयी होकर अभीप्सित फल प्रदाता सूर्यदेव के समक्ष स्वयं को प्रस्तुत करती हो और स्मितवदना युवती के सदृश अपने वक्षस्थल को निवारण करती हो अर्थात् सौन्दर्य का दर्शन उपस्थित करती हो।[3] वैदिक युगीन सामाजिक जीवन के मध्य, सौन्दर्य की अभिवृद्धि करने वाले आभूषणों और वस्त्रों का विवरण भी ऋग्वेदादि में उपलब्ध मिलता है।

---

1. ऋग्वेद 1/32/2
2. तदुपरिवत् 7/86/5
3. कन्येव तन्वा शाश्शदाना एषि देवि देव नियक्षमाणम्।
   संस्मयमानां युवतिः पुरस्तादाविर्वक्षासिकृणुषं विभाती।। ऋग्वेद 1/123/10

इसी प्रकार ऋग्वेद काल में, मानसिक सौन्दर्य के साथ–साथ शारीरक सौन्दर्य का आकर्षण भी प्रचुरता के साथ विद्यमान था। अतः सौन्दर्य का अभिज्ञान कराने में अप्सः के अतिरिक्त दृश, श्री, वपुः, वल्गु, श्रियः, भद्र, मण्ड, चारू, प्रिय, रूप, कल्याण, शुभ, चित्र, स्वादु, रण्व, यक्ष, अद्भुत्, हिरण्यपेशस् एवं आनन्द आदि शब्दों का भी उपयोग किया गया हैं। इसीलिए यह कहा जा सकता हैं कि सौन्दर्य का बीज अन्तःकरण में अंकुरित होता हैं और यह मानसिक शक्तिओं के आधार पर पुष्पित एवं पल्लवित होता हैं। तत्पश्चात् समग्र शरीर को प्रभावित करता हैं। और सम्पूर्ण जीवन को आकर्षक रंगों के ताने–बाने से बुन डालता हैं। अतः यह कहना कि प्रत्येक कला–कलाकार की मनः स्थिति अथवा आत्मानुभूति का यह एक आन्तरिक अंश हैं। वाह्य उपादानों से उसका तात्विक नहीं अभिव्यक्ति सम्बंध हैं।

इसी प्रकार कुछ विचारकों की दृष्टि से सौन्दर्य पूर्वतः वस्तुनिष्ठ हैं।[1] इसलिए वह प्रत्यक्ष बोध से सम्बन्धित हैं। प्रत्यक्ष के लिए अन्तःकरण और इन्द्रिय दोनों का वस्तु के साथ सन्निकर्ष या संयोग होना चाहिए। इस प्रत्यक्ष की मात्रा इन्द्रियों की शराक्तता–अराक्तता और अच्छाई–बुराई पर निर्भर हैं। इन्द्रिय एक प्रकार की शक्ति हैं। जिसमें बाहरी वस्तु ज्ञेय अथवा दृश्य से प्रभावित होने तथा उनकों प्रभावित करने की क्षमता हैं। इन्द्रिय होने के कारण ही अर्थात् प्रत्यक्षीकरण के माध्यम की विशेषता के कारण ही हम व्यक्तियों में सौन्दर्य के प्रभाव से मुग्ध होने तथा सुन्दर को प्रभावित करने में स्तर अथवा मात्रा की भिन्नता पाते हैं। इसलिए व्यक्ति के सोन्दर्य बोध की भिन्नता भी इसका पुष्फल प्रमाण पेश करती हैं। कि सोन्दर्य को सम्बन्ध ऐन्द्रिय प्रत्यक्ष से हैं।

इसीप्रकार रामायण में नारी को असितेक्षणा, पद्मपलाशलोचना, करमोरू, नागनासोर, आयताक्षी, वदनाम्बुजा, वृषस्कन्धा, शशिप्रभानना, बिम्बोष्ठी आदि विशेषणों से विभूषित किया गया हैं। यद्यपि कथाप्रवाह और अनुभूति और अनुभूति तारल्य में, इस रूढ़िबद्धता के कारण कोई अभाव नहीं दिखाई देता।[2]

---

1. Alexander, Beauty and other forms of Valve, London, Pages, 179-180.
2. तदुन्नसं पाण्डुरदन्तम व्रणं। शुचिस्मितं पद्मपलाशलोचनम्। द्रक्ष्येकदायविचनं कदाम्वहं। प्रसन्नताराधिपति तुल्य दर्शनम्। । सुंदरकाण्ड 13/68

बाल्मीकि जी ने सीता के परिप्रेक्ष्य में "श्यामा" का ही प्रयोग किया है, जिसका अर्थ हें "योवनमध्यस्था।" [1]

पाश्चात्य शास्त्रकारों के अनुसार सोन्दर्य की परिभाषा और स्वरूप--

पाश्चात्य साहित्य में प्रवर्तित तथा प्रचलित शब्द Aesthetses वस्तुत: यूनानी Greek भाषा का हें। atnrikas जिसका साधारण अर्थ है इन्द्रियगत अनुभूतियाँ। वह ज्ञान जो इन्द्रियबोध से संयुक्त है। सर्वप्रथम वामगार्टन ने अपने शोध प्रबन्ध में इस शब्द का प्रयोग किया था, जिसका अर्थ था "विशेष विज्ञान।" सन् 1950 ई0 में "ऐस्थेटिका" नामक ग्रन्थ का प्रकाशन हुआ जिसके द्वारा वामगार्टन ने इसका अर्थ प्रस्तुत किया "इन्द्रियनुभूतिपरक विज्ञान" अथवा "अज्ञात का प्रच्छन्न विज्ञान" भावात्मक ज्ञान। तात्पर्य यह हें कि वह परिचयात्मक विज्ञान जो शब्दों के माध्यम से समुपस्थित न किया जा सके। आदि [2]

हीगेल के मतानुसार इस शब्दका अर्थ है– कला दर्शन। जबकि साधारण रूप से इस शब्द का अभिधार्य प्रकृति अथवा कला के सोन्दर्य से माना जाता हें। भारतीय पृष्ठभूमि पर इसे "ललित–कला–दर्शन" अथवा "कला विज्ञान" कहा जाता है।

डा0 ऊषा गंगाधर राव साजापुरकर के द्वारा की "ऐस्थेटिक्स" का भावार्थ सोन्दर्य स्वीकृत किया गया हें। ललित कला तथा उपयोगी कला कि परिवेश में सोन्दर्य तथा उदान्त दोनों रूपों को स्वीकार किया गया हें। [3]

संक्षेप में, वामगार्टन ने ऐस्थेटिक्स का प्रयोग ललित कलाओं के दर्शन के लिए किया। हीगेल ने इसे काव्य और प्रकृति के सोन्दर्य के परिप्रेक्ष्य में लिया। पीछे या कालान्तर में इसका अर्थ हो गया "ललित कलाओं के तत्वों का सेद्धांतिक निरूपण और उसके आधार पर कलाकृतियों का मूल्यांकन।" इसके विषय में यह भी कहा जाता है कि

1. श्यामोकमलपत्राक्षीमुपवासकृशानूनम्। सुन्दरकाण्ड 58/56
2. A science of sensitive cognition only...a science that was concerned both that absc ure knowledge as obscure.-Heger-Philosophy of Fine Ar Page-47.
3. हिन्दी रीति काव्य में सौन्दर्यबोध, पृ0 – 84–85

इन्द्रिय बोध से प्राप्त सौन्दर्य भावना के मनोमय आनन्द का विश्लेषण सौन्दर्य शास्त्र के द्वारा होता हैं। ऐसे बोधों के आधार पर चाक्षुष एवं श्रवण रहते हैं। अत एव इस शास्त्र को तीन भागों में विभाजित किया जाता हैं–

1. ऐन्द्रिय सौन्दर्य।
2. विधानगत सौन्दर्य।
3. अभिव्यक्तिगत सौन्दर्य।

वेसे सौन्दर्य के अन्य प्रकार भी सौन्दर्य शास्त्र में विवेचित हुए हैं परन्तु प्रधानता इन्हीं तीन की सर्वाधिक परिलक्षित होती हैं। धीरे–धीरे ऐस्थेटिक्स का विषय सौन्दर्यनुभूति भी बन गया। ओर चार्ल्स योरो ने उसको मनोविज्ञान की शाखा ही बना दिया। 1

परन्तु कालान्तर में पुनः हीगेल की व्याख्या आदरित हुई कि सौन्दर्य शास्त्र ललित कलाओं का दर्शन हैं। क्रोथे ने इसको "द साइन्स ऑफ एक्सप्रेशन" कहा तो लेंगर ने उसे ललित कलाओं के दार्शनिक विकल्पों ओर समस्याओं का सैद्धांतिक निरुपण बताया। 2

सौन्दर्य के तत्व–

सौन्दर्य में विम्बों का निर्माण करने तथा उनके स्वरुप का गठन करने हेतु निम्नलिखित पांच अवयव। तत्व माने जातें हैं जो इस प्रकार हैं–

1. अनुभूति 2. भाव 3. आवेग 4. ऐन्द्रियता 5. स्मृति।

1. अनुभूति–

जेसा कि सौन्दर्य के विषय में कहा जाता हैं कि सौन्दर्य प्रियता कवि का प्रधान गुण एवं स्वभाव हे। उसकी यही सौन्दर्य प्रियता समय–समय पर भिन्न–भिन्न सांसारिक

1.2. Aestheties is the science of beauty as expression in Art.
- Ramaswamy Sastri 'Indan Aesthetics(1928)'.

अनुभवों के द्वारा अभिव्यक्ति होती रहती है। कवि के अनुभव चाहे लौकिक हो या अलोकिक, पार्थिव हों अथवा दिव्य, मूलरूप में यही काव्य के विषय बनते हैं।

इस प्रकार जीवन और सांसारिकता से सम्बद्ध विशद अनुभवों के धरातल पर कवि उन अनुभवों को पुनः प्रस्तुत करने में सक्षम हो जाता है। इस परिप्रेक्ष्य में कु0 एडिथ रिकर्ट के अनुसार "बिम्ब विधान अभिव्यक्ति की वह प्रणाली है जिसके अन्तर्गत अनुभूतियों का चित्रांकन मानस चित्रों में किया जाता है कु0 स्पार्जन ने "कवि को बिम्बों की श्रृंखला से परिव्याप्त बताया है।[1] परन्तु कुछ सोन्दर्य शास्त्री इस विचार से पूर्ण सहमत नहीं हैं। उनके अनुसार कवि स्मृति में संचित अतीत की विभिन्न अनुभूतियाँ जो स्मृति से संयुक्त हैं। उनके द्वारा बिम्बों को एकत्र करके उन्हें नया सोन्दर्य तथा विशिष्ट रूप प्रदान करता हैं। बिम्बों के द्वारा ही कवि के अन्तंगत गूढ़ कक्षों अर्थात् चेतन अचेतन, विचारधारा , रूचि, भावात्सक प्रतिक्रिया आदि का उद्घाटन करता है।

इसके अतिरिक्त मनोविज्ञान की दूसरी मान्यता है कि बिम्बों की सर्जना तथा उसके भावन में व्यक्ति तथा उसकी रूचि का भी पर्याप्त प्रभाव पड़ता है। अस्तु यह विचारधारा भी सोन्दर्यशास्त्र की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

2. भाव –

भावों के द्वारा ही कवि अपने बिम्ब को पाठक तक सम्प्रेषणीय बना पाता हैं "और" तभी वह इन्द्रियग्राह्य हो सकता हैं। इसके अभाव में बिम्ब योजना काव्य को उपकारी ओर आकर्षण नहीं बना सकती है।

इस सन्दर्भ में डा0 कुमार विमल के कथनानुसार "बिम्ब विधान कलाकार का ऐसा संवेग संकुल प्रयास हैं जिसमें वह विविध अथवा विपरीत वस्तुओं मन स्थितियों ओर धारणओं को जो सामान्यतः विच्छिन्न और अर्थहीन लगती हैं, अपनी कल्पना शक्ति से

---

1. Shakespeare's Imagery and What it tells up. Page- 13-14.

परस्पर मिलाकर एक नवीन सन्दर्भ अथवा अनुक्रम देता हैं।1 बिम्ब कवि को आकस्मिक निर्बन्धता की भावना तथा देश काल की सीमाओं से उन्मुक्ति प्रदान करने वाला होता हैं। इससे कवि को एक अचानक उद्भव का आभास होता हैं। यह आकस्मिक उद्भूति भाविक तथा वेचारिक "जटिल युग्म" से अनुप्राणित होता हैं। तथा श्रेष्ठ कलात्मक कृति की परिचायिका होती हैं।2

इसी परिप्रेक्ष्य में डा0 नगेन्द्र का कथन हैं कि "कवि बिम्ब शब्दार्थ के माध्यम से कल्पना द्वारा निर्मित एक ऐसी मानस छवि हैं जिसके मूल में भाव की प्रेरणा रहती हैं।3

अतः स्पष्ट हैं कि बिम्ब का अनिवार्य तत्व या अंग भाव अथवा विचार हैं और उसकी उपस्थिति के बिना बिम्ब का निर्माण सम्भव हीं नहीं हैं। रिचर्ड्स ने का इसका समर्थन करते हुए लिखा हैं कि "बिम्ब का महत्व विचार या भावना को प्रभावित करता हैं।" 4

3. आवेग –

आवेग के विषय में कवि कालरिज की मान्यता हैं कि– बिम्ब चाहे कितने ही सोन्दर्य पूर्ण हों, बिल्कुल उपयुक्त शब्दों के द्वारा पुनः प्रस्तुत की गई प्रकृति की सत्य प्रतिकृति हें, वे किसी कवि का प्रतिनिधित्व नहीं करते, किसी शक्तिशाली आवेग या उससे सम्बद्ध विचारों तथा बिम्बों से विश्लेषित होने पर ही उन्हें मौलिक प्रतिभा का प्रमाण माना जा सकता हैं।5

श्रेष्ठ कविता के लिए भावों की प्रबलता की आवश्यकता होती हैं जो विचारों को एक्य तथा क्रमबद्धता प्रदान करते हें भाषा ओंर प्रतिभाओं को आपेष्ठित करने में समर्थ होते हैं। साहित्यिक तथा ऐतिहासिक विवरणों को परस्पर सम्बद्ध करने वाले तत्व आवेग

1. सौन्दर्य शास्त्र के तत्व, डॉ0 कुमार विमल, पृ0– 203
2.
3. काव्य बिम्ब, डॉ0 नगेन्द्र पृ0 – 5
4. रिचर्डस के आलोचना सिद्धांत, डॉ0 शंभुदत्त झा, पृ0 – 73
5. Images however beautiful, though fathfully copied from nature and as accurately represented in words, do not of original genius only as for as they are modified by a predominant, passion, on by associated thoughts of images awakened by that passion.

वस्तुओं को अनुभूति के ऐसे परिप्रेक्ष्य में रखते हैं कि वे बिम्ब रूप विधान होने के साथ ही साथ विशेष भावना के सफल वाहक भी बन जाते हैं।

2. बिम्बों के वे प्रसंग अनुबन्ध ओर विधान जो आनुपातिक रूप से रक्षा का निर्वाह नहीं कर पाते हैं। ऐसे बिम्ब सी0डी0 लेविस के अनुसार निरर्थक कहे गये हैं।

आई0 ए0 रिचर्ड्स के अनुसार– " बिम्ब की ऐन्द्रिक विशेषताओं को सदैव अति महत्व दिया गया हैं। एक बिम्ब योजना को उसकी विस्मृति इतनी प्रभाविकता उत्पन्न नहीं करती, जितनी कि संवेदन से अनूठी रीति से सम्बद्ध मानसिक घटना के रूप में रहने की विशेषता। [1]

5. स्मृति तथा कल्पना –

बिम्बों के निर्माण में स्मृति तथा कल्पना का महत्वपूर्ण योगदान रहता हैं। बिम्ब विधान को कला या काव्य का क्रियात्मक पहलू ही माना जा सकता हैं क्योंकि वह कल्पना द्वारा उत्थित होता हैं। बिम्ब विधान के समय यह निरंतर कार्यशील रहती हैं। तथा यह दो प्रकार से कार्य करती हैं।

रिचर्ड्स के अनुसार– "स्मृति अतीत की छापों की एक निखरे हुए संग्रह के रूप में बिम्बों को भावनाओं की मंजूषा में सजोंकर नहीं रखती बल्कि वह विविध आसंगों के माध्यम से बिम्बों का पुजीकरण और सम्मिश्रण कर उन्हें नवीन रमणीयता और विशिष्ट छवि भी प्रदान करती हैं। [2]

इसके विषय में डॉ0: कुमार विमल का मत हैं कि– "एक अर्थ में कल्पना वस्तु सन्निकर्ष के सामान्य प्रभावों को सुरक्षित रखती हैं ओर इसके अर्थ में कल्पनावस्तु

1. Too much importance has always been attached to the sens or qualities of images. What gives an image efficacy is less its vividness as an image than that its character as a mental event peculiarly connected with sansation. Lit. criticism. P- 119

2. प्रिंसपिल आफ लिटरेरी क्रिटीसिज्म, रिचर्डस, पृ0 –106

सन्निकर्ष के मानसिक प्रभावों से निर्मित बिम्बों को संग्रहित कर उन्हें सहस्त्रों प्रकार के संयोजन प्रदान करती हैं। दूसरे अर्थवाली कल्पना कलावरेण्य मानी जाती हैं।[1]

इसी प्रकार भारतीय काव्यशास्त्र में कवि कर्म की प्रेरणा दात्री "प्रतिभा" को स्वीकार किया गया हैं। तथा नव निर्माण कराने वाली प्रज्ञान को ही प्रतिभा बताया गया हैं।

"प्रज्ञा नव नवोन्मेषशालिनी प्रतिभा मता–

पाश्चात्य साहित्य में इसी को कल्पनाशक्ति कहा जाता हैं। कल्पना शक्ति ही कवि को नवीन सृजन तथा रूप विधान की क्षमता प्रदान करती हैं। लोगिनुस भी बिम्ब को कल्पना चित्र मानते हैं।[2] वेस्टर की कल्पना को चित्र विधायनी शक्ति के रूप में स्वीकार करते हैं।[3]

अतः यह कहना कि कल्पना ही एक ऐसी शक्ति हैं जो ऐक्य की स्थापना के साथ ही साथ सामान्य अनुभवों को भी नवीन सुषमा से विन्यस्त करके काव्य का विषय बना देती हैं। इसी कल्पनाकी प्रेरणा प्राप्त कर कवि अपनी भावाभिव्यक्ति को सफल बनाने के हेतु बिम्ब, प्रतीक, उपमान आदि का प्रयोग करता हैं। सम्भवतः अतिशयोक्ति नहीं होगी।

---

1. सौन्दर्य शास्त्र के तत्व, पृ0 – 109
2. काव्य में उदात्त तत्व, डॉ0 नगेन्द्र, पृ0 – 19
3. Webster's New world Dictonary of the American Language. P- 725

माने जाते हैं किन्तु इतिहास में जो तटस्थता परिलक्षित होती हैं उसका कारण आवेगों का आभाव हैं। परन्तु काव्य में ऐतिहासिक विवरणों के समान कोई तटस्थता नहीं होती। उसमें तो आवेग संवलित होते हैं। इसलिए वे ही बिम्ब सोन्दर्य शास्त्र की दृष्टि से सार्थक ओर महत्वपूर्ण होगें; जो कवि के आत्मस्पर्श से आवेग संवलित हैं।

4. ऐन्द्रियता –

बिम्बों का वस्तुनिष्ठ ऐन्द्रिक सन्निकर्ष होना विशेष महत्वपूर्ण हैं। बिम्ब ऐन्द्रिय संवेदन का शब्द चित्र हैं, ऐसा कहना ध्वनित करता हैं कि बिम्ब योजना ऐन्द्रिय आस्वादन से सम्बद्ध हैं। इन्द्रियगम्यता ही वह तत्व हैं जो बिम्ब को काव्य में सामान्य वर्णन से विशेषवर्णन के योग्य बना देता हैं। रिचर्ड हार्टर कोगल के अनुसार– " काव्य में बिम्ब विधान चक्षु श्रवजेन्द्रिय रवना घ्राणेन्द्रिय तथा स्पर्श के माध्यम से उपलब्ध ऐन्द्रिय अनुभूतियों की अभिव्यंजना हैं। कविता में इनका चित्रण इस विशिष्टता के साथ होता हैं कि उसके द्वारा भूल संवेदनाओं को यथा सम्भव वास्तविकता तथा विस्तार के साथ पाठकों तक पहुंचाया जा सकें। अतएवं काव्य के बिम्ब हमारी इन्द्रियनुभूति के कलात्मक रूप कहे जा सकते हैं। इस प्रकार बिम्ब विधान के आवश्यक तत्व वस्तुनिष्ठता और ऐन्द्रियकता हैं। इस विषय में डा0 कुमार विमल का यह कथन सारगर्मित जान पड़ता हैं कि सोन्दर्यशास्त्र या कला विवेचन और विशेषकर काव्यालोचन की दृष्टि से बिम्ब एक प्रकार का रूप विधान हैं। जो प्रायः किसी ऐन्द्रिय प्रभाव या संवेदन की मानसिक प्रतिलिपि अथवा प्रतिकृति हुआ करता हैं।[1]

वर्ड्सवर्थ ने इसे और अधिक स्पष्ट करते हुए बिम्बों के दो आधार बताये हैं –

1. संवेदनों या प्रभावों की सत्यता श्रेष्ठ बिम्बों में पाई जाती हैं (वस्तुतः काव्य कला के बिम्ब ऐन्द्रिकता के सानिध्य में उत्पन्न वस्तुओं का मानसिक निर्माण ही नहीं करते वरन् उन

---

1 सौन्दर्य शास्त्र के तत्व, पृ0 – 211

सौन्दर्य एवं अन्य शास्त्र

﴾क﴿ सौन्दर्य: दर्शन शास्त्र में –

अनुमान के आधार पर यह कहा जा सकता हैं कि प्रागैतिहासिक युग में भी "शिवत्व" की भावना से अनुप्राणित होकर ही "सौन्दर्य चेतना" की निष्पत्ति हुई होगी। चूंकि मानव चेतन प्राणी हैं, अवएवं वह संवेदनशील हें ओर आकर्षण विकर्षण से भी परिपूर्ण हैं। अत: सौन्दर्य का निमंत्रण उसने स्नेह समन्वित साधना के सहित स्वीकार किया होगा। अध्ययन के आधार पर यह कहा जाता हैं कि सोन्दर्य चेतना शैशव में सरला ओर पवित्रीकृत रहती हैं, वहीं युवावस्था में वासनात्मक प्रौढ़ काल में स्वाप्निल एवं वृद्ध जीवन में दार्शनिकता से सिक्त रहती हैं।

अस्तु पारिभाषिक परिप्रेक्ष्य में, सुन्दर वस्तु के सर्जन अथवा आस्वादन के समय कलाकार और रसिक की आत्मा जिस विशेषावस्था को प्राप्त कर लेती हैं, उसकी संज्ञा को सोन्दर्य–चेतना ﴾ Aesthetic conseiousness ﴿ माना गया हैं।

अनन्त के प्रति शान्त अनुराग, उपनिषदों की रहस्यपूर्ण वाणी के द्वारा ही अभिव्यक्त हुआ हैं। इसका समय छठवीं–सातवीं शताब्दी ई0 पूर्व माना गया हैं। सं0 220 तक बताई जाती हैं।[1] परन्तु शंकराचार्य ने केवल 10 उपनिषदों पर ही भाव्य प्रस्तुत किया हैं।[2] इनमें से कोवीतिकी, मैत्रापणी तथा श्वेताश्वेर के योग से इनकी सं0 13 हो जाती हैं।

1. ईशावस्योपनिषद –

शुक्ल यजुर्वेद संहिता के अंतिम अध्याय के अनुसार – परब्रह्म की पूर्णत: से जगत पूर्ण होने पर भी वह ब्रह्म पूर्ण है। इस पूर्ण में से पूर्ण निकाल

---

1. कल्याण उपनिषदांक वर्ष 23 अंक –1 पृ0 153–56
2. ईश केन कह प्रश्न मुंड मांडूक्य वित्तिरि।
   एहरेयंच छादोग्यं वृहदारण्यकस्तथा।।

देने पर भी वह पूर्ण ही बचा रहता हैं। इसमें ईश्वर को कवि, सर्वज्ञ, एवं ज्ञान रूपी मनीषी, सर्वोपरि विद्यमान एवं सर्व नियन्ता परिभू तथा स्वेच्छा से प्रकट होने वाला स्वयंभू. उद्घोषित किया गया हैं।[1] इस परमेश्वर का मुख ज्योतिर्मय सूर्य मण्डलरूपी पात्र से अवतरित हैं।

2. <u>किनोपनिषद –</u>

इसमें दिव्य पक्ष के माध्यम से ब्रह्म की अवधारणा बतायी गई हैं ओर उसकी दिव्यता को ही सोन्दर्य का मूल कहा गया हैं। इसके अनुसार वह (ब्रह्म) मन, प्राण, व्राकश्रातेन्द्रिय तथा चक्षु आदि सभी का प्रेरक हैं।[2] अग्नि, वायु आदि की प्रतिस्पर्द्धा में वराणित हो जाते हैं। वहीं साक्षात् ब्रह्म हैं उसे दिव्य कहा गया हैं।

3. <u>कठोपनिषद –</u>

इसमें यम ओर नचिकिता के माध्यम से "सुन्दर संभाषण" का परिचय प्राप्त होता हैं।[3] प्रसन्नचित एवं स्वर्गलोक में आनन्दोपभोग की भी उद्घोषणा हैं।

4. <u>प्रश्नोपनिषद –</u>

इससे प्रसन्न शब्द का उल्लेख मिलता हैं वर्षासिक्त प्रजा को आनन्द रूपा से अभिहित किया गया हैं। कान्ति के सन्दर्भ में "श्री" का प्रयोग भी मिलता हैं। उस परम पुरूष को सोलह कलाओं से युक्त बताया गया हैं।[4]

5. <u>मुंड कोपनिषद –</u>

इसमें एक स्थान पर ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद शिक्षा कल्प व्याकरण

---

1. कविर्मनीषी परिभूः स्वयंभूः। ईशावास्योपनिषद 1/8
2. केनेषितं पतित प्रेषितं मनः केन प्राणः प्रथमः पौतियुक्तः। केनेषितां वाचमिमां वदन्तिचक्षुः श्रोतं कउ देवो युनक्ति।। केनोपनिषद 1/1
3. सुनृताभ्च 1/8 कठोपनिषद।
4. षोडशकलाः प्रभवन्तीति 6/2/5

निरूक्त, छन्द तथा ज्योतिष को अपरा विद्या चित्रित किया गया हें। यथास्थान "प्रियवाणी" का भी उल्लेख हें। पूर्ण पुरूष को "द्विरू" कहा गया हें। आनन्दस्वरूप भी बताया भी बताया गया हैं।[1]

6. माण्डूक्योपनिषद –

कल्याण के परिप्रेक्ष्य में "शिव" शब्द का प्रयोग बहुधा दृष्टिगोचर होता हें।

7. तैत्तिरोयोपनिषद –

इसमें शिक्षा पर विशेष बल दिया गया हें। इसी सन्दर्भ में "जिह्वा की मधुरता का उल्लेख भी हें। हृदयानन्द की सम्प्राप्ति एवं रूखेपन अथवा रुक्षता से रहित होना भी प्रतिपादित किया गया हें। परब्रह्म को रसरूप बताया गया हैं।

8. एतरेयोपनिषद –

इस उपनिषद में मानवीय उत्पत्ति का विस्तार से वर्णन किया गया हें। मानव शरीर को बहुत सुन्दर बताया गया हें। इसमें मनोविज्ञान की समस्त दशाओं को संवेदन, संकल्प एवं विकल्प तथा विचार में विभक्त किया गया हैं। एक स्थान पर 12 मानसिक दशाओं–संज्ञान, अज्ञान, विज्ञान, प्रज्ञान, मेधा, दृष्टि, धृति, मनीषा, मति, जुति, स्मृति, संकल्प, क्रतु, अजु, काम और वश का वर्णन मिलता हें।

---

1. आनन्दरूपममृतं

9. छन्दोग्योपनिषद -

उपनिषदों में यह सबसे बृहत्त हैं। इसमें आदित्य का मधुरुप कल्पित है इसमें भूमा को ही सुख माना गया हैं। उसे ही अमृत, स्वराट्, श्रेय और आत्म बताया गया हैं।

10. कोषोतिक ब्राह्मणोपनिषद -

इसमें स्वर्ग की अप्सराओं को अम्बा के नाम से सम्बोधित किया गया हैं। पत्नी के प्रति पति का जो सम्बोधन हैं उसमें कहा गया हैं- हे सुन्दर सीमान्त वाली सुन्दरी। तुम सोम मयी हो।[1]

इन विशिष्ट उपनिषदों के अतिरिक्त प्रायः अन्यान्य उपनिषदों में भी प्रत्येक स्थान पर सुन्दर के अभिधार्य में "सु" प्रत्यय का प्रयोग किया गया हैं। अष्टादश पुराणों में प्रयोजनातीत सोन्दर्य की ओर उन्मुख करने वाले सत्य का दर्शन हैं। अस्तु इनमें भी सोन्दर्य बोध का आभाव दृष्टिगोचर नहीं होता। यथा-विष्णुपुराण में शारदी, ज्योत्सना, यमुना तट, शीतल, मन्द, पवन को रास की सोन्दर्य सृष्टि में सहायक निरुपित किया गया हैं।[2]

"दर्शन" शब्द "दृश" धातु से करण अर्थ में "ल्युट्" प्रत्यय लगाकर बना है। इसका अर्थ है "जिसके द्वारा देखा जाये" अतः चाक्षुष इन्द्रिय द्वारा प्रमाणिक ज्ञान ही विश्वसनीय तथा प्रत्यक्ष हे।[3]

---

1. यत्ते सुसीमे हृदये हितमत्तः प्रजायतो। 1/10
2. रभ्यै गीत ध्वनि श्रुत्वा सत्यज्ज्यायसयास्थि। विष्णुपुरुष 5/13
3. भारतीय दर्शन का रुप। डॉ0 उमेश मिश्र पृ0- 5

(ख) सौन्दर्य काव्य शास्त्र में :—

भारतीय सौन्दर्य दर्शन का मूलाधार काव्यशास्त्र को ही माना जाता है। जैसा अन्यत्र उल्लेख किया जा चुका है, भारतीय दर्शन के धरातल पर आत्मतत्व के माध्यम से सौन्दर्यानुभूति की उपलब्धि परिलक्षित होती है। परन्तु सौन्दर्य के स्वरूप तथा आस्वादन का विवेचन काव्यशास्त्र में ही प्राप्त है। भारतीय आचार्य की मनोवैज्ञानिक दृष्टि सदैव ही सौन्दर्य चेतना की ओर उन्मुख रही है। एक प्रकार से प्रीति और विस्मय का शास्त्रीय विधान ही रस और अलंकार है।

काव्यालंकार के प्रणेता भामह ने अपने ग्रन्थ में शब्द तथा अर्थ के परिप्रेक्ष्य में कहा है कि नितान्तादि शब्दों के प्रयोग मात्र से काव्य में चारुता सम्भव नहीं।[1] उसके हेतु अपेक्षित है शब्द और अर्थ की वक्रतामयी उक्ति। अतः इससे स्पष्ट हो जाता है कि आपने अलंकार तथा सौन्दर्य में अभेद स्वीकार किया है।

दण्डी :—

सौन्दर्याभिव्यक्ति के हेतु दण्डी ने अग्रगम्यता को विशेष रूप से और बारम्बार आवश्यक निरूपित किया है।[2] साधारण रूप से ग्राम्य फूहड़ अथवा भदेस वस्तु को सुन्दर नहीं माना है। इन्होंने अलंकारों की परिभाषा प्रस्तुत करते हुए स्वयं स्पष्ट कर दिया है कि काव्य में शोभा के विधायक धर्मों को ही अलंकार कहा जाता है।

---

1. न नितान्तादिमात्रेण जायते चारुता गिराम्।
   वक्रामिधेयशब्दोक्तिरिष्टा वाचामलंकृतिः।। काव्यलकांर 1/36

2. कामं सर्वोव्यलंकारो रसमये निषिचति।
   तथाप्य ग्राम्य तैवेन भारं वहति भूयसः।। काव्यादर्श 1/62

उद्‌भट :–

काव्यालंकार सार संग्रह में उद्‌भट ने एक स्थान पर कहा है कि मनोहारी साधर्म्य को ही उपमा कहते हैं। काव्यादर्श में उपमा को सर्वोपरि तथा सौन्दर्यशालिनी माना है।

वामन :–

रीति सम्प्रदाय के प्रवर्तक वामन सौन्दर्य शब्द का स्पष्ट और महत्वपूर्ण प्रयोग करने वाले आचार्य हैं। आधुनिक विचारक इनके सम्प्रदाय को 'सौन्दर्य सम्प्रदाय' के नाम से जानते हैं।

आनन्दवर्धन :–

ध्वनि सिद्धान्त के प्रवर्तक जो ध्वनि को ही काव्य की आत्मा मानते हैं इनके अनुसार व्यजंना तभी ध्वनित्व को प्राप्त करती है, जब ध्वनि ध्वनि का चारूत्व वाच्य अथवा तद्‌भिन्न अन्य काव्य तत्व की चारूता विशेष से समृद्ध हों। 1

आचार्य अभिनव गुप्त :–

इन्होंने 'लोचन' नाम्नी टीका के माध्यम से आनन्द वर्धनाचार्य के 'ध्वन्यालोक' के विशिष्ट स्थलों को स्पष्ट किया है और सौन्दर्य से सम्बद्ध अनेकों स्फुट विचार प्रस्तुत किये हैं।

इनके अनुसार ध्वनि चारूत्व का हेतु है। इन्होंने चारूत्व को स्वरूपनिष्ठ तथा संघटनानिष्ट बताया है।[2] चारूत्व के परिप्रेक्ष्य में आपने स्पष्टतया 'सौन्दर्य' शब्द का भी प्रयोग किया है।

---

1. उक्तत्यन्तरेण यत् तच्चारूत्वं प्रकाशयन।
   शब्दो व्यंजकतां विभ्रद्रध्वन्युक्तैर्विषयी भवेत्।। 1/15 कारिका
2. शब्दार्थयोः द्विविध चारूत्वारं (1) स्वरूपंमाया निष्ठम्
   [illegible]

इसके अतिरिक्त जहां आनन्दवर्धन ने ध्वनि को कमनीय कहा है वहाँ टीकाकार अभिनव गुप्त ने कमनीयता का अर्थ "चारूत्व घी हेतुता" किया है। अर्थात् कमनीय उसे कहा है, जिसे चारूत्व का बोध हो।

इसी प्रकार कविचर्चा के प्रकरण में, राजेश्वर ने कवि को अधिकाधिक सौन्दर्य प्रसाधनों से युक्त रहना बताया है। कवि में रूचि का होना, केवल यही मन्तत्व प्रकट करता है कि वातावरण सौन्दर्य से वह प्रभावित रहे और अपने काव्य में उसका प्रतिफलन करें।1

रूद्रट –

इन्होंने काव्यालंडार ग्रंथ में "पॉडित्य" कासार चारू–काव्य को बताया है। चारू शब्द की व्याख्या करते हुए नामिसाधु ने उसे सौन्दर्यपरक स्वीकार किया है। रूद्रट ने काव्य में "शक्ति व्यत्पत्ति अभ्यास" द्वारा चारूत्व की निस्पत्ति को माना है। नामिसाधु यहाँ भी चारूत्व को सौन्दर्य स्वीकार करते है।

काव्यशास्त्री शब्द और अर्थ को काव्य के घटकों के रूप में स्वीकार करते है। काव्यशास्त्रियों ने इन दोनों में सौन्दर्य की सत्ता को ही स्वीकार किया है। इन्होने सहिण्तत्व के निर्वाचन में, शब्दार्थ बन्ध में, अपने द्वारा निर्धारित तीनों भागों और गुणों में सौन्दर्य की स्थिति को माना है।2

---

1. अध्याय –10 पृ0 16, चौ सं0 1997 वि0
2. निर्णयाकार संस्करण 1/15 पृ0 115

आचार्य भोज :-

आचार्य भोज ने सरस्वती कंठाभरण तथा शृंगार प्रकाश ग्रन्थों की रचना की है। इन्होंने साहित्य शास्त्र को अनेक प्रकार की नवीन उद्भावनाओं से सम्पन्न किया है उनके ये दोनों ग्रन्थ जैसे भरतमुनि का नाट्यशास्त्र। इन दोनों में ही सौन्दर्य शास्त्र सम्बन्धी विचार यत्र-तत्र विकीर्ण है।

अभिनव गुप्त :-.

इन्होंने अभिनव भारती में अनेक स्थलों पर सौन्दर्य शब्द का प्रयोग करते हुए काव्य में उसका अस्तित्व दिखलाया है। काव्य में जो रसचवर्णा होती है, उसमें गुण और अलंकार सौन्दर्यातिशय ला देते हैं।[1]

लक्षण तत्व के परिप्रेक्ष्य में आपने कहा है कि इससे अभिनेयता में सौन्दर्याधान होता है। भाव ध्वनि में प्रधानता भाव की रहती है। इसका कारण आपने सौन्दर्यातिशय को माना है।

इसी तरह भाव और रस को आपने बीज और वृक्ष माना है। जिसमें अभिनयपुष्प से सुन्दरफल निष्पन्न होता है।

इस प्रकार लगभग सभी काव्यशास्त्रियों ने काव्य में सौन्दर्य की सत्ता स्वीकार की है।

---

1. अन्येतु काव्येअपि गुणालंकार सौन्दर्यतिशय कृते रसचवर्ण माहुः ।
   अभिनव भारती नाट्यशास्त्र पृष्ठ 291

(ग) कामशास्त्र में सौन्दर्य –

काम शास्त्र का आविर्भाव प्रायः आचार्य भरत से पूर्व माना जाता है। इतिहासकारों में कामसूत्र को वात्सायनकृत तथा ईसा की दूसरी–तीसरी शदी में प्रणीत माना है।

सृष्टिलोक की व्यवस्था के लिए ब्रह्मा ने एक लाख श्लाको का प्रणयन किया जिसमें धर्मार्थकाम त्रिवर्ग का प्रतिपादन था। इसी आधार पर मनु ने धर्मशास्त्र, ब्रहस्पति ने अर्थशास्त्र एवं कामशास्त्र का प्रणयन महादेव ने शिष्य आचार्य नन्दी ने किया। यह ग्रन्थ उद्दालक के पुत्र श्वेतकेतु ने संक्षिप्त किया और आचार्य बाभ्रव्य ने सात अध्यायों में लिख दिया। तत्पश्चात् नानाविध "अधिकरणों" पर विभिन्न आचार्यो ने पृथक–पृथक ग्रन्थों की रचना की। इसमें सर्वश्री आचार्य दत्तक, चारायण, सुवर्गनाम, घोटकमुख, पतंजलि, गोणि का पुत्र और कुचुमार के नाम उल्लेखनीय है।1

अन्त में आचार्य वात्सायन ने सभी ग्रन्थों का सार सन्निविष्ट करते हुए कामशास्त्र का प्रणयन किया। इसी का प्रभाव जयदेव रचित "गीत गोविन्द" रतिमञ्जरी, राजस्थानी आचार्य कुल्लोनमल प्रणीत "अनंगरंग" और पद्मश्री लिखित "नागर सर्वस्व" आदि अनेकों ग्रन्थों में परिलक्षित होता है।

कामसूत्र केवल काम विषयक ही नहीं है, वरन् समाजशास्त्र भौतिकशास्त्र और मनोविज्ञान भी उसका विचारणीय अधिकरण है। जीवन में मर्यादा व्यवस्था और सुसम्बद्धता की स्थापना उसका लक्ष्य है। वह मात्र सेक्स का व्याख्यात्मक विवरण नहीं है।

---

1. कामसूत्र परिशीलन 1 ले0 वाचस्पति गैरोला "भूमिका भाग 1

परिभाषा –

मानस प्रक्रिया, मानसिक व्यापार तथा रागात्मिका वृत्ति का नाम ही काम है। यह वृत्ति मानव प्राणि मात्र के मन में प्रकृत रूप से विद्यमान है।

काम के अधिष्ठाता देवता के रूप में कामदेव को माना जाता है। जिसे सभी ने परम सुन्दर माना है। वैदिककाल से लेकर तुलसी तक और सूर से चलते हुए आधुनिक कवियों तक सौन्दर्यशाली काम का आधिपत्य रहा है।

वात्सायन ने इसे रामणीयक, सुदर्शनता आदि शब्दो से सम्बोधित किया है। शारीरिक सौन्दर्य की वृद्धि के लिए इन्होने अलंकारों को उपयोगी माना है।1

सौन्दर्य का भौतिक रूप अभिव्यजंन है। और आनन्द उससे व्यंजित होने वाला तत्व है। यदि व्यंग्य और व्यंजक में अभेद्य माना जाय, तो इसमें कोई संदेह नहीं रह जाता है कि जो रस है वही सौन्दर्य है। और जो सौन्दर्य है वही रस है। लगभग ऐसा ही सभी साहित्यशास्त्रियों ने माना है।

रीतिकालीन कवियो ने इन्हीं आचार्य वामन की "रीति" अर्थात् सौन्दर्य की सम्प्राप्ति का उद्देश्य सामने रखा है। संस्कृत काव्यशास्त्र रस रीति, वक्रोक्ति, अलंकार औचित्य और ध्वनि आदि 6 विशिष्ट सम्प्रदायों में विभक्त है, किन्तु रीतिकाव्य में रीति गुण, वक्रोक्ति तथा औचित्य का प्रतिपादन किसी भी आचार्य ने नहीं किया है। इसलिए केवल 3 सम्प्रदाय ही वर्तमान में शेष रहे– अलंकार, रस और ध्वनि। इनमें की ध्वनि सम्प्रदाय समाप्त सा ही रहा। और केवल रस तथा अलंकार का बोलबाला रहा।

---

1. कामसूत्र पृष्ठ 602, 622, 623, 636 तथा 638 ।

एक संक्षिप्त सा विवेचन उल्लेखनीय है।

केशव –

इनके अनुसार–

अलंकार कवितान के सुनि–सुनि विविध प्रकार ।

कविप्रिया केशव करी, कविता को सिंगार ।।

उनकी यह "काव्य सिंगार" की घोषणा वामन के सौन्दर्यमूलंकार की ही प्रतिध्वनि है। और उनका "सगुन पदारथ अर्थयुत" कहना ही वामन के शब्दार्थ का ग्रहण है। लगभग यही मन्तव्य आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र का है।

(2) देव –

इनके काव्य में अलंकारों का महत्व पंचम अंग के रूप में ही मिलता है। मानुष, भाषा, मुख्यरस भाव नायिका छन्द। अलंकार पंचांग ये कहत सुनत आनन्द में रस को मुख्य माना गया है। और शेष सभी को उसकी प्राप्ति का साधन। इन्होने शब्द को जीव, अर्थ को मन, और रसमयता को यशस्वी शरीर तथा अलंकारों को गति माना है।

---

1 कामसूत्र पृ0 – 602,622,623,636, तथा 638

शब्द जीव तिहि मनु अर्थ, रसमय सुजस शरीर ।
चलत चहूं जुग छन्द गति, अलंकार गम्भीर ।।

(3) बिहारी –

बिहारी आचार्य वामन के सिद्धांतानुसार भूषण भार का विरोध करते हुए लिखते है कि –

भूषन भार संभारिहैं क्यो यह तन सुकुमार ।
सूधे पायं न धरिपरत, महि सोभा कुमार ।।

अस्तु वे अलंकारों के काव्य के लिए मानते है, काव्य को अलंकार के लिए नही।

अतः यहाँ डॉ0 दीक्षित के शब्द विशेषोल्लेखनीय है कि सप्त सौन्दर्य अलंकाराचार्य (केशव से बिहारी तक) जिस प्रदीप्त काव्य मण्डल के कान्तिमान नक्षत्र है, वह आचार्य वामन (ध्रुव) के चारों ओर परिभ्रमण करने वाला है। कोई थोड़ा पास है कोई थोड़ा दूर, और इसी मान्यरस के आधार पर उसके अंशियो सहित, इस काव्यांश में प्रस्तुति की गई है।

दीप्तरसत्वं कान्तिः ।

1. भारतीय काव्य सम्प्रदाय एवं सौन्दर्य –

डॉ० रामानन्द तिवारी के अनुसार–लिप्स का समानुभूतिक सिद्धांत स्पष्ट रूप से मनोवैज्ञानिक और व्यक्तिवादी है। उसमें किसी अध्यात्म का आधार अथवा आग्रह नहीं है। किसी वस्तु अथवा व्यक्ति में हमारी रूचि तीव्र होती हैं तो हम प्रायः उनके साथ अपने को तद्रूप कर लेते हैं। और उसी के समान अनुभव और व्यवहार करने लगते हैं। 1

इसी प्रकार प्रवास जीवन चौधरी ने उक्त सिद्धांत की मनोविज्ञानोत्तर अर्थक्ता (Metapsychical significance) का निर्देश करते हुए इसका सम्बन्ध भारतीय सौन्दर्य शास्त्र से जोड़ना चाहा है। श्रीचौधरी ने इस प्रंसग में अभिनव गुप्त के विचारों की अधिक चर्चा की है।

जीव विज्ञान भी इस स्थापना का समर्थन करता है। मानव क्या, मानवेतर प्राणियों पर भी यह बात चरितार्थ होती है। उदा० के लिए क्यों कुछ जीवधारियों को प्रकाश सुन्दर लगता है। और कुछ जीवधारियों को अन्धकार? क्यों पतंगा दीपक की लौ से आकृष्ट होकर उस पर मर मिटता है। क्यों स्नेही चातक चांदी की किरण मंजूषा चंदा की ओर सदा उन्मुक्त रहता है किन्तु ठीक इसके विपरीत क्यों उलूख को प्रकाश का सौन्दर्य आकृष्ट नहीं कर पाता है। इसी प्रकार जोंक को छाया ही क्यों प्रिय होता है।2

---

1. डॉ० रामानन्द तिवारी कृत पृष्ठ 71

2. महाकवि बिहारी के अनुसार इसका उत्तर है रूचि भेद–

समै –समै सुन्दर एवै, रूप कुरूप न कोय ।
जाकी रूचि जेती जितै, तित तेतो सुन्दर होय ।।

बिहारी सतसई दो० स० – 722 ।

सचमुच प्रतीतिः ही उत्कृष्ट सौन्दर्यानुभूति हो सकती है। इसी को आचार्य राम चन्द्र शुक्ल ने "अन्तस्सता की तदाकार परिणिति" के रूप में स्वीकारं किया है। सौन्दर्यानुभूति का विवेचन करते हुए इन्होंने लिखा है कि "कुछ रूप रंग की वस्तुएं ऐसी होती हैं। जो हमारे मन में आते ही थोड़ी देर के लिए हमारी सत्ता पर ऐसा अधिकार कर लेती है। कि उसका ज्ञान ही हवा हो जाता है। और हम उन वस्तुओं की भावना के रूप में ही परिणत हो जाते है। हमारी अन्तः सत्ता की यही तदाकार-परिणित ही सौन्दर्य की अनुभूति है।"

कालिदास का भी विश्वास है कि सौन्दर्यानुभूति में सर्वदा-आलम्बन के प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रहने पर-विकलता का अंश विद्यमान रहता है। उदा0, हम प्रथम स्थिति को इन पंक्तियों में देख सकते हैं।

रम्याणि वीक्ष्य मधुरांश्च निशम्य शब्दान
पर्युत्सुकी भवति यत् सुखिताडपि जन्तुः ।[1]

इसी प्रकार हिन्दी के कुछ रीतिकालीन कवियों की भी यही धारणा रही है कि सुन्दर की रमणीयता न वर्द्धमान निकटता से घटती है और न निरन्तर भोग से छीजती है, बल्कि सुन्दर वस्तु अपने अघट सौन्दर्य के कारण सौन्दर्य दृष्टा के लिए हर क्षण नवीन होती जाती है। मुस्कान की मिठाई खाने वाले मतिराम ने एक बांकी अदा के साथ के साथ इस तथ्य को व्यक्त किया है-

कुंदन को रंग फीको लगे, झलकै अति अगनि चारू गोराई।
आंखिन में अरसानि चितौन में मंजु विलासिनि की सरमाई।।

---

1. अभिज्ञान शकुन्तल अंक 5 ।

को विनु मोल विकात नही, मतिराम लहै मुस्कान. मिठाई।
ज्यो–ज्यो निहारिये नेरे है नैननि, त्यो–त्यो खरी
निकैरे सी निकाई ।।

अतिराम ही नहीं, विसासी सुजान के द्वारा छले गये घनानन्द की भी यही उक्ति है–

शवरे रूप की रीति अनूप, नयी–नयी लागत ज्यो–2
निहारिये।
त्यो इन आंखिनि बान अनोखी अघानि कहूं नहि
आन निहारिये।।

2. पाश्चात्य काव्य सम्प्रदाय एवं सौन्दर्य –

हीगेल के अनुसार "सिम्बालिक आर्ट" अर्थात् वास्तुकला में सौन्दर्य सृजन की दृष्टि से पिण्डीभूत मूर्तन की अधिकता रहती है।[1]

इन्हीं के विचारानुसार सौन्दर्य अथवा प्रत्यय के उचित मूर्तन होता है। इसमें अभिव्यक्ति का स्वरूप उतना अधिक स्थूल नहीं रहता है। कुल मिलाकर क्लॉलिफल कला में आइडिया तथा इमेज की एक पारस्परिक अनुकूलता स्थापित हो जाती है। और इन दोनों में एक समतोल निष्पन्न हो जाता है।

---

1. This first type of art (the symbolic type of art) is rather a more search after plastic configuration then a power of g enuine representation.

- Hegel, the pholosophy of fine Art, P-103.

अतः रोमाण्टिक कला का उद्देश्य "सिम्बॉलिक या क्लासिकल" कला की तरह सौन्दर्य के किसी अंश का भाव एन्द्रिय प्रत्यक्ष करा देना नहीं रहता, बल्कि रोमाण्टिक कला में अभिव्यक्त सौन्दर्य के साथ ही आत्मा या चेतना के गहन अंशों की भी अभिव्यक्ति होती है।

हीगेल के बाद पाश्चात्य सौन्दर्य शास्त्र के आधुनिक स्वरूप को प्रभावित करने वाले विचारकों में क्रोचे का बड़ा ही महत्व है। अभिव्यंजनावाद के माध्यम से क्रोचे ने पाश्चात्य सौन्दर्य शास्त्र को विकास का एक नया आस्पद प्रदान किया है।

इन्होने सौन्दर्यानुप्राणित कला-सृजन में सहज ज्ञान को प्राथमिकता दी है। किन्तु इन्होने सहजज्ञान और "बुद्धि में बैर" नही माना है। इनका स्पष्ट कथन है कि- (Inlrction is blind. Intellect lands-her eyes.)

अतः इनका सहज ज्ञान साधारण अर्थो से विशिष्ट है। इस सहजज्ञान में वस्तु-प्रत्यय और बिम्ब की प्रतीति का अन्तरहीन एक्य विद्यमान रहता है। इसलिए सहजज्ञान के द्वारा किसी सौन्दर्यात्मक कलाकृति में देश अथवा काल का नहीं विशिष्टता अथवा व्यक्ति सत्ता का उद्घाटन होता है।

इसी प्रकार विल्हेलन वोरिंगर ने विप्स की मान्यता का विश्लेषण करते हुए कहा है कि-

"Appreceptive activity becomes aesthetic enjoyment in the case of positive empathy, in the case of the unision of my natural tendencies of self activation with the activity demanded of me by the sensuous object, in relation to the work of art also. It is this positive empathy alone which comes inter question.

- Abstractoen and Emporty.

इसी प्रकार आधुनिक सौन्दर्यशास्त्र में अनेक सिद्धांतों की स्थापना की गई है, जिसमें अन्विति सिद्धान्त, सोद्देश्यता और कल्पनाशील जीवन की पृथकता का सिद्धांत तथा संतुलन सिद्धांत महत्वपूर्ण है। किन्तु ये सभी सिद्धांत पूर्व विवेचित सिद्धांतों के ही उच्छिस्ट हैं। अतः इनका विस्तृत विवेचन आवश्यक नहीं है।

इसी तरह शास्त्री जी ने सौन्दर्यज आनन्द को निष्काम आनन्द सिद्ध करते हुए सौन्दर्य बोध को ऋतम्भरा प्रज्ञा से सम्बन्धित माना है।[1] ठीक इसी प्रकार भारतीय कला में सौन्दर्य को प्रायः रहस्यमय माना गया है, जिसके सर्वोत्तम उदा0 सन्त अथवा सूफी साहित्य और युगनद्ध मुद्रा की मैथुनी मूर्तियाँ है। इसीलिए जेम्स कजिन्स ने उचित ही कहा है कि जहाँ हीगेल आदि की वैचारिक दृष्टि से ललित कलाओं को विश्व जीवन की अनुभूति के लिए सम्पर्क साधन कहा है। वहाँ भारतीय दृष्टि कभी-कभी योग साधना अथवा यौगिक चिन्तन को कला का लक्ष्य मान लेती है।[2] वस्तुतः साधारणीकरण का मधुमती भूमिका से सम्बन्ध जोड़ना इसी दृष्टि का द्योतक है।

3. मनोविश्लेषण एवं सौन्दर्य शास्त्र –

सौन्दर्य विश्लेषण करते हुए पश्चिमी विद्वान मैक्स मूलर ने कहा है कि भारत में सौन्दर्य की चर्चा नहीं है। इसके अलावा भी कुछ लोगों का मत है कि यहाँ उपनिषदों में सत्यं शिवं सुन्दरम् कहकर केवल ब्रह्म के स्वरूप का निरूपण किया गया है, किन्तु यह धारणा निमूर्ल है।

---

1. सौन्दर्य विज्ञान, ले0 हरिवांश सिंह शास्त्री, काशी विद्या पीठ पृष्ठ 56/ 118
2. "द फिलासफी आफ ब्यूहीफुल ले0 जेम्स एच कजिन्स पृष्ठ .35

भारत में काव्य शास्त्रीय सौन्दर्य विवेचन के परिप्रेक्ष्य में भी नानाविध सिद्धांतो का प्रतिपादन हुआ है तथा रसान्र्तगत ही "सुन्दर" को समविष्ट किया गया है। ठीक उसी प्रकार, जैसे पाश्चात्य साहित्य में कला मीमांसा की चर्चा करते हुए भी अनिवार्य रूप से "सुन्दर" की साधना पर अत्यधिक बल दिया गया है।

सौन्दर्य शास्त्र के अमिधार्य हेतु केवल शास्त्र एवं विज्ञान ही पूर्ण समर्थवान है यह धारणा असंगत प्रतीत होती है। किसी वस्तु अथवा अनुभव के चरम स्वरूप के परिज्ञान के लिए जब उसे सम्पूर्ण सत्ता का अंश मानकर विचार किया जाता है तो हमारा दृष्टिकोण दार्शनिक होता है। यही आनन्द चेतना है। यही आत्मस्वरूप से परिचित कराती है, यह स्वयं रसमय है "रसो वै सहः"सुन्दर वस्तुओं के दर्शन से आह्लाद होता है, मन आनन्दित होता है। प्रत्यक्ष स्मृति एवं कल्पनादि के द्वारा आनन्द की सम्प्राप्ति होती है और आनन्द उत्पन्न करने की क्षमता रखने वाले गुण को सुन्दर कहा जाता है। वस्तु का यह सौन्दर्य ही उसका आध्यात्मिक रूप है।

हमारा देश प्राकृतिक सौन्दर्य से समन्वित है, विभिन्न प्रकार की जलवायु से युक्त है। नदी, झरनों के अतिरिक्त अनेक अचल नानाविध खाद्य पदार्थो की उपलब्धि आदि सभी ने मिलकर हमारे मानस को शान्त एवं गम्भीर बना रखा है।

अनेक दर्शन शास्त्रियों ने विशेष गुणों की स्थापना श्रद्धा, भक्ति एवं आत्म समर्पण को ही आनन्द प्राप्ति का माध्यम माना। और इस प्रकार सत्या सत्य, श्रेयस, प्रेयस, निःश्रेयस तथा अभ्युदय प्रिय–अप्रिय, जड़-चेतन, सुख–दुख सभी का रहस्योद्घाटन किया। उस परमानन्द के प्राप्ति का पथ प्रशस्त्र किया जो पूर्ण है और परम तेजस्वी हिरण्यगर्भ तथा परम सुन्दर है।

सांख्य और रामानुज वेदान्त के अनुसार सौन्दर्य ब्रह्म है और कला उसकी भाषा है। मानव जीवन को ऐश्वर्य उसका प्रकाश है। जो सौन्दर्य से अभिभूत है। इसी प्रकार शंकराचार्य ने सौन्दर्य शास्त्रीय दृष्टिकोण से अद्वैत का अध्ययन प्रस्तुत किया है जिसका दर्शन अथवा अनुभव आनन्द प्रदाता है। वही सुन्दर है और उसके साथ तादात्म्य स्थापित करना ही अद्वैत है।

अस्तु सत्‌चित् का मंगलमय रूप ही आनन्द है और उसका मूल सौन्दर्यबोध वही सच्चिदानन्द है। प्रतिभा ज्ञान की परिधि में सत्य जब दर्शन का रूप धारण कर लेता है तो सुन्दर हो जाता है। तात्विक दृष्टि से ब्रह्म का जो स्वरूप सत् है, दार्शनिक दृष्टि से चित् है, परमार्थिक दृष्टि से आनन्द है और वही कलात्मक दृष्टि से चिदानन्द, परमतत्व तथा सुन्दर है। दर्शन की भूमिका पर वही आनन्दमय बताया गया है। दार्शनिक का जो आनन्द सत्य है, वही कवि का सौन्दर्य है, ज्ञानी का अध्यात्म तथा भावुक का काव्य है। वह अमृत है, चिर सुन्दर है, जिसे देखकर भी तृप्ति नहीं होती।

जन्म अवधि हम रूप निहारलु, नयन न तिरपति भेल। (विद्यापति)

अतः सौन्दर्य एवं आनन्द एक है और वह इतना विस्तृत है जितना ब्रह्माण्ड असीम है तो सौन्दर्यानुभूति ससीम कैसे हो सकती है। आनन्द स्फुरण रूपिणी सौन्दर्य वृत्ति ही आध्यात्म है।

सौन्दर्य का अधिष्ठान :-

भरत प्रज्ञा चक्षु, मेघा विरुद्ध दण्डी और उद्‌भट् के पश्चात् आचार्य वामन (750-850 ई0) जैसे व्यक्ति का अवतरण संस्कृत का काव्य

सम्प्रदाय में एक विशिष्ट क्रांति दृष्टा के रूप में हुआ। इनके प्रतिद्वन्द्वी आचार्य उद्भट में अलंकार पर ही ग्रन्थ लिखा किन्तु आचार्य वामन ने आलोचना शास्त्र के समस्त तत्वों को अपनी पांडित्य पूर्ण प्रतिमा से उद्भाषित किया। अस्तु आचार्य वामन को ही सौन्दर्य सम्प्रदाय का अधिष्ठाता स्वीकार किया गया है।

आपके द्वारा रचित काव्यालंकार एक ऐसा ग्रन्थ है जिसका प्रणयन सूत्र शैली में हुआ है। इसमें 5 अधिकरण, 12 अध्याय तथा 319 सूत्र है।

आपके अनुसार जिन अंशो से काव्य का निर्माण होता है, वे स्वतन्त्र अस्तित्व भी रखते हैं काव्य के निर्माण में 4 अंश माने जाते हैं।

1. शब्द 2. शब्दगुण 3. अर्थ 4. अर्थों का गुण

इन काव्य अंशियों के सम्मिलन से काव्य बनता है और जिससे काव्य का सौन्दर्य अथवा काव्य का मूल अभिव्यक्त होता है उसे प्रभाव गुण या पांचवा अंश माना जाता है। सौन्दर्यागाधिष्ठान के विषय में यह कथन उल्लेखनीय हे –

फूलों की सुन्दरता के लिए पौधों का रोपण होता है, सौन्दर्य का नहीं । इसके लिए बीज डालते हैं मिट्टी पानी तथा ऋतु की अनुकूलता का भी विचार किया जाता है। सौन्दर्य तभी प्रस्फुटित होता है जब उसमें पुष्पावर्तन होता है। काव्य के विषय में भी ऐसा ही समझना चाहिए। उसका बीजादि शब्द है।

गुण ही रचनागत वैशिष्ट्य है – विशेषोगुणात्मा तो पद रचंना काव्य का शरीर है और विशिष्टता उसकी रीति। इसका विशेषण गुणों की शब्दावली में भी सम्भव है अतएव रीतिगत्माकाव्यस्य और सब कुछ मिलाकर काव्य समग्र में सौन्दर्यता की प्रधानता होनी चाहिए, इसलिए काव्य ग्राह्मलंकारात् तथा सौन्दर्यमलकारः काव्य के मूल्य या सौन्दर्य की उपाधि के साधन हैं अलंकार, गुण, रीति आदि कारण है, जिनसे सौन्दर्य में अभिवृद्धि होती है परन्तु काव्य समग्र तभी सत्काव्य अथवा सिद्ध काव्य प्रमाणित होगा जब उसमें सौन्दर्य होगा।

जहाँ तक रस का प्रश्न है उसे काव्य का चरम कल माना जाता रहा है। आनन्द सुख और प्रसन्नता को उसमें समाविष्ट किया गया है। और सुन्दर होने पर ही वह रसादि वासना को उद्‌बुद्ध करता है – अभिनव गुप्त ने जिसे हृदयसवाद सुन्दर आदि कहा है रमणीयता ही सौन्दर्य है (पंडितराज जगन्नाथ) और इसी प्रकार रमणीय अर्थ का प्रतिपादक शब्द ही काव्य है।

इस प्रकार आचार्य कवियों ने ही नहीं, वरन् रीतिकाल के लगभग सभी आचार्यों ने अलंकार तत्व को नगण्य माना है। परन्तु उसे काव्यात्मा ने भी स्वीकार नहीं किया है।[1] अपितु अपनी परम्परा, स्वभाव और शक्ति के अनुकूल उनके अलंकारिक प्रयोग काव्य के शरीर को विभूषित करके सौन्दर्य अलंकार के धरातल पर रस रूप काव्यात्मा को उर्ध्वोन्मुखी बनाते रहे हैं। और इस प्रकार वे आचार्य सौन्दर्यकाल के गुणी ग्राहक तथा सौन्दर्यदृष्टा रससिद्धि कवि और आचार्य माने जाने योग्य हैं।

---

1. हिन्दी रीतिकाल में सौन्दर्य : ऊषा गंगाधरराव साजापुरकर

सौन्दर्य एवं कुरूपता :-

कला में एक ऐसी शक्ति रहती है जिसके द्वारा वह सामान्य जगत की तथाकथित कुरूप वस्तु को भी सुन्दर बना देती है।

मौलाना शिवली के अनुसार चित्रकला की दृष्टि से एक आसन्न प्रसवा गदही का चित्र उतना ही महत्वपूर्ण और कलात्मक हो सकता है जितना अम्बपाली या अफ़्रीको कोजिमा और मेरिना जुलोगा जेसी विश्वसुन्दरी का चित्र।[1]

पाश्चात्य सौन्दर्य-चिन्तन में अरस्तू के काल से कुरूप के संबंध में विचार विमर्श होता रहा है और दिन-प्रतिदिन उसे अपेक्षाकृत अधिक व्यापकता प्रदान की जाती रही है। अरस्तु ने कुरूप में हास्यास्पद की गिनती भी की है। किन्तु लेसिंग ने कुरूप को काव्य में केवल कौमिक या भयानक के प्रत्यक्षीकरण का साधन माना है। हीगेल के अनुसार कुरूप में कुछ-न-कुछ विकृति अवश्य रहती है, जैसे कुरूप चर्चा में कैरीकिचर का उदाहरण देते हुए इन्होंने चरित्र-चित्रण की विकृति को निदृष्ट किया है। शेजेन्को के अनुसार - कुरूपता सौन्दर्य का भावात्मक निषेध (पाजीटिव निगेशन) है।

अस्तु कुरूपता भी हमारी सौन्दर्य चेतना से संबन्धित है। व्ययदेश निर्धारण की दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि - कुरूपता उस वस्तु में है जो चाक्षुस, श्रावण, अथवा अन्य एन्द्रिय प्रत्यक्ष के उपरान्त

---

1. शेरूलअजम, मौलाना शिवली नोमानी

आश्रय की बोधवृत्ति या इन्द्रियों को अरुचिकर प्रतीत होती है। साथ ही साथ संसर्ग – सम्पर्क और पूज्य भाव के आरोपण से कुरूप भी आकर्षण बन जाता है। या उसकी अरुचिकता घट जाती है। पुनः विशिष्ट आन्तरिक गुण के कारण कुरूपवर्जना का भाव बदल जाता है। उदा० स्वर लालित्य के कारण काली कोयल और पांडित्य के कारण अष्टावक्र उल्लेखनीय है।

दूसरी बात यह है कि सुन्दर और कुरूप एक दूसरे के मूल्यों एवं सीमाओं का निर्धारण करते हैं शायद इसीलिए बाल्मीकि में राम के सौन्दर्य को अधिक प्रभविष्णु एवं सूर्पणखा की कुरूपता को अधिक विकर्षण बनाने के लिए सौन्दर्य और कुरूपता का सामानान्तर वर्णन किया है–

सुमुखं दुर्मुखी रामं वृत्तमध्यं महोदरी।
विशालाक्षं विरूपाक्षी सुकेशं ताम्रमूर्घटना।।
प्रीतिरूपं विरूपम सा सुस्वां भैरवस्वरा।
तरुणं दारुणं वृद्धा दक्षिणं वामभाषिणी।। (बाल्मीकि रामायण)

अतः सारांश स्वरूप यह कहा जा सकता है कि कुरूपता के प्रति तीव्र प्रतिक्रिया हमारी सौन्दर्य चेतना के लिए शुभकर है।

6. साहित्य और सौन्दर्य रसानुभूति से सम्बन्ध :–

सौन्दर्यानुभूति के विषय में आई०ए० रिचर्ड्स ने प्रिन्सिपल आफ लिटरटी क्रिटिसिज्म में यह मत व्यक्त किया है कि – मन की कोई ऐसी विशिष्ट दशा नहीं है जिसे हम सौन्दर्यानुभूति की अवस्था के नाम से

अभिहित कर सकते हैं।[1]

अतः जिसे हम सौन्दर्यानुभूति की अवस्था कहते हैं उसके कुछ विशिष्ट लक्षण होते हैं। जीव विज्ञान के अनुसार हमारे-ऐन्द्रिय ज्ञान और संवेदन मूलतः दो प्रकार के होते हैं – प्रोटोपैचिक और एपिक्रिटिक। ये दोनों त्वकचेतना के साधन और आधार हैं।

विशेषकर अभिनवगुप्त की मान्यता है कि सौन्दर्यानन्द को ब्रह्मानन्द नहीं कहा जा सकता, क्योंकि सौन्दर्यानन्द ब्रह्मानन्द से भिन्न कोटि का होता है। ब्रह्मानन्द की स्थिति में प्रज्ञा स्थिर हो जाती है। जिससे कला सृजन सम्भव नहीं है। अतः सौन्दर्यानन्द ब्रह्मानन्द से भिन्न स्थिति का होता हे। उसके साथ-साथ उनका दृष्टिकोण है कि सौन्दर्यानुभूति (जिसे भारतीय काव्यशास्त्र में प्रायः रसानुभूति कहा जाता है) व्यक्ति की वह नन्दतिक चेतना है जो बाह्य विघ्नों घातों अथवा प्रभावों से मुक्त रहती है। इस नन्दतिक चेतना का कोई बाह्य उद्देश्य नहीं होता है। यह मनुष्य की प्रयोजन हीन दशा है।[2]

An aesthetic experience, however, the feelings and facts of everyday life even if they are transfigured, are always persent. In respect of its proper and irriducible character, therefore, which distinguishes if from any form of ordinary consciousness aesthetic experience is not of a discursive order.

---

1. साधारणतः सौन्दर्य शास्त्रियों ने सौन्दर्यानुभूति की अवस्था में इन चार प्रकार के उपादानों को स्वीकार किया है –ह्रादेश, ज्ञानोश, संस्कारांश तथा व्यापारांश। आधुनिक सौन्दर्यशास्त्री व्यापारांश और अभिव्यक्ति को ही महत्व देते हैं।
2. The Aesthetic Experience According to Abhenaw Gupta.

अस्तु सौन्दर्यानुभूति को समझने के लिए कलानुभूति का विवेचन आवश्यक है। पूर्व काव्यशास्त्रियों के अनुसार कलानुभूति एक ऐसी सुखद अनुभूति है जो सत्य मिथ्या के विधि निषेधों से ऊपर है। अतः कलानुभूति वस्तु विशेष के संवेद्य अंशों के चयन पर जीवित रहती है। इसलिए सुखदायी और रसात्मक होती है। भारतीय दृष्टि से भी कला का आशु अथवा समीपीमूल्य विशिष्ट सुख (आनन्द) ही माना गया है।

अभिज्ञान की दृष्टि से निर्वैयक्तिकता का अभ्युदय कलानुभूति का सर्वोपरि लक्षण है। सामान्य अनुभूतियों में मनुष्य अपने व्यक्तित्व और वैयिक्तकता की परिधि से आबद्ध रहता है। किन्तु कलानुभूति लक्षणों में वह इन सीमाओं से ऊपर उठ जाता है। अतः कलानुभूति एक विशिष्ट संवित् है, जो भावक में सत्वोद्रेक पैदा करती है।

दूसरी बात यह है कि कलानुभूति की दो मुख्य किस्में हैं– उपजात व प्रेरित। उपजात कलानुभूति का सम्बन्ध करयित्री प्रतिमा से अतः सहृदय से है। प्रथम कला सृष्टि के क्षणों की अनुभूति है और द्वितीय कला दर्शन के क्षणों की कलानुभूति ही विकास और उपचिति के मात्रा के अनुसार हृदय संवाद तन्मयीभवन योग्यता और रसानुभाव की अवस्थाओं में बदलती रहती है। दूसरे प्रकार की कलानुभूति भोगीकरण प्रधान होती है। जबकि उपजात कलानुभूति में भोग से अधिक महत्त्व इन तीनों कार्यों में होता है – अनुभूति का निबड़ीकरण, अनुभूति का मार्जन और अनुभूति की व्याख्या।

कलानुभूति के दो प्रकार स्पष्ट हैं– सहज और संकुल। शैशवावस्था और किशोरवय की कलानुभूति अथवा प्रौढ़ व्यक्ति की भी। (फिक्शेसन से उद्भूत) शिशु अथवा कैशोर कलानुभूति सहज होती है। इसके विपरीत जो व्यक्ति जितना ही परिपक्व बुद्धि और आवेष्टनों के प्रति सजग होता है उसकी कलानुभूति उतनी ही संकुल होती है।

उपर्युक्त अध्याय के सम्पूर्ण विवेचन का निष्कर्ष रूप संक्षेप में निम्नांकित ढ़ंग से व्यक्त किया जा सकता है–

(क) सौन्दर्य काल अन्य कलाओं का अपरिहार्य तत्व है।

(ख) सौन्दर्य सृजन और सौन्दर्य भावन में सृष्टा और सहृदय की स्वाद रुचि का सापेक्षिक महत्व है।

(ग) कुछ विचारक सौन्दर्य को वस्तुनिष्ठ और कुछ आत्मनिष्ठ मानते हैं। किन्तु यह निर्विवाद रूप से सत्य है कि सौन्दर्यबोध का सम्बन्ध अंशतः एन्द्रिय प्रत्यक्ष से अवश्य है। तथा इसके/ सौन्दर्य ग्रहण में अन्तःकरण का योग अपेक्षित है।

(घ) सौन्दर्यचेतना का बहुत ही ऋजु सम्बन्ध हमारे भावात्मक संवेगों के साथ है।

(च) प्रायोगिक सौन्दर्य शास्त्र में विवेचित सौन्दर्य के साथ काव्य एवं अन्य ललित कलाओं का सीधा सम्बन्ध नहीं है।

---

1. सौन्दर्य शास्त्र के तत्व : डॉ0 रामकुमार मित्तल पृ0 106

(छ) कला चिन्तन की दृष्टि से सौन्दर्य के प्रति भारतीय दृष्टिकोण ही सर्वोत्तम प्रतीत होता है। क्योंकि इसमें आध्यात्मिक ह्रास, आन्तरिकता और प्रकृति प्रेम को सर्वाधिक महत्व दिया गया है।

(ज) उदात्त सौन्दर्य का चरम रूप है।

(झ) सौन्दर्यानुभति का आनन्द से अनिवार्य सम्बन्ध है।

(ट) सौन्दर्यानुभूति जब सृजन की ओर सक्रिय होती है तब वह कलानुभूति बन जाती है।

द्वितीय अध्याय

अध्याय –2

शिवानी एवं उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य का परिचय

शिवानी का जन्म सौराष्ट्र प्रान्त के राजकोट में 1923 ई0 में हुआ। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा शान्ति निकेतन में हुयी, तदुपरान्त उन्होंने कलकत्ता विश्वविद्यालय से सम्मान सहित बी0ए0 की उपाधि प्राप्त की। पति उच्च पद पर अधिकारी के रूप में कार्यरत रहे। जो अब दिवंगत हो चुके हैं। बेटी मृणाल पाण्डेय भी हिन्दी की प्रतिष्ठित लेखिका हैं। आपने विदेश की यात्राएँ भी की हैं।

शिवानी गौरा पंत के नाम से लिखती थीं, बाद में शिवानी के नाम से ही प्रतिष्ठित हुयीं। रति विलाप, लाल हवेली, स्वयं सिद्धा,
पुस्पाहार, अपराधिनी, मेरी प्रिय कहानियाँ, आपके प्रमुख कहानी संग्रह हैं। मायापुरी, चौदह फेरे, कृष्णकली, शमशान चम्पा, विषकन्या, भैरवी, फैंजा, चल खुसरो घर अपने, आपके प्रकासित उपन्यास हैं। वातायन, चार दिन की, आमोदर, शान्ति निकेतन, गवाक्ष आपके संस्मराणात्मक रेखाचित्र एवं रिपोर्ताज हैं। आधुनिक युग में जीवन यथार्थ को रूमानी प्रेम सौन्दर्य से आप्लावित करने वाली शिवानी हिन्दी कथा साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान बनाने वाली प्रतिनिधि कहानीकार हैं। उनका स्वजा संसार परिमाण और गुणात्मक दोनों दृष्टियों में महत्वपूर्ण है।

शिवानी का रचना संसार –

1. कालिंदी
2. अपराधिनी
3. मायापुरी
4. चौदह फेरे

5. रति विलाद

6. विष कन्या

7. कैंजा

8. हे, दत्तात्रेय

9. सुरंगमा

10. जातक

11. भैरवी

12. कृष्ण वेणी

13. यात्रिक

14. चल खुसरो घर अपने

15. आमोदर शान्ति निकेतन

16. विवर्त

17. स्वयं सिद्धा

18. गैंडा

19. माणिक

20. पूतों वाली

21. अतिथि

22. चरैवेति

23. कस्तूरी मृग

24. रथ्या

25. वातायन

26. उपप्रेती

27. श्मशान चम्पा

28. एक थी रामरती

29. मेरा भाई

30. चिरस्वयंवरा

31. करिए छिमा

उपन्यास –

बड़े उपन्यास –

मायापुरी	1957
चौदह फेरे	1960
कृष्णकली	1962
भैरवी	1969
श्मशान चम्पा	1972
सुरंगमा	1979

छोटे उपन्यास –

1.	कैंजा	1975
2.	विषकन्या	1977
3.	रतिविलाप	1977
4.	माणिक	1977
5.	रथ्या	1977
6.	गैंडा	1978
7.	किशनुली का ठॉट	1979

शिवानी के कथा साहित्य का सामान्य परिचय

हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल में अनेक परिवर्तन हुए हैं। जिसका श्रेय इस काल की परिवर्तन शील रचनाओं एवं विधाओं को है। कहानी उपन्यास संस्मरण रेखाचित्र रिपोर्ताज इत्यादि विधाओं का प्रचलन इसी काल में हुआ।

आधुनिक काल के लेखक एवं लेखिकाओं में शिवानी का नाम आज भी लोकप्रिय लेखिका के रूप में चर्चित है। इनका जन्म सन् 1923 ई0 में राजकोट गुजरात में हुआ था, शान्ति निकेतन और कलकत्ता विश्व विद्यालय से आपने शिक्षा पाई। आपकी रचनाएँ प्रमुख पत्र – पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती हैं।

शिवानी की कहानियों में अधिकतर पर्वतीय समाज से सम्बन्धित समस्याओं प्रथाओं और मनोभावों का चित्रण किया गया है। आपने भावात्मक और सामाजिक–आर्थिक समस्याओं से जूझती टकराती नारी को बड़े रोचक और मार्मिक रूप में चित्रित किया है। अधिकांशतः कहानियों के कथानक आपके व्यक्तिगत अनुभवों से सम्बन्धित (आधारित) हैं। आपकी कहानियों में कथा का ताना बाना या तो घटना को प्रधानता देते हुए बुना गया है या फिर किसी चरित्र को। चरित्र प्रधान कहानियाँ प्रायः किसी गम्भीर सामाजिक अथवा मानसिक समस्या का चित्र निरूपित करती हैं। जिसमें प्रायः उच्चवर्गीय चरित्र को सर्वाधिक प्राथमिकता दी गई है।

नारी और पुरुष दोनों के ही जीवान्त शब्दचित्र उभारने में आप अप्रतिम हैं। अगर यह कहा जाय कि बंगला कथा शैली का आप पर व्यापक प्रभाव पड़ा है, अनुचित नहीं होगा। इसमें कथावस्तु के अनुरूप आञ्चलिक शब्दावली, मुहावरों, एवं लोकोक्तियों का प्रयोग मिलता है। कहानी की सटीक उपमाओं एवं विशिष्ट वातावरण का प्रभाव पाठक के मानस पटल पर छाया रहता है। आपकी कहानियों की विशेषता यह भी है कि उनकी व्यंग्यशीलता सामाजिक रूढ़ियों, विडम्बनाओं और बाह्याडम्बरों पर बडे मनोरम एवं शालीनपूर्ण ढंग से व्यंग्य करती हैं।

शिवानी के द्वारा लिखित साहित्य सृजन की प्रमुख विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए उन्हें अपने शब्दों में निम्नांकित ढंग से व्यक्त किया जा सकता है –

मनुष्य का जीवन भावनाओं से ओत–प्रोत होता है, भावनाओं का सम्बन्ध अर्न्तमन के साथ–साथ बाह्य जगत से (समष्टि) से भी होता है। जिसका प्रभाव दाम्पत्य जीवन में सर्वाधिक प्रभावी होता है।

कभी–कभी जब किसी व्यक्ति का दाम्पत्य जीवन उसकी अपेक्षा अधिक उम्र के अन्य (नारी) से जुड़ जाता है तो उसके सन्मुख आने वाली प्रमुख समस्याओं का निरूपण शिवानी ने किस प्रकार किया है उसका चित्रण निम्नांकित ढंग से व्यक्त किया जा सकता है।

शिवानी के **"करिये छिमा"** कहानी में शेखर का अनुभव इससे अलग नहीं है। अपने से बड़ी उम्र की कमला नामक महिला से जुड़ जाने पर वह पूर्ण रूप से स्वयं को परिस्थितियों के अनुकूल नहीं बना पाता, जिसका परिणाम उसके अन्तर्मन में रिक्तिका के रूप में परिलक्षित होने लगती है। और यही कमी उसे कुमार्गगामी बना देती है। कमला के बाहर चले जाने पर शेखर किशोरी के प्रति आकषर्ण को नहीं रोक पाता, क्योंकि किशोरी की उम्र शेखर के अनुकूल होती है। उसे किशोरी के समपर्ण में उस सम्पूर्णता की प्राप्ति होती है जो कमला के उपस्थित होने पर भी अपूर्ण एवं रिक्त सी प्रतीत होती थी। इस अल्पाविधि के अन्तराल में हुए परिवर्तन को जब कमला वापस आकर देखती है तो इस परिवर्तित स्थितियों के प्रति वह सहमत नहीं हो पाती जिसका परिणाम किशोरी की हत्या एवं शेखर के नफरतपूर्ण व्यवहार के रूप में सामने उपस्थित होता है।

"दो बहने" नामक कहानी में शिवानी ने अपने विचारों को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि जया–विजया दो बहने जो कि अनुपम सुन्दरियाँ हैं परन्तु जया अपनी छोटी बहन विजया के प्रति अधिक कर्त्तव्य शील है। इक्तिफाकन् विजया को देखने आया केशव जया को पसन्द कर जाता है, जया उसे समर्पित होकर भी विजया के आगे अपने को स्पष्ट नहीं कर पाती, विजया भी मन ही मन केशव से प्रभावित हो जाती है। परन्तु केशव इन दोनों को अस्वीकार करके अन्य लड़की से विवाह कर लेता है। जिसका प्रभाव दोनों बहनों पर एक साथ पड़ता है, और विजया के आगे जया और केशव के सम्बन्ध भी उद्घाटित हो जाते हैं। इस प्रकार केशव के कारण इन दोनों के मध्य दरार पैदा हो जाती है।

"केया" कहानी के अनुसार कभी – कभी नारी की समस्याओं / व्यवहारिक जीवन के परिवर्तन के लिए स्वयं उसका पति उत्तरदायी होता है।

इस रचना में नलिनी का यही वृत्त है। विवाह के पूर्व वह मृगांक की स्वप्नप्रिया / प्रेमिका के रूप में रहती है। जिसके कारण पति रूप में मानस पटल पर अंकित रहता है लेकिन दुर्भाग्य से विकृत पुरुष के साथ वैवाहिक गठबन्धन हो जाने पर एवं पद्मा से उसके (पति) अवैध सम्बन्ध की जानकारी नलिनी के विचारों को खण्डित कर देती है। इन्हीं मन:स्थितियों के मध्य उसे अपने पूर्व स्नेही मृगांक का पत्र प्राप्त होता है और मृगांक को साथ मिल जाने पर वह अनुभव करती है कि वह अपने विलासी पति एवं उसकी प्रेमिकाओं की कटु आलोचनाओं से मुक्त हो गई।

"उपहार" कहानी के कथानक के अनुसार नारी के दाम्पत्य जीवन रूपी नंदन वन को भस्मीभूत करने का एक प्रमुख कारण अविश्वास एवं पारस्परिक संदेह भी है।

उपहार कहानी में नलिनी ऐसी ही भयावह यंत्रणा पाती है। दुर्भाग्यवश चलती गाड़ी में उसका लुट जाना उसके पति रघुनाथ के मन में सन्देह का बीजारोपण कर देता है। और विषवृक्ष उस समय पुष्पित एवं पल्लवित होने लगता है। जब यही नपुंसक पुरुष अपने ही शिशु के लिए भी संदेहशील हो जाता है। जबकि यही संदेह की अवधारणा नलिनी के लिए अत्यधिक घातक हो जाता है। जिसका परिणाम रघुनाथ के गृहत्याग के रूप में स्पष्ट होती है। इसी के कारण नलिनी भी भारत छोड़ देती है। यह शंशय तब छिन्न भिन्न होता है

जब रघुनाथ एवं नवजात शिशु के चिन्ह चक्र समरूप मिलते हैं।

"तर्पण" कहानी की घटनाएँ उपर्युक्त घटनाओं से कुछ अलग रूप में परिलक्षित होती दिखाई देती है। इस रचना में पुष्पा प्रतिशोध के इसी धरातल पर समिधा के समान जलती हुई दिखाई देती है। इस कहानी में भोलानाथ नामक पुरुष का दृश्य कुत्सित कार्यों में लिप्त दिखाया गया है जो पुष्पा को अल्पायु में ही बालिका से स्त्री रूप में प्रदान करता है। जिसके परिणामस्वरूप पुष्पा को कलंकित जीवन ढोने के साथ–साथ कठोर यातनाओं को भी सहन करना पड़ता है।

फलतः पुष्पा अपनी कठोर साधना के पश्चात् उच्च पद को प्राप्त करती है तथा पीताम्बर के माध्यम से अपने भविष्य को सुधारने का प्रयास करती है। ठीक इसी समय कहानी में भोलानाथ का दृश्य पुनः स्पष्ट हो जाता है जिसके परिणामस्वरूप पुष्पा भोलानाथ की हत्या करके अपनी इच्छाओं को पूर्णतः प्रदान करती है।

नियति के विधान कितने विचित्र होते हैं। किसी को तीसरा होने का दण्ड देने वाला व्यक्ति जब स्वयं तीसरा बनकर उस तीसरे के सामने अपराधी बनकर उपस्थित होता है और दण्ड पाने के बजाय क्षमा पा जाता है तब नियति का यह विधान अपनी न्यायसंगिक स्थिति सिद्ध कर जाता है।

"करिए छिमा" नामक कहानी में श्रीधर एवं हीरावती के सामने ठीक इसी प्रकार की स्थिति को शिवानी ने दर्शाया है। श्रीधर

गाँव का प्रमुख व्यक्ति है उसकी पंचायत में हीरा को पेश किया जाता है और दण्ड स्वरूप उसे ऐसा ऐसा दण्ड दिया जाता है, कि उसका व्यवहारिक जीवन ही परिवर्तित हो जाता है। आत्महत्या के प्रयास पर भी वह बच जाती है। इसी समय उसे (हीरा) श्रीधर के साथ कई दिनों तक गहन कन्दरा में रहना पड़ता है। जहाँ हीरा श्रीधर की अंकशायिनी होने से नहीं बच पाती, अतः इसका परिणाम एक शिशु के रूप में उपस्थित होता है। अतः श्रीधर की मान मर्यादा को निष्कंटक एवं रक्षित करने के लिए वह पुत्र की हत्या कर देती है।

"लाल हवेली" नामक कहानी में शिवानी ने सुधा नामक एक नायिका को चुना जो लाल हवेली के प्रतिष्ठित वकील की पत्नी थी, लेकिन परिवर्तित काल में वही ताहिरा बनती है रहमान अली की बीबी। वह तीन दिन के लिए पाकिस्तान से भारत आती है परन्तु पति की हवेली में उसका साक्षात्कार करते समय वह एक और अनुभव पाती है।

"शिबी" नामक कहानी में शिवप्रिया एक ऐसी ही महिला है जो एक बार कोठे के जीवन से जुड़कर विवाह संस्था को अस्वीकार कर देती है और समाज के प्रतिष्ठित पुरुष वर्ग से सम्बन्ध जोड़कर अपने जीवन को सुविधामय बनाने लगती है। परन्तु इतना सब करते हुए भी उसका केन्द्र धरणीधर होता है। जिसके शिशु का पालन पोषण शिवप्रिया अपने गम्भीर रोग में भी करती है।

पिटी हुई गोट नामक कहानी में शिवानी ने द्रोपदी की कल्पना करते हुए चंदा नामक एक ऐसे चरित्र को चुना है, जिसकी उम्र 18 वर्ष है तथा उसके (चंदा) 60 वर्षों में पति उसे दीवाली के रोज

जुएँ में हार जाता है। और वह (गुरूदास) बिना किसी विरोध के विजयी महिम के पास छोड़ जाता है। महिम चंदा के प्रति पहले से आकर्षित रहता है, अतः उसे लगता है कि वह सर्वश्रेष्ठ निधि पा गया है। जबकि चंदा न तो महिम का विरोध कर पाती है न ही सहयोग, तथापि वह महिम को समर्पित हो जाती है। और वह पाती है उस सुख की सर्वप्रथम उपलब्धि जिसे उसे अपने पति से कभी नहीं मिल सका था।

गहरी नींद नामक कहानी में उमा यादव के सामने यही द्वन्द्व है वह अपने पति की तीसरी पत्नी होने पर भी अपने और अपने पति के आगमन को सहन नहीं कर पाती, जब वह एक रात उसे अपने पति के साथ अंकशायिनी के रूप में देखती है तो उसे लगता है कि उसके जीवन की अमूल्य निधि लुट गई है। परिणामतः वह आत्महत्या कर लेती है।

वैश्या माँ की बेटी अपने प्रथम पुरुष को ही अंतिम पुरुष मानकर शेष जीवन प्रतीक्षा के पल गिनते – गिनते व्यतीत करती है। इसका शिल्प विधान शिवानी के धुँआ नामक रचना में देखा जा सकता है। इस रचना में राजुल एवं लालचन्द ऐसी ही विपरीत दिशाओं के व्यक्ति हैं। राजुल वैश्या माँ की पुत्री है जो लखनऊ में बेनजीर के पास संगीत और नर्तन का प्रशिक्षण ले रही होती है, यहीं वह लालचन्द की ओर आकर्षित हो जाती है जो विवाहित होता है और अपनी कुरूप पत्नी से मिली तृष्णा को मिटाने के लिए रजुला में खो जाता है, दुर्भाग्यवश लालचन्द शीघ्र ही स्वर्गवासी हो जाता है, चूँकि रजुला लालचन्द के

प्रणय निवेदन में अपने प्रथम पुरुष का साक्षात्कार पा चुकी है। अस्तु वह माँ के शारीरिक व्यवसाय को इंकार करके नेपाली बाबा के आश्रम में दीक्षा ले लेती है।

शिवानी की रचनाओं में उल्लेखित नारी अपनी सम्पूर्ण विपन्नता में भी प्रथम पुरुष के संस्मरणों से आजीवन जुड़ी रहती है ये स्थितियाँ आज अनेक सन्दर्भों में परिलक्षित होती दिखाई देती है।

अनाथ कहानी में भी ऐनी और बनर्जी का कथानक लगभग इसी प्रकार का दृश्य उपस्थित करता है। एनी जो कि एक कुष्ठग्रस्त परिवार की कन्या है अपने विपुल सौन्दर्य से सम्पन्न परिवार के बनर्जी को मोहित कर लेती है। कालान्तर में दोनों का विवाह भी सम्पन्न होता है। तथापि बनर्जी अन्यत्र जाकर पुनः विवाह कर लेता है। फिर भी ऐनी बनर्जी को नहीं भूल पाती है और सम्पूर्ण जीवन एकाकीपन के जीवन में व्यतीत करती है।

जीवन में ऐसे भी अनेक संयोग होते हैं कि पुरुष प्राणस्वरूप प्रिय पत्नी से विलग होकर अन्य महिला से विवाह करता है। परन्तु यदि इक्तिफाकन यदि वही पूर्व पत्नी पुनः नवीन दाम्पत्य के सन्मुख उपस्थित हो जाये तो क्या स्थिति होती है। इसका निरूपण भी महादेवी जी की कलम से हुआ है।

"लाटी" रचना में कप्तान जोशी ऐसे ही प्रश्नों का घेराव पाते हैं उनकी पूर्व पत्नी बानो असाध्य रोग से संत्रस्त होकर आत्महत्या

कर चुकी होती है। मि० जोशी दूसरा विवाह प्रभा से करते हैं। कई वर्षों बाद जब प्रभा के साथ मि० जोशी उसी पुराने स्थान पर पहुँचते हैं तो वे उस समय विस्मय विभूड़ हो जाते हैं जब अपने सामने बानों को गूँगी वैष्णवी के रूप में पाते हैं। वे अपने मन में अन्तर्द्वन्द्व सा अनुभव करने लगते हैं। ये स्थिति उनके लिए अधिकाधिक विषम हो जाती है। क्योकि जिस बानों को जोशी तन–मन से चाहते थे, उसे बुलाने में भी उन्हें संकोच हो रहा है।

रति विलाप नामक कहानी का कथानक उपर्युक्त स्थितियों से थोड़ा अलग-अलग दर्शाया गया है। इस कहानी में हीरा एक तीसरा आदमी है जो कि सीधा जेल से आता है। अनुसूया एक पतिहंता है। अतः दोनों की परिस्थितियों में सामंजस्य बिन्दु एक सा है। अस्तु दोनों में सह सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। इसी धरातल पर अनुसूया का बूढ़ा श्वसुर भी उससे परिणय सम्पन्न कर लेता है। अतः प्रणय का पुष्प दोनों में सुवासित होने लगता है। यह तथ्य गृहत्याग के समय श्वसुर द्वारा लिखे गये पत्र से उद्घाटित होती है। परिणामस्वरूप अनुसूया पुनः पति हत्या करती है और चौथे व्यक्ति को समर्पित हो जाती है।

इसी प्रकार नारी जीवन की समस्याओं को उद्घाटित करते हुए शिवानी "अभिनय" कहानी में शेखर एवं रजनी को तीसरे व्यक्ति के आतंक से आतंकित दशार्त हैं। और शेखर व रजनी के द्वारा पुनः उन्हीं स्थितियों की परिणति दिखाती हैं।

इस कहानी में रजनी शेखर के बड़े भाई की विधवा पत्नी है परन्तु वह किसी भी धरातल पर अपने को पति के साथ

बेवा हुआ नहीं पाती है। इसीलिए शेखर के साथ सम्बन्ध बनाते समय उसके मन में द्वन्द्व का भाव पैदा नहीं होता। दोनों का आपस में खुलना रजनी में एक बिन्दु बनकर रूक जाता है। जहाँ दोनों निर्लज्जता से परस्पर खुले आम खुलते तो हैं। लेकिन परस्पर स्वीकार नहीं कर पाते। परिणामतः रजनी अपने आपको शेखर से अलग कर लेती हैं। परन्तु जब जीवान्ती शेखर के साथ शामिल होती है तो यह रजनी के लिए असहनीय हो जाता है।

"पुष्पहार" का नायक एक ऐसी ही प्रक्रिया में है वह वह एक प्रतिभाशाली जन नेता है। दुर्गी से अचानक भेंट हो जाने पर उसे स्मरण हो आता है कभी यही सुन्दरी उसके लिए प्रस्तावित हुई थी, और उसने यह प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया था, अतः वह दुर्गी के प्रति ऐसा प्रबल आकर्षण का अनुभव करता है कि उसे अपने प्राणों का केन्द्र बिन्दु बना लेता है। जब दुर्गी एवं कथानक के सम्बन्ध परस्पर गहराने लगते हैं उसी समय दुर्गी के पति अवरोधक के रूप में उपस्थित हो जाता है जिसके परिणामस्वरूप कथानायक दुर्गी से सम्बन्ध विच्छेद कर लेता है। इसके पश्चात इक्तिफाकन् जब कई वर्षों बाद वह (कथानायक) पूर्व स्थान पर पहुँचता है तो दुर्गी को किसी अन्य व्यक्ति के साथ पाता है।

नारी स्वभाव का विश्लेषण/वर्गीकरण करते हुए लेखिका ने स्वयं अपने विचारों को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि नारी जब एक समूह में घुलमिल जाती है तो अन्य किसी व्यक्ति के आगे खुलना और क्रमशः अन्य व्यक्तियों के सम्पर्क में खुलते जाना अन्ततः अर्थहीनता को प्रकट करने लगती है।

तोप कहानी में तोप महिला का चरित्र चित्रण इसी दिशा में दिखाया गया है। तरुणाई के आगमन होते ही वह अनेक पुरुषों के सम्पर्क में अंतिम सीमा तक खुलने का अनुभव पा जाती है। उसके लिए पुरुष मात्र एक आवश्यकता से अधिक सिद्ध नहीं हो पाता। इसी श्रंखला में राजेन्द्र का आना एवं उसके मृत्यु के तुरन्त बाद ही सेम्युअल का शामिल हो जाना क्रमशः इसी तथ्य को उद्‌बोधिक करता है।

जब पारस्परिक सम्बन्ध जुड़ने की प्रक्रिया खण्डित होती जाये, तब व्यक्ति की धारणा तनाव युक्त हो जाना स्वाभाविक ही है। शर्त कहानी में पहले धरातल पर रमा उपस्थित है और दूसरे धरातल पर लीला, रमा और आनन्द अपने सम्बन्धों की भूमिका तैयार ही करते हैं कि उसमें लीला का प्रवेश हो जाता है जिसके कारण रमा को परास्त होना पड़ता है जबकि लीला विजयी मुद्रा में आनन्द को प्राप्त करती है।

यही पराजय रमा के अन्र्तमन में आक्रोश बनकर छा जाता है। बरसों बाद जब रमा अपने ही नगर में लीला को पाती है इस स्थिति में पुनः रमा लीला को पराजित करने की चेष्टा करती है। जहाँ उसका प्रयास पुनः निरर्थक रह जाता है।

"भूल" नामक कहानी को विश्लेषित करते हुए लेखिका का कथन है कि कभी - कभी भूलवश प्रथम व्यक्ति का स्थान गौण हो जाता है एवं अन्य व्यक्ति का स्थान प्रथम जिसका प्रभाव अन्य व्यक्ति पर परिलक्षित होता है।

ऐसी ही कुछ स्थितियाँ गिरीश तिवारी के सामने उस समय उपस्थित हो जाती हैं जब वह जुड़वा बहनों में से किसी एक के साथ दाम्पत्य बंधन स्थापित करना चाहता है। अनजाने में जिसे स्वीकार करना चाहता है, उससे न कहकर अन्य से प्रणय निवेदन कर बैठता है। लेकिन जब विवाह की स्थिति आती है तो गिरीश पुनः धोखा खा जाता है। और स्थापित स्थितियाँ पुनः विचलित हो जाती हैं।

प्रणय का फूल एक बार प्राणों पर टांका जाने के बाद भले ही उतर जाये परन्तु गन्ध प्रायः आजीवन प्राणों पर छायी रहती है। भले ही व्यक्ति अन्यत्र जुड़ जाये, परन्तु जब भी पूर्व गन्ध का झोंका आता है। व्यक्ति तीसरे की उपस्थिति भूलकर उसी पहले को अपने निकट उपस्थित पाता है। शायद नामक रचना में शिवानी ने लगभग इसी प्रकार का चित्र उपस्थित किया है। तारी नामक कथानक का प्रेम कुसुम से दर्शाया गया है जिसमें कुसुम स्वंयं केवल तारी से विवाह करना चाहती है लेकिन परिस्थितियों के वशीभूत होने पर तारी का अन्यत्र जाना एवं कुसुम का अन्य व्यक्ति से विवाह हो जाता है। वर्षों तक एक दूसरे के स्वप्न संजोए रहने पर भी जब मिलते हैं, परस्पर पहचान नहीं पाते, तथापि पत्नी की उपस्थिति में भी वह उस प्राणदायिनी प्रेमिका के अमृत रूप समर्पणों से जीवन जीने की प्रेरणा पाता है।

अपने स्वप्न पुरुष से विवाहित होना वास्तव में एक सौभाग्य की बात है। लेकिन यदि यही पुरुष विवाहोपरान्त अनेक नारी के सम्बन्ध की बात पत्नी के लिए असहनीय पीड़ादायिनी के रूप में परिलक्षित होती प्रतीत होती है।

"मौसी" कहानी में तिला इसी पृष्ठभूमि पर अपने बिग्रेडियर पति मि0 वेदी के प्रति घृणास्पद व्यवहार करती है। वह अपने परिवार से विद्रोह कर इस पुरुष को स्वीकार करती है। परन्तु पाती है कि उसके बहुगामी संस्कार उसकी उपस्थिति में भी अन्य स्त्रियों को पा जाते हैं। इस बिन्दु पर तिला आत्मग्लानि से भर जाती है।

"गैंड़ा" कहानी में होड़ की ऐसी ही प्रतियोगिता है। राज और सुवर्णा बचपन से ही इस दौड़ में है। राज ने सदा ही प्रत्येक धरातल पर उसे उपदस्थ किया है। विवाह के बाद दोनों के प्रति एक ही जग नियुक्त होते हैं। राज अपने विद्रूप पति के कारण पहले से ही कुण्ठित है परन्तु सुवर्णा के सुदीर्घ सुन्दर रोहिताश्व की तुलना में वह हीनभावना से अब भी ग्रस्त हो जाती है। पति के स्थानान्तरित होने के बावजूद वह भी सुवर्णा के बंग्ले पर रहने लगती है तथा बच्नों को नर्सरी में रखते हुए भी उसके शयनकक्ष में प्रवेश पाने लगती है और इस प्रकार राज और रोहिताश्व एक हो जाते हैं तथा सुवर्णा पुनः पराजित होती है। जिससे प्रतिशोध की पूर्णता के लिए जादू–टोने का सहयोग लेकर राज को तड़प–तड़प कर दम तोड़ने के लिए बाध्य कर देती है।

ठीक इसी प्रकार का एक दृश्य शिवानी ने **"भीलनी"** नामक कहानी में प्रस्तुत किया है, इसमें दो बहनें एक पुरुष को साथ–साथ पाती हैं। एक विवाह के धरातल में दूसरी प्रणय के धरातल में परन्तु यही स्थित इतनी विस्फोटक हो जाती है कि उसका अन्त

हत्या, आत्महत्या के रूप में उपस्थित होती है। जबकि तीसरा व्यक्ति आजीवन कारावास के लिए दण्डित होता है।

इस कहानी में बड़ी बहन सुहास एवं उसका पति गौतम एवं छोटी बहिन विलास दण्डित होते हैं। सुहास अधिक सुन्दर नहीं है तथापि गौतम को पाकर सुखी है। उसके प्रसव के समय विलास का आना एवं उसका गौतम से घुलना मिलना ही इसका प्रमुख कारण बनता है। जबकि सुहास तीसरे व्यक्ति को स्वीकार नहीं कर पाती है और पतिहंता, आत्महंता बनती है परन्तु विलास दो के मध्य तीसरे की भूमिका के कारण आजीवन सत्रस्त रहती है।

"चलोगी चन्द्रिका" नामक रचना में शिवानी ने इसी प्रकार का दृश्य उपस्थित हो जाता है। चन्दवल्लभ एवं चन्द्रिका का धरातल लगभग इसी प्रकार का है जिसमें चनदबल्लभ अपनी पत्नी के कारण एवं चन्द्रिका अपने पति के कारण परस्पर दूर हो जाते हैं। परन्तु कालान्तर में पुनः अवतरित हो जाते हैं परन्तु प्रणयबिन्दु तक पहुँचते – पहुँचते पुनः अलगाव हो जाते हैं।

"ज्येष्ठा" नामक रचना में हरिप्रिया की भूमिका इसी प्रकार की है। जिसमें उसे अपने लक्ष्य की प्राप्ति हेतु कई व्यक्तियों के व्यवधान का सामना करते हुए काफी लम्बी यात्रा करनी पड़ती है। जो कथा लेखिका का मूँगा भी चुरा ले जाती है। जो किसी वैश्या के पास से उसको प्राप्त हुआ था। ऐसा माना जाता है कि वैश्या कभी विधवा नहीं होती है और अखण्ड सौभाग्य का प्रतीक बन जाता है। जिसे पाकर हरिप्रिया देवेश को खोने के बाद एक क्रमहीनता में अनेक पुरुषों को समर्पित होने लगती है।

"**मन का प्रहरी**" नामक रचना में मधुकर और अनुराधा एक ही आयु के धरातल पर पारस्परिक पहचान को अतीव गम्भीरता से ग्रहण करते हैं। अनुराधा का पिता इस धरातल पर अवरोधक बनकर इस गम्भीरता को नष्ट कर देता है। जिसके कारण अनुराधा अपने से कम उम्र के प्रियतम महंती से विवाह करती है। परन्तु पुनः मधुकर को समर्पित होने लगती है।

इस बिन्दु पर प्रियतम मंहती अपने और अनुराधा के बीच मधुकर का हस्तक्षेप पर न केवल हस्तक्षेप करता है, बल्कि अनुराधा में आ रहे परिवर्तनों के कारण स्वयं को तिरस्कृत सा अनुभव करने लगता है।

कहीं – कहीं तीसरे व्यक्ति की भूमिका माँ के कारण हो जाती है। "तीन कन्या" नामक कहानी में माँ की इसी प्रकार की भूमिका है। जिसमें दो बड़ी बहनों के अविवाहित होने के कारण तीसरी को उपयुक्त वर मिलने जाने पर भी माँ बेबी को प्रतुल से मिलने नहीं देती, वह बेबी और प्रतुल के बीच ऐसी अवरोधक बनती है जो बेबी के कहीं और जुड़ने की सम्भावनाओं को समाप्त कर देती है।

विवाह के पूर्व कई व्यक्तियों से सम्बन्धित होना भी नारी जीवन को हस्तक्षेप से ग्रस्त कर देता है, इसका उदाहरहण शिवानी के "**चन्नी**" नामक रचना से मिलता है।

"चन्नी" कहानी में "चन्नी" की यही दशा है। विवाह से पहले उसके सम्बन्ध कई पुरुषों से रहे हैं। यही सम्पर्क योगेश से विवाहित होने पर उसके निश्चित बन रहे जीवन को अनिश्चित बना देते हैं। पूर्व सम्बन्धों की प्रेत छाया उसके दाम्पत्य पर मंडराने लगती लगती है। परिणाम स्वरूप उसे घर छोड़कर पुनः विवाह पूर्व धरातल पर आने के लिए विवश होना पड़ता है।

अतः उपर्युक्त सम्पूर्ण विवेचन के निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है नारी जीवन को प्रभावित करने वाला प्रमुख कारण तीसरे व्यक्ति का समावेश ही है यह कितने रूपों में उपस्थित होता है इसका स्पष्टीकरण किया जा चुका है, "उपहार" में ऐसे अविश्वास का विषधर दो के बीच न केवल शामिल होता है बल्कि दो में से किसी एक से जुड़ने भी लगता है। कहानी में बड़ी आयु की बीवी से समता का सहज धरातल न मिलने पर पति को एक समवयस्क महिला से जुड़ने की कमी अनिवार्यतः महसूस होती है। "मन के प्रहरी" में भी आयु अन्तराल ही तीसरे से जुड़ने का कारण बनता है। इसी प्रकार "तीन कन्या" नामक कहानी में संतान और माँ के बीच आई संवादहीनता एक ऐसे ठहराव को पैदा करती है, जहाँ माँ ही तीसरे व्यक्ति की भूमिका उपस्थित हो जाती है।

पति – पत्नी के द्वारा एकरूपता के धरातल पर समर्पित न हो पाने का एक प्रमुख कारण दहेज भी है, जिसका उल्लेख

"चन्नी" का धरातल इससे अलग प्रकार का है। इससे पूर्व अनेक पुरुष सम्बन्ध उसके लिए विवाहित जीवन को तब तोड़ देते हैं तब पुनः उसे विवाह पूर्व तीसरे पुरुषों में से किसी एक को खोजना पड़ता है।

"मास्टरनी" नामक रचना में एक पुरुष प्रथम एवं तीसरी महिला के बीच निरर्थक सा प्रतीत होता है। "शर्त" रचना की महिला अपने प्रथम पुरुष से अलगाव में आकर तीसरे पुरुष से बार – बार पराजित होती है। परन्तु गैड़ा में तीसरे व्यक्ति से निरंतर पराजित होने पर प्रतिशोध का एक ऐसा भयानक धरातल उपस्थित करता है जो "भीलनी" में और अधिक क्रूरता पूर्ण ढंग से उपस्थित किया गया है।

शिवानी के उपन्यासों का सामान्य परिचय

मायापुरी –

"मायापुरी"[1] शिवानी का प्रतिनिधि एवं मार्मिक उपन्यास है। "मायापुरी" उपन्यास की रचना शिवानी ने 1957 में की। इस उपन्यास में सामन्तवादी और पूँजीवादी सभ्यता पर प्रहार किया गया है। "मायापुरी" जैसा कि नाम से ही ध्वनित होता है कि

---

1. सन् 1957 में हिन्द पाकेट बुक्स द्वारा प्रकाशित

इसमें "माया" सम्पत्ति और वैभव, विलास और अधिकार सम्पन्न संसार का चित्रण किया गया है। लेखिका ने प्रस्तुत उपन्यास में उपन्यास के मुख्य चरित्र शोभा को केन्द्र में रखकर अपने लक्ष्य का प्रतिपादन किया है। निर्धन परिवार की लड़की शहर में पढ़ने के लिए जाती है किन्तु अपने मकानमालिक के पुत्र सतीश के प्रेम में आवद्ध हो जाती है। संयोगवश राज्यपाल की पुत्री का विवाह उसके प्रेमी सतीश से तय हो जाता है। परिणामस्वरूप शोभा अपने प्रेमी को खोकर दिग्भ्रमित होकर भटकती रहती है। विवाहित होकर उसका प्रेमी सतीश उसे नैनीताल में मिलता है, पुनः स्नेह का संचार होता है। दुखद स्थिति में एक दूसरे से विदा लेते हैं। विदेश गमन पर सतीश का वायुयान दुर्घटनाग्रस्त होता है। सतीश घायल हो जाता है। तब उसकी पत्नी उसे देखने तक नहीं आती, शोभा ऐसे दुखाँत समय में फिर उपस्थित होती है। उसी के आँसुओं के स्नेहिल ममत्वपूर्ण प्रवाड में सतीश अपनी जीवन लीला समाप्त करता है। यही इस उपन्यास का वर्ण्य विषय है। "भोग" व्यक्ति और समाज के अद्य:पतन का कारण बनता है, यही "मायापुरी" का सन्देश है।

चौदह फेरे -

"चौदह फेरे"[1] उपन्यास "विवाह" की पृष्ठभूमि पर

---

1. सन् 1960 में यूनीवर्सिटी प्रकाशन से प्रकाशित

आधारित एक सामाजिक उपन्यास है। लेखिका ने प्रस्तुत उपन्यास के माध्यम से परिवर्तित सामाजिक मूल्यों एवं बदलते युगीन संस्कारों का निरूपण किया है। इस उपन्यास की कथा की मूल संवेदना ग्रामीण संस्कृति एवं नगरीय संस्कृति के अन्तर को स्पष्ट करना है।

उपन्यास का प्रमुख चरित्र कर्नल, उसकी पत्नी और पुत्री अहल्या के चरित्र की व्याख्या के माध्यम से लेखिका ने कुमाऊँ आँचल की स्थानीय संस्कृति का जीवंत निरूपण किया है।

कृष्णकली –

"कृष्णकली"[1] मूलतः वेश्या जीवन की मार्मिक कथा – व्यथा को चित्रित करने वाला बहुचर्चित उपन्यास है। लेखिका ने प्रस्तुत उपन्यास के माध्यम से मध्यवर्गीय पात्रों की जीवन स्थितियों का निरूपण किया है। उपन्यास का प्रारम्भ कुष्ठ रोगियों की सेवा में समर्पित मिशनरी सन्त डॉ0 वैदिक से होता है, जो पार्वती और असदुल्ला की अवैध सन्तान को बचाकर पन्ना वेश्या को सौंप देती है। पन्ना उस बच्ची को बोर्डिंग मे डाल देती है। यही बच्ची कृष्णकली है जो बोर्डिंग में दूसरों के पिता को देखकर अपनी माँ से अपने पिता के सम्बन्ध

---

1. सन् 1962 में कलकत्ता से प्रकाशित

में जानकारी चाहती है और माँ के लगातार निरूत्तर रहने पर विद्रोह करती है। कृष्णकली को एक दिन पता चलता है कि उसके माँ – बाप कोढ़ी है, तब वह घर से पलायन करके यत्र – तत्र नौकरी करती है साथ ही निंध्य और अवांछनीय बुरे कृत्यों में भी संलग्न हो जाती है। वह प्रवीर नामक नवयुवक के सम्पर्क में आती है, किन्तु प्रवीर का विवाह अन्यत्र होने पर वह निराश होकर "स्लीपिंग पिल्स" लेकर अपनी जीवन लीला को समाप्त कर देती है।

कुष्ठ रोग की समस्या को कथानक बनाकर लिखा गया। यह विस्तृत और मानवीय संवेदना से परिपूर्ण उपन्यास शिवानी की अमर कला कृति है।

भैरवी –

"भैरवी"[1] उपन्यास का कथानक निर्धन वर्ग की कन्या के विवाह की समस्या पर आधारित है। राजश्वरी शाहजहाँपुर से अपनी युवापुत्री चन्दन को लेकर पहाड़ पर आई थी, ताकि वह अपनी बिरादरी में पुत्री का विवाह कर सके, किन्तु वह असफल रही। संयोगवश एक दिन पर्वतरोहियों का एक दल साइक्लोन के

---

1. सन् 1969 में दिल्ली से प्रकाशित

थपेड़ों से घबराकर राजेश्वरी के घर पर शरण लेता है। पर्वतारोही सोनिया लड़की से चन्दन की मैत्री हो जाती है और वह चन्दन की शादी अपने भाई विक्रम के साथ करवा देती है। विक्रम और चन्दन **"हनीमून"** के लिए इधर–उधर घूमते रहते हैं, किन्तु उसे रेलगाड़ी में एक रात चार गुण्डों द्वारा घेर लिया जाता है। चन्दन भयभीत होकर गाड़ी से कूद जाती है और उसे महाश्मशान में समाधिस्थ एक अघोरी बाबा उठा ले जाते हैं। बाबा ने चन्दन का नाम बदल कर **"भैरवी"** कर दिया। माया दीदी नाम की एक दूसरी लड़की बाबा जी की पार्वती बनना चाहती थी परन्तु उसे ज्ञात हुआ कि बाबा भैरवी पर मुग्ध हैं, अतः उसने भैरवी को अपनी गुरू बहिन विष्णुप्रिया के घर भेजने का प्रस्ताव रखा परन्तु माया को एक सर्प ने डस लिया, बाबा (गुरूजी) उसे लेकर जल समाधि देने गये और भैरवी पीछे से भाग गयी। वह विक्रम के पास गयी, किन्तु उसे वहाँ पता चला कि विक्रम की पत्नी ने अभी–अभी पुत्र को जन्म दिया है। अतः उसके लिए यह द्वार भी बन्द हो गया।

श्मशान चंपा –

"श्मशान चंपा" एक प्रतीकात्मक उपन्यास है। एक ऐसी युवती की कथा है जो नारी के शालीन, गरिमापूर्ण, और निष्ठावान जीवन के बावजूद वातावरण और समाज की यातना का शिकार बनती है। उसे पिता के कलंक और अपनी सगाई के टूट जाने की पीड़ा झेलनी पड़ती है। जहाँ कहीं जाती है वहीं दुर्भाग्य उसका पीछा नहीं

छोड़ता। संयोगवश उसे सेन गुप्त की सारी सम्पत्ति मिल जाती है, किन्तु उसके लिए यह और भी दुखद सिद्ध होती है। अन्त में वह बेनाराम की दासी बन जाती है और वेश्या की दत्तक पुत्री का खिताब उसे मिलता है।

सुरंगमाः –

"सुरंगमा दुहरे कथानक को लेकर चलने वाला उपन्यास है। लक्ष्मी अल्पवय में घर से भागकर अपने संगीत मास्टर गजानन से शादी कर लेती है। लेकिन गजानन उसके साथ छलपूर्ण व्यवहार करता है। सुरगंमा भी उसे छोड़कर भाग जाती है। वहाँ उसकी भेंट रोबर्ट से होती है। लक्ष्मी उसे सहारा देती है और उसकी होने वाली संतान अवैध न समझी जाये, इसलिए रोबर्ट से शादी करवा देती है और उसे उच्च शिक्षा दिलाती है। लक्ष्मी नौकरी करने लगती है। इसी बीच वह एक लड़की को जन्म देती है। वही लड़की इस उपन्यास की नायिका सुरंगमा है।

कैंजा –

"कैंजा" के माध्यम से शिवानी ने रूप–सौन्दर्य पर आसक्त – प्रेमी एवं प्रेम की एक यौन भावना को हृदय में संजोकर रखने वाली प्रेमिका का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया गया है। कैंजा उपन्यास

के प्रारम्भ में कुमाऊँ के सुरम्य वातावरण में पल्लवित एवं पुष्पित नन्दी तिवारी तथा सुरेश भट्ट एक दूसरे के प्रति आकृष्ट हैं। नन्दी को घोर वैधव्य का योग होने के कारण उसके पिता उसे स्वावलम्बी बनाने हेतु डाक्टरी की शिक्षा दिलवाते हैं। सुरेश नन्दी की ओर से कोई भी प्यार का संकेत न पाकर मानसिक संतुलन खो बैठता है। वह जघन्य अपराधों में प्रवृत्त होता है। सुरेश मनिहारिन की पगली लड़की से संभोग करता है, उसे गर्भवती बनाता है तथा भाग जाता है। नन्दी पगली के पुत्र रोहित को अंगीकार करती है और अंत में नन्दी अपनी अतृप्त आकांक्षाओं तथा मानसिक अभावों की पूर्ति के लिए मरणासन्न सुरेश से विवाह कर कैंजा विमाता का उत्तरदायित्व ग्रहण करती है।

विषकन्या –

विषकन्या चरित्रगत विसदृक्षता को रूपायित करने वाला उपन्यास है। विषकन्या उपन्यास के माध्यम से लेखिका ने दो जुड़वाँ बहिनों की कथा को प्रस्तुत किया है। ये जुड़वाँ बहिनें कामिनी और दामिनी हैं। कामिनी, दामिनी के रूप, आकार से अभिन्न होने के कारण भ्रान्ति उत्पन्न करती है। वह जिससे प्रेम करती है, उसे नष्ट कर देती है, यहाँ तक कि वह अपनी बहन के सौभाग्य को भी भस्म कर देती है। संसार से अभिशप्त होकर वह मुँह छिपाती है।

रतिविलाप –

रतिविलाप एक ऐसा उपन्यास है, जिसमें लेखिका

को अनसूया सहेली द्वारा वैधव्य जीवन की कथा सुनायी जाती है। उसका विवाह एक पागल व्यक्ति विक्रम कापड़िया से विचित्र परिस्थितियों के बीच सम्पन्न हुआ। विक्रम कापड़िया एक दिन उन्मत्त अवस्था में अनुसूया को गोद में लेकर छत से कूदने लगा। संयोग से वह बच गयी और विक्रम कापड़िया की मृत्यु हो गयी। तदनंतर अनुसूया और उसका श्वसुर बम्बई जाकर साड़ी का व्यवसाय शुरू किया। अपने यहाँ नौकरानी के रूप में हीरा को रखा लिया, जो पति की हत्या करके कारागार से छूटकर आयी थी। अनुसूया कारोबार के सिलसिले में बाहर गयी थी, लौटकर आयी तब पता चला कि उसका श्वसुर हीरा नौकरानी को लेकर कहीं भाग गया।

गैंडा –

"गैंडा" शिवानी का ऐसा उपन्यास है जिसमें लेखिका ने गैंडा के प्रतीक द्वारा आज की संवेदनाहीन स्वार्थान्ध नारी का लोमहर्षक चित्रण किया है। राज और सुपर्णा दो सहेलियाँ हैं। बचपन से युवावस्था तक दोनों एक दूसरे की हमसाया रहीं। बाद में सुपर्णा का का विवाह एक सेना के अधिकारी से तथा राज का विदेश में स्थित एक धनी व्यापारी से होता है। सुपर्णा सौम्य शांत और एकनिष्ठ प्रेम करने वाली नारी हैं, राज मेहरा प्रारम्भ से ही चंचल है। सुपर्णा अपने पति तथा बच्चों के साथ सुखी जीवन बिता रही थी, परन्तु राज सुपर्णा के जीवन में आकर तहस–नहस कर डालती है। वह सुपर्णा के पति को अपने मोहपाश में आवद्ध करके उससे

गर्भवती तक हो जाती है। राज प्रतिशोध के लिए धार्मिक आश्रयों तक जाती है और जंत्र – मंत्र का सहारा लेती है। इस प्रकार एक नारी ही दूसरी नारी के शोषण का कारण बनती है।

उषा प्रियंवदा का कथा साहित्य –

कहानियाँ –

जिंदगी और गुलाब के फूल (कहानी संग्रह)		1961
एक कोई दूसरा	"	1966
मेरी प्रिय कहानियाँ	"	
हिन्दी कहानियाँ (अंग्रेजी में अनुवाद)		
कितना बड़ा झूठ (कहानी संग्रह)		1972

उपन्यास –

पचपन खंभे लाल दीवारें

रुकोगी नहीं राधिका

उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य का परिचय

उषा प्रियंवदा का कथा साहित्य जीवन की मन: स्थिति और बाह्य स्थितियों के द्वन्द्व पर आधारित है। वह मन:स्थिति और स्थिति के बीच के संघर्ष में से कहानी को आगे ले चलती है। कहानी सहज स्वाभाविक एवं जीवंत प्रतीत होने लगती है। उषा प्रियंवदा छठवें – सावतें दशक की एक ऐसी रचनाकार हैं जिनमें पुरानी कहानी के वस्तु शिल्प पाए जाते हैं। प्रथम प्रकाशित कहानी **"लाल चूनरी"** है। उनकी कथा यात्रा का आरम्भ दिल्ली निवास के साथ ही हुआ जब उन्होंने नए भाव बोध, नए शिल्प को अपनी कहानियों के लिए आधार बनाया। **छुट्टी का दिन**, कहानी से उनके इस नये लेखन का प्रारूप माना जा सकता है, जिसका उत्कर्ष वापसी (1960) में देखने को मिलता है। जिन्दगी और गुलाब के फूल, मूर्ति, मोह–बंध, कोई नहीं, एक कोई दूसरा, झूठा दपर्ण आदि कहानियाँ इसी प्रथम चरण की कहानियाँ हैं।

कथायात्रा का द्वितीय चरण उनके प्रवासी जीवन से प्रारम्भ होता है। उन्होंने अपने अमरीका प्रवास के बीच व्यक्ति को सुदूर देश के नए संदर्भों में देखा और उसे अपनी कहानियों का विषय बनाया। "वनवास" कहानी से दो देशों के सांस्कृतिक अंतराल की झलक मिलती है। अन्य प्रमुख कहानियाँ जो ऐसे सम्बन्धों को व्यक्त करती हैं, उनमें ट्रिप, कितना बड़ा झूठ, संबंध, स्वीकृति, चाँदनी में बर्फ पर आदि हैं।

उषा प्रियंवदा नई कहानी आंदोलन में नहीं जुड़ीं, जबकि उनकी कहानियाँ वस्तु, शिल्प और वैचारिक दृष्टि से नई कहानी की सीमा के अन्तर्गत आती हैं। कहानीकार के रूप में उनकी ख्याति उनके तीन कहानी संग्रहों से हुयी, **जिन्दगी और गुलाब के फूल** (1961) **एक कोई दूसरा** (1966) और **कितना बड़ा झूठ** (1972) प्रमुख कहानी संग्रह हैं। बहुचर्चित कहानी के रूप में **"जिंदगी और गुलाब के फूल" मछलियाँ, सम्बन्ध, कितना बड़ा झूठ,** उन्हें लोकप्रियता प्रदान कर सकीं।

मध्यवर्ग को आधार बनाकर उषा प्रियंवदा ने कहानियाँ लिखी हैं। उनकी कहानियाँ उच्च वर्ग की उपेक्षा नहीं करती। कहानियों में या तो भारतीय पृष्ठभूमि है या अमरीकी। दोनों ही देश उनके कार्यक्षेत्र रहे हैं। प्रमुख रूप से वे भारतीय जन मानस को अभिव्यक्ति देती हैं। किन्तु यह भारतीय मानसिकता बदली हुयी परिस्थितियों में चित्रित होती है।

अनुभूति की साधना और अभिव्यक्ति कौशल की दृष्टि से उषा प्रियंवदा का कथा साहित्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है। कहानियों में जीवन के अनुभवों का वैसा वैविध्य नहीं है। उनकी कहानियों में प्रेम सम्बन्धों के विविध पक्ष उद्घाटित हुए हैं, परिवार की समस्यायें भी चित्रित हुई हैं। उनकी अधिकाँश कहानियों में नारियाँ हैं। नारी पात्रों की प्रधानता है। नारियाँ भी ऐसी जो आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर हैं किन्तु किसी न किसी समस्या से वे ग्रस्त हैं। कहीं परिवार की दूरियाँ हैं तो कहीं एकाकीपन का बोझ, कहीं अविवाहित होने की मजबूरियाँ हैं

तो कहीं अतीत के मोह से ग्रस्त मानसिकता की जकड़। उनकी कहानियों में जो नारियाँ हैं, वे प्रायः एक बड़ी उम्र में विवाह कर लेते हैं।

"चाँद चलता रहा" और "मोह बंध" जैसी कहानियों के माध्यम से अकेलापन, क्षणवाद, अतीत – मोह, अवसाद, कुंठा आदि का चित्रण हुआ है। जिन्दगी और गुलाब के फूल में एक युवक, "वापसी" में एक रिटायर्ड पुरुष, "दो अँधेरे" में दो नारियाँ, (–कच्चे धागे में" एक युवती उषा प्रियंवदा की कहानियाँ एकाकी जीवन की कहानियाँ हैं। उनके पास एकाकीपन की अनुभूति से गढ़े जाते हैं। पारिवारिक समाजिक या वैयक्तिक सभी स्थितियों में वे एकाकीपन को नहीं भूलते। वे अनुभव करते हैं कि वे एकाकी हैं, उन्हें कोई अपनत्व और स्नेह देने वाला नहीं है। कथाकार ने अपनी मानसिकता को अपने पात्रों में रूपान्तरित कर दिया है। कहानी लेखिका के शब्दों में –

"मैं स्वयं एक बहुत "प्राइवेट परसन हूँ" और गहरे मित्र बनाने में मुझे समय लगता है, शायद मेरे पात्रों के अकेलेपन में, मेरी इस दृष्टि और प्रवृत्ति का प्रभाव लगता है।"

(मेरी प्रिय कहानियाँ, पृ0 – 10)

पात्रों की वैयक्तिकता, उनके चारित्रिक जीवन को पूरी तरह से प्रभावित करती है। यही कारण है कि उषा प्रियंवदा की कहानियाँ के पात्र, अपनी मैत्री की आशा नहीं करते, अथवा मैत्री के लिए हाथ बढ़ाते हैं तो उन्हें निराशा ही हाथ लगती है।

उषा प्रियंवदा की कहानियाँ रहस्य के ताने–बाने से युक्त रहती है। आरम्भ से अन्त तक उनकी कहानियों में यह रहस्य बना रहता है। रहस्य यदि खुलता भी है तो कहानी के बिल्कुल अंत में।

कथा प्रबंध की दृष्टि से उषा प्रियंवदा की कहानियाँ एक क्रमहीनता में भी एक कथानक बनाती हैं। उनकी कहानियाँ एक निश्चित क्रम से आगे नहीं बढ़ती, कहीं वर्तमान की स्थितियों का विश्लेषण करती हैं तो कहीं अतीत का उद्घाटन करती हैं। कहीं परिवेश को चित्रित करती हैं तो कहीं मनःस्थितियों को खोलती हैं।

उषा प्रियंवदा नारी मन की व्यथा को कई कोणों से व्यक्त करने वाली नई कहानी की सशक्त कहानीकार हैं। "कटींली छाँह" में एक प्रौढ़ पुरुष, "छुट्टी का दिन", में एकांकी नारी आदि सभी प्रमुख पात्र प्रतीकात्मक अस्तित्व लेकर आए हैं।

व्यक्ति का जीवन सहज और सरल नहीं होता, उसमें कहीं न कहीं कोई उलझाव भी होता है। उषा प्रियंवदा की कहानियाँ इस उलझाव को, जीवन की जटिलता को व्यक्त करती हैं। कहानियाँ रोमांटिक दृश्यों को मुख्य रूप से नहीं उभारतीं वरन् उसमें कहीं न कहीं अवसाद का रंग घुला रहता है।

स्त्री और पुरुष के सम्बन्धों पर ऊषा प्रियंवदा ने अपनी कहानियाँ लिखी हैं। प्रेम और रोमांस उनकी कहानियों में एक व्यापक परिप्रेक्ष्य के साथ चित्रित होता है। नारी पात्र अस्तित्व के संघर्ष में लीन दिखाई पड़ते हैं। एक ओर वे मूल्यहीनता को उजागर करती

हैं तो दूसरी ओर मूल्यों की रचना के लिए तत्पर दिखाई देती है।

संबंधों की दृष्टि से ऊषा प्रियंवदा की कहानियों को निम्न रूपों में वर्गीकृत किया जा सकता है –

(अ) पारिवारिक सम्बन्धों की कहानियाँ

(ब) भारतीय सम्बन्धों की कहानियाँ

(स) काम (सेक्स) सम्बन्धों की कहानियाँ

(द) स्वच्छन्द कहानियाँ

उषा प्रियंवदा परिवेश में से पात्रों को चुनती हैं, फिर पात्रों के अनुकूल ही बाहरी स्थितियों का अंकन करती है। "जिंदगी और गुलाब के फूल", मेरी प्रिय कहानियाँ इसी प्रकार के परिवेश को चित्रित करती हैं।

जीवन के उतार–चढ़ाव भी उनकी कहानियों में आये हैं। उनकी कहानियों में अव्यवस्थित जीवन का भी रेखांकन होता है। बदली हुयी परिस्थितियों में नारी, कहानियों में मुखर होता है। आधुनिक नारी जो आर्थिक दृष्टि से पुरुष पर निर्भर नहीं है, वह भी उनकी कहानियों में बदले हुए परिवेश को प्रतिनिधित्व देती है।

जीवन में समरसता, संतुलन और सामंजस्य भी आवश्यक होता है। उषा प्रियंवदा की कहानियों के पात्र सामंजस्य करने को विवश दिखाई पड़ते हैं, किन्तु वे पूर्ण रूपेण सामंजस्य नहीं कर पाते। हाँ, इस द्वन्द्व में प्रयत्नशीलता सर्वत्र दिखाई पड़ती है।

ऊषा प्रियंवदा की कहानियों का स्वर व्यवस्था विरोधी नहीं है। वह व्यक्ति को व्यवस्था के विरोध में न खड़ा करके, घर, परिवार और स्त्री–पुरुष के सम्बन्धों में प्रस्तुत करती हैं। कहानीकारों के शब्दों में –

"कभी–कभी कोई दृश्य एक चेहरा या किसी का कहा गया वाक्य मेरी सृजनात्मक प्रक्रिया को ऐसे छू देता है कि एक कहानी अनायास अपने आप गुँथ जाती है।" (मेरी प्रिय कहानियाँ, पृ0–7)

ऊषा प्रियंवदा की कहानियाँ वैयक्तिक और समष्टि दोनों प्रकार के मूल्यबोधों से युक्त हैं। उनके प्रमुख कहानी संग्रह हैं –

"फिर बसंत आया, जिन्दगी ओर गुलाब के फूल, एक कोई दूसरा, कितना बड़ा झूठ आदि।

उनकी प्रमुख कहानियाँ हैं – कितना बड़ा झूठ, ट्रिप, वापसी, मछलियाँ, भाले, जिन्दगी और गुलाब के फूल, मोहब्बत, कुछ नहीं, चाँदनी में बर्फ पर, स्वीकृति, एक और विदाई, सागर पार का संगीत, एक कोई दूसरा, खुले हुए दरवाजे आदि।

जिन्दगी और गुलाब के फूल, मछलियाँ, पैराम्बुलेटर आदि कहानियाँ विशेष उल्लेखनीय हैं।

जिन्दगी और गुलाब के फूल कथा संग्रह की लगभग सभी कहानियों का परिवेश यथार्थ पर आधारित है। इन कहानियों में

भौतिक मूल्यों के विरुद्ध आवाह्न किया गया है।

विघटन, पुराने सम्बन्धों का विच्छेदन, पारिवारिक जीवन का टूटन आदि ऊषा प्रियंवदा के कहानी के मुख्य विषय हैं।

प्रेम के नाम का चित्रण शीर्षक कहानी में हुआ है। इसमें वाशिंगटन शहर का परिवेश है। यह कहानी नटराजन और विजी के प्रेम सम्बन्धों को लेकर चलती है।

आर्थिक मूल्यों का महत्व सभी संभावनाओं को समाप्त कर देता है। पैराम्बुलेटर शीर्षक कहानी का यही विषय है।

मोहबंध कहानी का रचना संसार इसी प्रकार का है। इसमें दो बिन्दु हैं – अचला और नीलू। नीलू विभिन्न पुरुषों के संपर्क में खुलती रही है। इतना ही नहीं किसी आत्मीय पुरुष को अपने से निःसंकोच जोड़ भी लेती है। परन्तु अचला नीलू के ठीक विपरीत है। वह एक व्यक्ति से जुड़ती है और उसके टूटने में स्वतः टूटती ही चली जाती है। एक बिन्दु ऐसा भी आता है जब वह अपने से उस व्यक्ति को जुड़ा पाती है जो नीलू से बंधा हुआ है। संबंधों का यह मोड़ स्वयं को दोहराता है। पहले ऐसे ही मोड़ पर उसे ज्ञात हुआ कि उसे जुड़े हुए देवन को नीलू ने बलात् अपनी ओर खींच लिया। अब इस मोड़ पर जबकि स्थितियाँ स्वयं को दोहराती हैं तब अचला नीलू के पुरुष राजन से अपने को स्थायी रूप से जोड़ कर नीलू से प्रतिकार ले सकती थी। परन्तु अचला की मानसिकता नीलू से अलग प्रकार की है। वह नहीं चाहती कि उसकी तरह नीलू भी घुट–घुट कर जिये। इसीलिए वह राजन्

को जो उससे धीरे – धीरे जुड़ रहा था अलग कर लेती है।

सम्बन्धों की इन आवृत्तियों में देवेन और राजन एक साथ दूसरे और तीसरे पुरुष की भूमिका में आते हैं। नीलू की जानकारी में देवेन्द्र संभवतः तीसरा पुरुष है क्योंकि नीलू के पास इसकी कोई जानकारी नहीं है।

इसके पूर्व वह कुँवर इन्द्रजीत और कई पुरुषों से जुड़ी रही है। देवेन्द्र के बाद वह राजन से संबंधों का ठोस आधार पाती है। इस अन्तराल में उसके मस्तिष्क में सभी पूर्व संपर्कित पुरुषों के चेहरे कौंधने लगते हैं। वह उनको भूलकर राजन को उस स्थान पर एक साथ उतारना चाहती है। इतना ही नहीं उसमें पवित्रता बोध भी जागृत हो उठता है।

अचला पूर्णतः विपरीत मानसिकता वाली लड़की है। देवेन्द्र उसका पहला पुरुष है जो उससे अलग होकर नीलू से जुड़ता है परन्तु राजन उसके लिए तीसरा व्यक्ति है जो नीलू से स्थायी रूप से बंधे होने के बावजूद उससे अस्थायी संपर्क स्थापित करना चाहता है। परन्तु अचला ऐसी परिस्थिति और राजन को तिलांजलि देकर अपने पुरुषहीन द्वीप में लौट जाती है।

जाले :–

तीसरा पुरुष क्या वही है जो दो जुड़े हुए स्त्री–पुरुषों में से किसी एक से मन – प्राण का संपर्क स्थापित कर सम्बन्धों में

दरार उत्पन्न कर देता है? ऐसी बात नहीं है। ऐसा कोई भी व्यक्ति जो परस्पर जुड़े हुए स्त्री–पुरुषों में से किसी एक से आत्मिक रूप से जुड़े बिना भी उनमें दरार पैदा कर देता है, वह भी तीसरा पुरुष माना जायेगा। प्रश्न है व्यक्ति विशेष के हस्तक्षेप का।

ऐसा ही असंवेदात्मक हस्तक्षेप ठाकुर और गुलबियां प्रस्तुत कहानी में प्रदर्शित करते हैं। राजेश्वर और कौमुदी दो पृथक व्यक्ति हैं, जोकि अपने आप ये सुखी और सन्तुष्ट हैं। वे अपने अभावों और सीमाओं को भी पार कर सकते हैं। राजेश्वर के सभी अभावों की पूर्ति है ठाकुर तथा कौमुदी के प्रसंग में गुलबिया। अचानक नया मोड़ आता है – गुलबिया और ठाकुर एक दूसरे से मिल कर इन स्थितियों से दूर निकल जाते हैं तब राजेश्वर और कौमुदी इस धारा में बहने लगते हैं। बचने के लिए इस धारा से बाहर आते हैं और एक दूसरे को मिलते हैं। परन्तु उनके पास राजेश्वर व कौमुदी नामक विकल्प अनुपस्थित होने के कारण इस धारा से अपने बहाव को रोक नहीं पाते। इस धारा प्रवाह में बचने का एक मात्र रास्ता है – विवाह। अतः दोनों विवाह करके एक दूसरे की कमी की पूर्ति करना चाहते हैं। परन्तु इस कार्य में राजेश्वर अपने को घर, व सम्बन्धियों से अलग पाता है। इसी समय ठाकुर की गुलबिया सहित वापसी जो कि राजेश्वर को तीसरे व्यक्ति का एहसास दिलाती है जो उसके कौमुदी के मध्य दरार पैदा करती है। वस्तुतः ठाकुर और गुलबिया के जाने से राजेश्वर और कौमुदी के मध्य आयी निकटता गुलबिया और ठाकुर के आगमन से पृथक होने को होती है तब राजेश्वर अपने को एक बड़े शून्य से आवृत्त हुआ पाता है।

पूर्ति –

कई बार व्यक्ति आँख मूँद कर अपने जीवन में उत्पन्न हुए प्रबल अभावों को दूर करने की कोशिश करता है। यह जानता है कि वह कहीं और जुड़ा हुआ है और उससे जुड़ा नहीं जा सकता, फिर भी उसके संपर्क में एक तृप्ति, संतोष और सुख की खोज आरम्भ हो जाती है।

पूर्ति कहानी के दृष्टिकोण की यही दिशाएँ हैं। तारा अपने जीवन के सूनेपन से परेशान है। जीवन में किसी की रिक्तता उसे सोंचने को मजबूर कर देती है। सूनापून बुरी तरह कौंचता है। इस सूनेपर से बचने के लिए वह व्यस्त रहना उपयुक्त समझती है। परन्तु व्यस्तता समाप्त होते ही पुनः वही परिस्थितियाँ। ऐसी ही परिस्थितियों में उसकी भेंट नलिन से होती है। वह आत्मीयता का अनुभव करने लगती है। वह यह भी जानती है कि नलिन विवाहित है परन्तु फिर भी तारा उसके रंग, गंध, भीने स्वप्नों से अपने सूनेपन की पूर्ति करती है। यह जानते हुए कि वह दो के मध्य तीसरे की भूमिका में है – –– उसके अंतर्मन में न तो नलिन की पत्नी के प्रति ईर्ष्या होती है न ही स्वयं के प्रति – अपराध बोध। इतना ही नहीं नलिन के अस्वस्थता के दिनों में जो सुख देह के धरातल पर उसे मिलता है वही आंशिक सन्तोष उसके जीवन के सूनेपन को भर जाता है।

दो अंधेरे –

हम नहीं चाहते कि जिस तीसरे व्यक्ति का विष दंश हमें प्राप्त हो चुका है हमारे किसी आत्मीय को लगे। जब वह व्यक्ति किसी ऐसे देश के सम्पर्क में आने लगता है तो हमें ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे अंधकार का वृत्त उसके अंधेरे वृत्त से एक होने लगा है।

दो अंधेरे कहानी का आधार इसी प्रकार का है। कौशिल्या अपने जीवन में तीसरे व्यक्ति का विषदंत पाती है। वह अपने पति दिनेश के साथ उपस्थित परिस्थितियों में सुखी थी। परन्तु दिनेश उसके सहज प्राप्य शरीर के अतिरिक्त किसी अन्य अप्राप्य शरीर को खोज में निकल पड़ता है। उसे यह राज तब पता चलता है जब पड़ोस की कंवल वहीं साड़ी पहने कर आती है जो एक शाम पहले दिनेश लाया था। तब उसमें न केवल विवाह की व्यर्थता के विरूद्ध आक्रोश जगता है बल्कि वह अनुभव करती है कि पति के अतिरिक्त किसी अन्य अपरिचित पुरुष के साथ रह रही है। इन्हीं परिस्थितियों में वह अपनी छोटी बहिन सुमित्रा के पास जाती है। सुमित्रा एक व्यक्ति शंकर के सम्पर्क में है तथा आजीवन उससे बंधने के स्वप्न देख रही है। तभी शंकर का स्थानान्तरण हो जाता है तथा सुमित्रा को कोई निर्णय नहीं देता। यह स्थिति सुमित्रा को तो परेशान कर ही देती है साथ ही कौशिल्या को भी झकझोर देती है। यह छल उसे अपनी बहिन के साथ नहीं बल्कि उसके पति द्वारा स्वयं के साथ किया हुआ लगता है। कंवल के दंश से वह अभी मुक्त ही न हो पाई थी कि शंकर के विषदंत की पीड़ा पुनः उसे विषाक्त कर देती है।

चाँद चलता रहा : तीसरे व्यक्ति का अपना गणित

व्यक्ति एक बार पद भ्रष्ट होने पर बार-बार भटकता है। स्त्री - पुरुष के संबंधों में ऐसी ही परिस्थितियों से तीसरे व्यक्ति का आगमन होता है।

ऐसे ही धरातल पर चाँद चलता रहा कहानी का कथ्य फैला है। रोहिणी शर्मा अरविन्द पर समर्पित हैं। सारी परिस्थितियाँ ठीक हैं। अचानक उतार चढ़ाव आता है तथा न केवल रोहिणी - पथ में भटकती है बल्कि उसके पथ की मंजिल अरविन्द दुर्घटना में ध्वस्त हो जाता है। गणित कहाँ गलत हुआ? क्या वह सचमुच ही गलत था? नैतिक रोहिणी से अरविन्द ने विवाह से पूर्व रोहिणी से समपर्ण चाहा था। दो दिन बाद अरविन्द की मृत्यु हो जाती है। यही नैतिकता उसे बार-बार मानसिक थकावट का एहसास दिलाती है। इस थकावट को समाप्त करने हेतु वह नैतिकता की चादर उतार फेंकती है जिस शरीर ने अरविन्द को एक अस्वीकार दिया। वही शरीर अब अनेकों पुरुषों पर समर्पित होने लगता है। कभी शिमला में, कभी कर्नल शर्मा की भुजाओं में और कभी विनय के संपर्क में परन्तु वह इन संपर्कों में अपने को तोड़ती जाती है।

रोहिणी शर्मा का द्वन्द्व और धरातल का है वह स्वयं मि0 और मिसेज शर्मा, विनय और श्यामा के मध्य तीसरा व्यक्ति है। मिसेज शर्मा और श्यामा दोनों उससे परेशान हैं, परन्तु रोहिणी और अरविन्द के

मध्य भी अनेक तीसरे व्यक्तियों के चेहरे हैं। अंतर केवल इतना है कि रोहिणी तीसरे व्यक्ति के माध्यम से अरविन्द से जुड़ना चाहती है।

कंटीली छाँह : तीसरा व्यक्ति स्थिति सापेक्षता में

तीसरे व्यक्ति की आवश्यकता कब अनिवार्य होती है – यह परिस्थिति अनुकूल प्रश्न है। इसके उत्तर अलग – अलग परिस्थितियों में भी अलग – अलग होगें।

कंटीली छाँह में इसी प्रकार की परिस्थितियाँ हैं जिससे यह प्रश्न उत्पन्न होता है और इसका उत्तर भी प्राप्त होता है। ऐसी परिस्थितियाँ एक मास्टर जगत् बाबू के सामने प्रकट होती हैं। जीवन के उत्तरार्ध में वे एक अपनी आयु से बड़ी व बद्दिमाग महिला से विवाह करते हैं। उसके आने पर माँ की अनदेखी तथा मास्टर जी का अपमान होता है और यही सारे गाँव का चर्चा का विषय बन जाता है। ऐसी परिस्थिति में जब मास्टर जी बीमार होते हैं वह घर छोड़ कर नौकरी में चली जाती है। राधा जो उसी मकान में रहती है बीमारी में मास्टर जी का ध्यान रखने के कारण अपने पति द्वारा प्रताड़ित व लोकापवाद का विषय बनती है। यह तीसरा व्यक्ति मास्टर जी को इसी परिस्थिति में शर्मिदा कर जाता है जिस स्थिति में उनकी बीबी उन्हें अवमानना के गर्त में धकेल जाती है। जगत बाबू अब दोनों से परेशान होते हैं। परन्तु यह कंटीली छाँह अपना एक अस्तित्व रखती है, जो कहानी की स्थिति की सापेक्षता के अनुरूप है।

दृष्टिकोण –

समकालीन जीवन में ऐसी स्थितियाँ भी होती हैं जहाँ एक व्यक्ति बिना किसी पछतावे के एक के बाद एक क्रमशः जुड़ता जाता है और ऐसे मोड़ भी आते हैं जहाँ एक व्यक्ति तीसरे व्यक्ति के आने की कोशिश को निरस्त कर देता है।

उपर्युक्त प्रकार की दोनों स्थितियाँ दृष्टिकोण कहानी में दृष्टिगोचर होती हैं। एक जगह मधुर है और दूसरी ओर साम्ब। मधुर कई पुरुषों के संपर्क में रह चुकी है। तथा प्रत्येक पुरुष उसे कुछ विशेष समझ में आता है परन्तु पुनः किसी नए पुरुष के संपर्क में आते ही वह उन्हें भूल जाती है। इसी ढर्रे में वह साम्ब के संपर्क में आती है। साम्ब मधुर की सहेली चन्दा का पति है। दोनों के मध्य विभिन्न विवादों के कारण मनमुटाव है। चन्दा को यह जानकारी नहीं है कि मधुर उसके पति के सम्पर्क में आ रही है। मधुर चन्दा से इस संबंध में बातें किया करती थी। परन्तु एक दिन निराश मधुर ने चन्दा से बतलाया कि वह व्यक्ति मधुर को किसी भी प्रकार अपने जीवन में प्रविष्ट कराने का इच्छुक नहीं है। अपनी पत्नी से अलग होने के बाद भी वह उससे अलग नहीं हो पाया है।

जिंदगी और गुलाब के फूल –

जीवन की कोई एक परिस्थिति सुंदर व संतुष्ट जिन्दगी को कष्टप्रद व चिंतायुक्त बना देती है। तब सुसज्जित जीवन एक डरावना

बीहड़ सा प्रतीत होने लगता है और जीवन का आधार व उद्देश्य ही परिवर्तित हो जाता है।

जिन्दगी और गुलाब के फूल में सुबोध की यही स्थिति है। शोभा उसके जीवन में बहार बनकर आयी, सुबोध ने स्वर्णिम स्वप्न संजोए। उसके पिता भी सुबोध से विवाह करने हेतु तैयार हो जाते हैं। परिवार में उसका सभी सम्मान करते हैं। आत्मसम्मान की एक सीढ़ी पर सुबोध अपनी नौकरी से त्याग पत्र दे देता है अब उसे दूसरी नौकरी नहीं मिलती जिससे उसकी पारिवारिक अपेक्षाओं व व्यर्थ की परेशानियों का सामना करना पड़ता है। ऐसी ही स्थिति में शोभा की शादी दूसरे से पक्की हो जाती है। उसे यह सूचना तोड़ देती है। शोभा का प्रस्तावित पति उसके और शोभा के मध्य तीसरे व्यक्ति के रूप में आता है और उसे न केवल शोभा से ही अलग करता है। प्रत्युत संपूर्ण परिवार में उसे स्थगित कर जाता है।

कितना बड़ा झूठ –

यह आवश्यक नहीं है कि तीसरे व्यक्ति के आगमन से संबंध विच्छेद हों अथवा एक को अलग कर उसका स्थान ग्रहण करले। यह भी आवश्यक नहीं कि तीसरा व्यक्ति दोनों में से किसी एक से जुड़ कर स्थायी पहिचान दे, रिश्ता कायम करे। इनसे अलग रह कर भी मानवीय संबंध जीवित रख कर जीवन यापन किया जा सकता है।

सम्बन्ध कहानी की यही कथ्य चेतना है। श्यामला जीवन में स्वतंत्र रूप से जीना चाहती है। अतः वह परिवार से अगल निर्जन स्थान पर रह रही है। वहाँ उसका संपर्क पुरुष मित्र सर्जन से जो कि विवाहित है हो जाता है। श्यमला उस विवाहित के मध्य तीसरे व्यक्ति के रूप में है। सर्जन श्यामला के लिए अपनी विवाहिता को त्यागने हेतु तैयार है, परन्तु श्यामला सर्जन से अप्रतिबद्ध और प्रतिबन्ध हीन धरातल पर जुड़ना चाहती है।

इस कहानी में द्वन्द्व पहले और दूसरे व्यक्ति का नहीं बल्कि तीसरे व्यक्ति का है। वह दूसरे व्यक्ति से बिना जुड़े ही प्राप्त करना चाहता है। इतना ही नहीं वह संयोजन से पहले व्यक्ति अर्थात् उसकी पत्नी को भी आघात नहीं पहुँचाना चाहता। तीसरे व्यक्ति की यह मुद्रा अभारतीय है फिर भी यह भारत में तीसरे व्यक्ति से उत्पन्न संकट को किस हद तक कम कर सकता है।

प्रथम व्यक्ति जब तीसरे व्यक्ति से जुड़ता है तथा इन दोनों के मध्य भी जब कोई तीसरा व्यक्ति आ जाता है तो यह स्थिति उससे असह्य होती है। तब प्रायः एक ही विकल्प शेष रह जाता है -- परिस्थिति के अनुसार समायोजन और पहले व्यक्ति से सेतु रचना व प्रिय संवाद योजना।

कितना बड़ा झूठ कहानी का यही धरातल है। किरन और विश्वेश्वर विवाहित हैं, परन्तु दोनों के मध्य मैक्स एक तीसरा व्यक्ति

है। किरन जहाँ अपने पति व परिवार से जुड़ी है वहीं उसका संबंध मैक्स से भी है। मैक्स उसके शरीर की अनिवार्यता है। उसके बिना वह अपने को अतृप्त पाती है।

जहाँ किरन अपने और पति के मध्य मैक्स को स्वीकार करती है वहीं अपने और मैक्स के मध्य उसकी पत्नी को अस्वीकार करती है। इससे बड़ा और क्या झूठ हो सकता है, दो समान स्थितियों को वह अलग – अलग मापकों से मापती है। यही झूठ उसे झूठा सिद्ध कर जाता है। अपने मन के संपूर्ण आक्रोश को पीकर वह विश्वेश्वर के प्रति अपने को निरापराधी बनाती है परन्तु मैक्स के साथ जो उसके संबंध थे उसके लिए मन में न तो कोई ग्लानि है न पश्चाताप और न अपराध भावना ही। इतना अवश्य है कि वारिया के द्वारा पराजय का अनुभव वह करती है।

प्रतिध्वनियाँ –

नारी केवल अपने पति के साथ ही नहीं बल्कि अपने परिवार तथा संतानों में अपनी पूरी समग्रता से जुड़ना चाहती हैं। परन्तु यदि एक संबंध भी ढीला पड़ जाये तो वह न केवल वहाँ पर चरमराती है बल्कि अन्य सम्बन्ध भी ढीले पड़ने लगते हैं और एक बिन्दु पर आकर वह खुल भी जाती है। तब स्वयं को अन्यत्र जोड़ने के प्रयत्न में उसे अपने पर बार–बार टाँके लगाने पड़ते हैं। फिर भी एक आत्मिक संलग्नता का अनुभव उसे नहीं मिलता।

प्रतिध्वनियाँ कहानी का मूल स्वर यही है। बसु अपने पति परिवार के सदस्यों से जुड़ नहीं पाई। पति के सम्पर्क में उसे नागपाश सी घुटन होती है। इस नागपाश से स्वतंत्र होने हेतु वह पति से संबंध विच्छेद कर लेती है फिर एक क्रम आरम्भ हो जाता है अन्य पुरुषों से स्वयं को जोड़ कर एक भराव पाने का। वह एक शोधछात्र के साथ भागती है, इसके बाद अन्य कई लोगों के सम्पर्क में रहती है। अंततः उसे डॉ0 जूलियन का सम्पर्क प्राप्त होता है।

डॉ0 जुलियन एक समझदार व्यक्ति हैं, जो अन्य तीसरे व्यक्तियों से भिन्न बसु को अपने पति के पास लौट जाने की सलाह देता है तथा पति द्वारा अस्वीकार किये जाने पर स्वयं के सहयोग का आश्वासन देता है। उधर श्यामल किसी भी व्यक्ति से आतंकित नहीं है इसके विपरीत वह बसु को तीसरे व्यक्ति की अपराधभावना से मुक्त होने का आत्मिक परामर्श देता है।

बसु पहले व्यक्ति से पृथक होकर अंततः तीसरे व्यक्ति से जुड़ने का आधार तो पा लेती है परन्तु उसके जीवन में अन्यत्र इतने टाँके लग चुके हैं --- वह बराबर बने रहते हैं।

ट्रिप –

दूसरे तथा तीसरे व्यक्ति के मध्य समझौता भी किया जा सकता है। दूसरा व्यक्ति तीसरे व्यक्ति से समझौता करना प्रतिशोध की

अपेक्षा उपयुक्त समझता है। तब जिस व्यक्ति के बारे में दूसरे और तीसरे व्यक्ति में समझौता होता है। वह स्वतः टूटने लगता है।

ट्रिप कहानी का यही आधार है। पति और पत्नी के मध्य द्वेष उत्पन्न हो गया है। पति इस द्वेष को त्याग कर पुनः उन्हीं पलों की प्राप्ति की खोज नशे में शुरू कर देता है। पत्नी भी उन्हीं सुखद पलों की प्राप्ति हेतु स्टीफन नामक एक व्यक्ति के संपर्क आ कर उन सुखों की प्राप्ति करने लगती है। पति यह सब जान जाता है। संघर्ष के इस क्षण में पति संतुलित व तनावहीन रहता है। उसके मन में न ही स्टीफन के प्रति हिंसा जागृत होती है न ही पत्नी के प्रति क्रूरता। वह सन्धिपत्र प्रस्तुत करता है जिसके अनुसार उसकी पत्नी तीसरे व्यक्ति से गुप्त संबंध बनाए रख सकती है मगर तीसरे व्यक्ति से उत्पन्न बच्चे का उत्तरदायित्व वह वहन नहीं करेगा। इन शर्तों पर वह अपनी बीवी को बीवी मानने के लिए तैयार हो जाता है तथा तीसरे व्यक्ति को उसके साथ रहने की स्वीकृति दे देता है।

नींद –

ऐसा भी पाया गया है एक व्यक्ति पहले व्यक्ति के सुखद सम्पर्क को ताजा बनाए रखने हेतु तीसरे व्यक्ति से सम्पर्क स्थापित करता है। उसे पहले व्यक्ति के स्थान पर ही स्वीकार करता है तथा उससे पहले व्यक्ति को ही प्राप्त करने का प्रयत्न करता है।

नींद कहानी की नायिका पहले व्यक्ति से अलगाव के कारण परेशान रहती है। इस समस्या से मुक्ति के दो ही इलाज उसके पास शेष हैं एक नींद की गोलियाँ दूसरा कोई तीसरा व्यक्ति। ये दोनों पर्याय उसे प्रथम व्यक्ति से जुड़े रहने का अनुभव प्रदान करते हैं।

नींद कहानी की नायिका तीसरे व्यक्ति में पहले व्यक्ति की खोज में इतनी गहराई में पड़ जाती है कि उसे तीसरे व्यक्ति का क्रम ध्यान ही नहीं रहता उसके लिए तीसरा व्यक्ति महत्व नहीं रखता बल्कि प्रथम व्यक्ति की उसमें प्राप्ति ही महत्व रखती है। तीसरा व्यक्ति, व्यक्ति न रहकर एक नींद की गोली मात्र रह जाता है जिसके नशे में वह पहले व्यक्ति से अलगाव की यंत्रणा भूल सके।

स्वीकृति –

पति–पत्नी के मध्य रागात्मक संवेदना समाप्त हो जाने के बाद पत्नी यही संवेदनाओं की खोज में निकलती है। इसके कई कारण हो सकते हैं। एक मत कि पति पत्नी को अपनी महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति का साधन मान ले। ऐसी स्थिति में पत्नी पति की अपेक्षा कहीं और गम्भीरता से जुड़ने का प्रयास करती है।

"स्वीकृति" कहानी में जया की यही स्थिति है। सत्य से उसकी शादी होती है तथा सत्य जया के माध्यम से विदेश जाता है तथा वहाँ पर भी वह अपनी महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति का माध्यम जया को ही बनाए

रखता है। ऐसी स्थिति में जब जया की आत्मिक अतृप्ति का बोध होता है वह वाल के सम्पर्क में आती है। उसे ऐसा अनुभव होता है कि वह अपने पति के लिए पत्नी न होकर एक माध्यम मात्र है।

ऐसी स्थिति क्रमशः बढ़ती जाती है तथा वह पति की भावनाओं का सम्पूर्णता से तिरस्कार करने लगती है। बाल से वह लाल रंग की साड़ी इसलिए लेती है क्योंकि लाल रंग उसके पति को अप्रिय है तथा वाल से अत्यधिक संपर्क स्थापित कर लेती है।

इस कहानी में सत्य की भूमिका इसलिए निर्द्वन्द्व प्रकार की है क्योकि जया उसके लिए धन प्राप्ति का एक माध्यम मात्र है। इसीकारण वह वाल के जया से संपर्क की जानकारी होने पर भी उसे जोड़े रखता है क्योंकि भारत लौटने हेतु उसे एक माध्यम की आवश्यकता है। इसीलिए जया को एक एकान्त द्वीप ले जाता है जहाँ वह वाल के साथ कई बार आ चुकी है। परन्तु सत्य के साथ में भी वह वाल से ही जुड़ी रहती है और अकेली ही भारत लौटने को इसलिए प्रस्तुत हो जाती है क्योंकि वाल पहले ही भारत जा चुका है।

मछलियाँ –

कई बार एक व्यक्ति की भूमिका परिवर्तित होने पर परिचित सभी व्यक्तियों की भूमिका में परिवर्तन हो जाता है। इतना ही नहीं उनकी निश्चित दिशा, विचार व स्थिति भी परिवर्तित हो जाती है। ऐसे में इन बदली हुई भूमिकाओं में संबंधों को पुनः स्थापित करने की प्रक्रिया भी विध्वंसक हो उठती है। तब सभी व्यक्ति अपनी–अपनी भूमिका में अपने

अपने धरातल पर वि:शेष होने लगते हैं।

मछलियाँ कहानी में यही स्थिति न उद्देश्य है। विजी और मनीष दोनों की अलग – अलग भूमिका है परन्तु दोनों गठबन्धित होने की दिशा में है। मनीष विदेश में विजी की अनुपस्थिति से त्रस्त होकर विजी को निमंत्रण भेजता है। निमंत्रण मिलते ही विजी मनीष से मिलने हेतु विदेश जाती है परन्तु तभी मनीष कहीं और चला जाता है। मनीष की अनुपस्थिति में वह रंगराजन के संपर्क में आती है परन्तु आत्मिक रूप से वह मनीष से ही जुड़ी होती है। मनीष के वापस आने पर वह पाती है कि उसके और मनीष के मध्य एक अन्य तीसरा व्यक्ति मुकी आ रही है। मुकी के निकट आते ही मनीष विजी को झटक देता है तथा कैनेडा चला जाता है।

अब परिस्थितियाँ पूर्णतः बदल चुकी हैं। विजी जो कभी मनीष के साथ जैसी आत्मियता अनुभव करती थी अब वह नटराजन को उस स्थिति में पाती है परन्तु दोनों में संवाद रचना नहीं हो पाती। तभी विजी कुछ समय के लिए बाहर जाती है व नटराजन को अपने से जुड़ा हुआ महसूस करती है। जैसे ही वह संवाद जोड़ने की स्थिति में आती है तो उसे मुकी स्वयं व नटराजन के मध्य तीसरे व्यक्ति के रूप में नजर आती है। इस प्रकार बार–बार उसके साथ यह होने के कारण वह मुकी से प्रतिशोध लेने की सोचती है तथा तीसरे व्यक्ति की भूमिका में उतरने का निश्चय करती है।

विजी के संघर्ष की अपनी दिशा है। मनीष व नटराजन के संपर्क में उसकी भूमिका बदलती है। दोनों ही भूमिकाओं में वह

मुकी से परास्त होती है। मनीष उसके लिए पहला व्यक्ति था तब नटराजन दोनों के मध्य तीसरा व्यक्ति था। मनीष के स्थानान्तरण के बाद तीसरा व्यक्ति पहला व्यक्ति बन जाता है। वह जानता है कि मुकी देह के धरातल पर मनीष से खुल चुकी है तथा विजी मनीष की वाग्दत्ता है। मनीष के जाने के बाद उसे इन दोनों में से किसी एक से जुड़ना है। पहले मुकी व मनीष तथा विजी व मनीष के मध्य वह तीसरा व्यक्ति रहा है परन्तु उसकी भूमिका अब बदल गई है। वह विजी को चाहते हुए भी उससे जुड़ नहीं पाया अतः दोनों में संबंध जुड़ने की प्रक्रिया टूट जाती है परन्तु मुकी से वह जुड़ जाता है। ऐसा देख कर विजी दोनों के मध्य विस्फोटक गतिविधियों का जाल बिछा देती है जिससे सभी ध्वस्त हो जाते हैं -- मिकी और नटराजन तथा दूर देश जा रही विजी भी।

एक कोई दूसरा –

मानवीय संबंधों में कई बार ऐसे धरातल भी उपस्थित हो जाते हैं जहाँ से एक सीढ़ी ठीक उस बिन्दु तक जाती है, जहाँ पर दो व्यक्ति एक प्राण हो कर खड़े हैं। वहाँ तक अधिकार के जूते उतारकर श्रद्धा के नंगे पैरों से ही जाया जा सकता है। श्रद्धा से ही उन दोनों के बीच खड़े होने की संभावना हो सकती है परन्तु यही संभावना कब भीतर ही भीतर अधिकार बन जाये यह तब ज्ञात होता है जब श्रद्धा का वह बिन्दु ही मिटने को होता है।

एक कोई दूसरा कहानी का यही आधार है। इसी आधार के सहारे नीलंजना डॉ0 कुमार और लक्ष्मी तक जाती है, परन्तु इस यात्रा से पूर्व नीलांजना अपने परिवेश में जूते पहन कर घूमती है। जूते अपने को निःसकोच अन्य संपर्कों में खोलने के बराबर पुरुष संपर्कों में घिरने के और लगातार उनको बेलाग मुहा से जीने के।

ऐसे उन्मादी प्रसंगों में ही नीलांजना अभी तक विचरण करती रही है। परन्तु डॉ0 कुमार के संपर्क में उसे यह जूते सीढ़ियाँ चढ़ने से पहले ही उतारने पड़ते हैं। वह पाती है कि डॉ0 कुमार का व्यक्तित्व श्रद्धा की परतों को चीर कर उसके भीतर तक छूने लगा है। तब वह अपनी विचारधारा में डॉ0 कुमार की पत्नी में कुछ ऐसी कमियाँ देखने लगी जो डॉ0 कुमार के जीवन के कुछ पहलुओं की रिक्तिका को पूर्ण नहीं कर सकते। ऐसी स्थिति में वह स्वयं को दोनों के मध्य सक्रिय हस्तक्षेपक के रूप में पाती है। अपनी पुरुष विजय की तमन्ना को वह गलत मान कर गठबन्धन की अंगूठी को संकल्पित मुद्रा से नकार देती है। जैसे ही उसे डॉ0 कुमार की बीमारी का पता मिलता है वह बौखला जाती है। दम तोड़ रहे डॉ0 कुमार के साथ उनकी पत्नी से भी अधिक तीव्रता से टूटने लगती है। डॉ0 कुमार की अंतिम भेंट में अपने को उपस्थित पा कर मानो वह उस डूब रहे द्वीप में खड़े होने के लिए छः इंच जमीन पा लेती है।

झूठा दर्पण –

यह कोई आवश्यक नहीं है कि कोई व्यक्ति अपने को दो के मध्य तीसरा पाकर उनमें दरार ही पैदा करे। यह भी हो सकता है कि अपने लिए वह कोई दूसरा तलाश करे।

"झूठा दर्पण" में अमृता ऐसी ही तलाश कर रही है। मीरां व यति के मध्य वह अपने को तीसरा अनुभव करती है। वह अपने लिए भी यति जैसे पुरुष की कामना करती है परन्तु उसकी इच्छापूर्ति नहीं हो पाती। यहाँ एक ओर यति के माता – पिता असंतुष्ट हैं वहीं मीरां भी यति को उपयुक्त नहीं मानती अतः यति से विवाह अस्वीकृत करने की सोचने लगती है। परन्तु यति जैसे पुरुष की कामना अवश्य उसके मन में भरी होती है। यति की निकटता प्राप्ति हेतु वह किसी प्रकार का प्रयास भी नहीं करती। मीरा अनुपस्थिति में ऐसे कुछ अवसर आते हैं कि थकाहारा यति मीरा के पास प्रशांत अनुभव करता हे व अमृता की गोद में सिर टिका कर अपने भीतर हो रही उबकाई से मुक्ति पाना चाहता है। इस स्थिति में भी अमृता यति की निकटता को पुरुष के स्तर पर न लेकर संवेदना के बाल सुलभ स्तर पर लेती है। फिर भी उसके हृदय में कहीं न कहीं यति है। यही कारण है कि जब वह मीरा को यति द्वारा मनाते हुए देखती है तो वह अपने लिए उस प्रस्तावित पुरुष को स्वीकार कर लेती है। जिसे वह बराबर टालती आई थी। यह पुरुष है कंवर जो उसकी संवेदनाओं में एक नई स्फूर्ति डाल देता है। अतः वह मीरा व यति के मध्य से हट कर पूरी आत्मिक इच्छा से

कंवर को पाना चाहती है। इस धरातल पर वह यति की निकटता को एक आलोक के रूप में अनुभव करती है तथा अपने पुरुष से जुड़ने के लिए वह उसे अस्वीकार कर देता है। सम्बन्धों की यह स्थिति यति द्वारा दी गई पुस्तकों को अस्वीकार की मुद्रा में छोड़ कर कंवर के साथ उठ जाने पर प्रकट होती है।

प्रस्तुत कहानी में तीनों ही व्यक्तियों की स्वस्थ्य भूमिका दर्शायी गई है जहाँ न तो यति ही अमृता के प्रति कमजोर पड़ता है न ही अमृता ओर न ही मीरां दोनों के प्रति संबंध से ईर्ष्या प्रकट करती है।

कोई नहीं –

प्रायः ऐसा होता है कि त्रिभुज में दो व्यक्तियों में एक को पाने की होड़ हो और वे दोनों एक दूसरे से ईर्ष्या करते हों। परन्तु कभी – कभी ऐसा भी होता है कि जब कोई तीसरा पहले को हटा देता है। तब पहले के मन में उसके प्रति ईर्ष्या तो नहीं होती परन्तु उस चौथे व्यक्ति के प्रति संवेदना तो अवश्य जगती है जो उसकी तरह ही तीसरे व्यक्ति से परास्त होता है।

इस "कोई नहीं" कहानी में इसी प्रकार का तनाव, संघर्ष तथा संवेदना है। नमिता पहला व्यक्ति है जो अक्षय के विरक्त होने से टूट जाती है। अक्षय और उसके बीच एक प्राण होने की प्रक्रिया रही है और एक ऐसी प्रौढ़ समझ भी रही है जो स्त्री – पुरुष संबंधों को स्थायी

आधार दे जाती है। अक्षय विदेश सेवा में जाते ही इस आधार से फिसल जाता है और भटकन की लम्बी गुफाओं में खो जाता है। नमिता भी ध्वस्त होने को है। वह सर्वांशतः अपने आधार से विरोपित हो जाती है। उसके लिए जीवन का भूगोल व्यर्थ होता है। वह मात्र अपने आप से किया हुआ एक समझौता बन कर रह जाती है -- ऐसा समझौता जो सीमाओं और विवशताओं के आगे पूर्ण आत्मसर्पण के बाद हाथ लगता है। कई वर्षों बाद पुनः अक्षय से भेंट होने पर वह नव उत्साह की एक तरंग अपने भीतर पाती है। परन्तु उसकी शक्ति, राग संवेदना उससे कोई ऊष्मा ग्रहण नहीं कर पाती है। अक्षय के संवादो से वह उसके विदेशी प्रणय और परिणय के प्रसंगों को जानने पर वह एक विचित्र तनाव बिन्दु पर आ जाती है। उसकी जिस पत्नी ने उसे उसके वांछनीय पुरुष अक्षय से दूर किया उसके प्रति उसके मन में कोई ईर्ष्या नहीं जगती। परन्तु अक्षय की उस आष्ट्रियन प्रेमिका के बारे में जो उसकी तरह ही अक्षय की पत्नी से पराजित हुई है -- वह संवेदना से अभिभूत हो उठती है। तब वह अक्षय के प्रति अपने सभी प्रश्नों को प्रतिबंधन देना चाहती है, क्योंकि वह उसके साथ एक भटकी स्मृति बन कर चिपकी नहीं रहना चाहती। इसी धरातल पर उसे लगता है कि विच्छेद में आए हुए उस व्यक्ति के साथ उसका स्थायी विच्छेद हो गया है।

सागर पार का संगीत –

एक बार जब व्यक्ति किसी लक्ष्य से फिसलता है तब वह

किसी हिम खण्ड की भाँति कहीं जम नहीं पाता और लगातार गर्त से फिसलता जाता है। वह कहाँ रुकेगा? असंवेदना के किस अतलात्तक में विगलन पाएगा यह कुछ नहीं कहा जा सकता।

सागर पार का संगत रचना में एक ग्लेशियर की ऐसी ही संखलित यात्रा है। यह हिमखण्ड है —— देवयानी। भारत में वह प्रकाश की वाग्दत्ता है। उसके प्रति श्रुत हो चुकी है। अमेरिका जा कर वह औस्कर के मॉ: : स्पर्शों की ऊष्मा में प्रकाश से हुए अपने वाग्दान को खंडित करने लगती है। वह औस्कर के लिए अपनी भारतीय संस्कृति को त्यागने को प्रस्तुत रहती है। भारत से आए पिता व प्रकाश के पत्र को बिना खोले ही मेज पर रख देती है जो कि उसकी अस्वीकार मुद्रा का सशक्त रेखांकन है। अन्ततः वह औस्कर के साथ गठबन्धित हो कर कैनेडा चली जाती है। वहाँ सुख सुविधाओं की उपस्थिति उसे आत्मतृप्ति प्रदान करती है। परन्तु इन्हीं सुविधाओं में आस्कर की व्यस्तता उसे तोड़ती है। सभी सुविधाओं के बावजूद उसका अकेलापन और भी भयावह हो जाता है। इन परिस्थितियों में वह औस्कर के चचेरे भाई यास्पर को समर्पित हो जाती है। देवयानी इस फिसलन दर फिसलन में तनिक भी ग्लानि महसूस नहीं करती। अपने पहले पुरुष प्रकाश को छोड़ते हुए उसे अपराध बोध नहीं जगा। इसी प्रकार औस्कर की अनुपस्थिति में यास्पर को समर्पण पर वह आत्महीनता से मुक्त रही। इसके बाद देवयानी के समर्पणों की भले ही कोई दिशा रही हो परन्तु इस बिन्दु पर आकर वह असंवदेना की पात्र बन जाती है।

पिघलती हुई बर्फ --

अपने प्रिय व्यक्ति की प्राप्ति हेतु बहुत से लोग कूटनीतिक षडयन्त्र व दुष्कर्म भी करते आए हैं, परन्तु इनसे अलग एक और धरातल भी है जहाँ व्यक्ति कोई षडयन्त्र रचना नहीं करता अपितु किसी संभावित घटना को जानते हुए भी उसके प्रति मौन रहता है। यह सोंच कर कि उसका प्रतियोगी तीसरा व्यक्ति रास्ते से अलग हो जाए तथा वह निर्द्वन्द्व रूप से अपने प्रिय को प्राप्त कर ले। परन्तु इसके विपरीत ही होता है। उस संभावित परेशानियों में वह तीसरा व्यक्ति ही नहीं दूसरा व्यक्ति भी फंस जाता है। ऐसे में उसके दिमाग में एक अपराध भावना जाग्रत हो जाती है जो सहज ही उसे किसी अन्य से जोड़ने में बाधक होती है।

"पिघलती हुई बर्फ" में अक्षय ऐसी ही अपराध भावना से त्रस्त है। विदेश में उसका संपर्क सुधीरा से होता है। उसकी देहगंध उसके रोम - रोम में स्वप्न पुरुष बन कर खिल उठती है। परन्तु बीच में एक तीसरा व्यक्ति आता है - बीरू। बीरू सुधीरा का बचपन का निकटस्थ मित्र है जबकि अक्षय इतना निकटस्थ नहीं है। अक्षय और बीरू एक दूसरे को तीसरा व्यक्ति मानते हैं। अक्षय यह जानता है कि उसकी कार के ब्रेक्स अच्छी तरह कार्य नहीं करते यह कार बीरू को दे देता है। कार एक्सीडेन्ट से बीरू की मृत्यु हो जाती है तथा सुधीरा सर्वदा के लिए पूर्ण - तथा अचेतन हो जाती है। अक्षय पूर्णतः टूट जाता है तथा भारत लौटता है, परन्तु उसका कुकृत्य उसे किसी अन्य से जुड़ने हेतु क्षमता

प्रदान नहीं कर पाता। वह उसी कृत्यों के द्वन्द्व में पीड़ित रहता है। अपराध बोध का यह हिमखण्ड उसे बराबर शीत बनाए रखता है। छवि से जुड़ कर भी अपराध बोध की यह गाँठ खुल नहीं पाती है।

चाँदनी में बर्फ पर –

कई बार दो त्रिकोण के कई बिन्दु पुरावर्तित होते हैं बस उनके स्थान परिवर्तित होते रहते हैं। एक त्रिकोण का पहला बिन्दु दूसरे त्रिकोण में चला जाता है और उसका स्थान कोई और बिन्दु ले लेता है। परन्तु वह बिन्दु जहाँ से आया और जो बिन्दु यहाँ से गया दोनों अपने–अपने स्थानों से कभी जुड़ते हैं और कभी टूटते हैं। यह यंत्रणा अतीव विडम्बनापूर्ण है।

चाँदी में बर्फ पर कहानी के रचना संसार में दो त्रिकोण ऐसे हैं। पहले त्रिकोण में हेम, कल्याणी और मीरा है। दूसरे त्रिकोण में अविनाश, कल्याणी और हेम हैं। इन दोनों त्रिकोण में आने – जाने का प्रयत्न करते हैं और उन बिन्दुओं के संतुलन को नष्ट करते हैं।

हेम कल्याणी के लिए प्रथम व्यक्ति है। वह उसे अपने एकनिष्ठ समपर्णों से भी बाँध नहीं पाती। हेम विदेश जाता है, तथा वहाँ एक भारतीय संस्कृति युक्त विदेशी मूल की लड़की मेरी से बंध जाता है। मेरी हेम से बंधने के बाद भी पुरुष मित्रों के साथ उन्मुक्त रूप से घूमती है। हेम और मेरी के मध्य अब वह हिम बिन्दु आ जाता है जो

दोनों को ठण्डापन प्रदान करते हैं ऐसे में कल्यानी नामक पहला चेहरा जो कभी इस त्रिकोण में प्रथम स्थान पर था। पुनः झाँकने लगता है। वह कल्याणी से अपने को जुड़ा हुआ पुनः महसूस करता है परन्तु जब कल्याणी अविनाश के साथ विदेश में हेम से मिलती है तो वह स्तब्ध रह जाता है। जैसे उसका अपना कुछ खो गया हो। रचना के धरातल पर मेरी और कल्याणी एक दूसरे का साक्षात्कार करती हैं तथा मन ही में एक दूसरे को तौलती हैं। अब हेम अपने त्रिकोण से निकल कर पुनः कल्याणी व अविनाश के मध्य तृतीय व्यक्ति के रूप में उपस्थित होता है। तथा उसकी अनुपस्थिति में मेरी व उसे मध्य पियरे तीसरा व्यक्ति बनकर आता है। संबंध तब और अधिक मार्मिक हो जाते हैं जब हेम को कल्याणी का तिरस्कार पूर्ण निर्मम अस्वीकार तथा पियरे को मेरी का निमन्त्रण भरा स्वीकार देती है।

टूटे हुए –

क्या एक टूटा हुआ व्यक्ति किसी तीसरे को तोड़े बिना उससे जुड़ कर अपने को जोड़ सकता है? निश्चित ही इस प्रश्न का एक उत्तर नहीं है। विभिन्न प्रसंगों की सापेक्षता में इसके अलग – अलग उत्तर होंगे।

"टूटे हुए" कहानी में ऐसे ही उत्तर की खोज की एक दिशा है इसमें टूटने की प्रक्रिया में पड़ी है – त्रिवेणी। वह खण्डित है –– इस अर्थ में कि वह अपने प्रोफेसर पति से जुड़कर जो पुत्र प्राप्त

करती है वह कोई उपलब्धि नहीं और उसके जीवन में पुनः पुत्र पाने का क्षण भी नहीं आ पाता। इसी धरातल पर वह न केवल अपने में टूटती है बल्कि अपने पति से भी टूटने लगती है। अपने को जोड़ने के लिए वह बाहर के कई व्यक्तियों के बारे में जुड़ी होगी ऐसा अपवाद उसके बारे में फैलने लगता है तभी वह भास्कर के संपर्क में आती है और एक सिलसिला आरम्भ हो जाता है उसके जुड़ने और टूटने का। जहाँ एक त्रिवेणी टी.टी. भास्कर से जुड़ने लगती है। वही भास्कर अपनी प्रस्तावित वाग्दत्ता से टूटने लगता है। इस स्थिति में त्रिवेणी व भास्कर में कोई झिझक या अपराध बोध नहीं होता। भास्कर त्रिवेणी के प्रति अत्यधिक व्याकुल हो उठता है तथा उसके पति के प्रति आदर भाव का अभिनय भी प्रस्तुत करता है। इसलिए भी वह त्रिवेणी के लिए वैसी सुख-सुविधाओं की सम्पन्नता जुटाने में अपने को असमर्थ अनुभव करता है साथ ही वह और त्रिवेणी अपनी नौकरानी और मित्र इलेन के कमरे में निरन्तर आत्म समर्पित होते रहते हैं। इसी धरातल पर वे जुड़ कर भी उत्तरोत्तर टूटने के बोध से मुक्त नहीं हो पाते।

निष्कर्ष स्थापना -

उषा प्रियंवदा की कहानियों में तीसरे व्यक्ति की हवा के लिए जो एक छोटा सा झरोखा "पूर्ति" में खुलता है वह धीरे-धीरे गुप्तद्वार, उपद्वार, मुख्यद्वार बनने लगता है। वह तीसरा आदमी जो चुपके - चुपके द्वारा थपथपाता है अब सीना तान कर मुख्य द्वार पर

आने लगता है। पूर्ति में तारा अपने पहले पुरुष से ऊब कर नलिन के संपर्क में जाती है। जुड़ने के लिए नहीं बल्कि अपराध बोध के एक चुटकी भर सुख बटोरने के लिए वह कहीं कोई हस्तक्षेप नहीं करती है न ही होने देती है। "मोहबंध" में यह हस्तक्षेप बढ़ने लगता है अचला और नीलू के अपने पुरुष हैं परन्तु जब वे पाती हैं कि उनमें से एक का पुरुष उससे हट कर उनमें से ही दूसरी की ओर खिंचा जा रहा है तब उनमें ही भूमिका परिवर्तन होने लगता है और एक दूसरे से ही तीसरे का दंश पाने लगती है। संबंधों में उलझाव आ जाता है। "कोई नहीं" में भी ऐसा ही चतुष्कोण है। उसमें जब एक बिन्दु दूसरे बिन्दु के आकर्षण में अपने केन्द्र से टूटता है तब उसके लिए रिक्त स्थान को भरने के लिए कोई और बिन्दु विकेन्द्रित होता है। उस चतुष्कोण में यह टूटने जुड़ने की प्रक्रिया गम्भीर हो उठती है सभी एक दूसरे को तीसरे का संत्रास देने लगते हैं। "चाँदनी में बर्फ " पर दो त्रिकोण हैं। इन दोनों में हेम और कल्याणी दोनों ही त्रिकोणों में हैं। परिणामतः दोनों ही त्रिकोण खण्डित होते हैं सभी तीसरे का विषदंत पाते हैं। परन्तु "झूठा दर्पण" में यह त्रिकोण खण्डित नहीं होती। मूलतः दो बिन्दु है मीरा और यति। अमृता अपने पति से अलगाव में आ कर अपने लिए नए पुरुष की खोज में है उसके जुड़ने से यह त्रिकोण बन जाती है। अमृता इन दिनों में कोई हस्तक्षेप नहीं करती। कभी-कभी वह मीरा को तीसरे का एहसास देने लगती है। परन्तु यह एहसास तब मिथ्या हो जाता है जब अमृता मीरा और यति के माध्यम से इस त्रिकोण से बाहर अपने लिए कोई बिन्दु खोजने लगती है। ऐसी ही त्रिकोण

"एक कोई दूसरा" में है। वहाँ बिन्दु है डॉ0 कुमार और लक्ष्मी। नीलांजना इनसे जुड़ कर एक त्रिकोण की रचना करती है परन्तु वह इन दोनों में कोई हस्तक्षेप नहीं करती। दोनों के प्रति उसमें आस्था है परन्तु यहाँ भी लक्ष्मी निरंजना में तीसरे आदमी की झलक पाती है। यह संशय गहराने से पूर्व ही छंट जाता है। नीलांजना उनके माध्यम से अपने लिए अनुकूल व्यक्ति की खोज जारी रखती है। प्रतिध्वनियाँ में जो त्रिकोण बनती है उसका दूसरे और तीसरे व्यक्ति की रचनात्मक भूमिका है। बसु अपने परिवार से उखड़ती है व पति से टूटती है। पति श्यामल उसका आत्मीय बन कर आता है उसे संशयमुक्त कर तीसरे व्यक्ति से स्थाई रूप से जुड़ने में रचनात्मक भूमिका निभाता है। तीसरा व्यक्ति भी उसे पहले पुरुष की निरपेक्षता में स्वीकार करता है। रचना में तीसरा व्यक्ति तो है परन्तु वह किसी भी धरातल पर संत्रास नहीं जगाता है। "कितना बड़ा झूठ" में तीसरा व्यक्ति दोहरी भूमिका निभाता है। मैक्स किरन और विश्वेश्वर में तीसरा व्यक्ति है। एक ओर वह अपने हस्तक्षेप से उन दोनों को खण्डित नहीं होने देता और दूसरी ओर किरन के कारण अपने और वारिया के बीच दीवार नहीं उठने देता। परन्तु अब किरन तीसरे की भूमिका में आती है। तब वह मैक्स को अपने और यति के बीच स्वीकृति दिलाती है। बिना किसी अपराध भावना के। परन्तु स्वयं मैक्स और वारिया में उपस्थित होकर वारिया को तीसरे व्यक्ति का दंश देती है। उसके पति परास्त भावना से स्वयं संत्रास्त भी रहती है। "सम्बन्ध" की त्रिकोण में श्यामला विवाहित सर्जन से जुड़ती है। सर्जन पत्नी के अतिरिक्त श्यामला के बने संबंधों को भी जीती है परन्तु सर्वथा अप्रतिबद्ध मुद्रा में।

ट्रिप की मुद्रा में तीसरा व्यक्ति है परन्तु उसका कोई आतंक नहीं है दोनों बिन्दु एक सन्धि पत्र पर हस्ताक्षर करते हैं। स्टीफन अपनी बीबी बिना विच्छेद के दूसरे व्यक्ति को सौंप देता है परन्तु दूसरे पुरुष से जिस संतान को उसकी बीबी जन्म देगी उसके भरण पोषण का दायित्व दूसरे का होगा। स्वीकृति में भी संबंधों की लगभग ऐसी ही दिशाएं हैं। जया और उसके

पति सत्य के संबंधों में घास उग आई है। जया सत्य को अस्वीकार किए बिना ही उसके अतिरिक्त किसी तीसरे पुरुष को स्वीकार करने की मुद्रा में है। परन्तु इस रचना में ट्रिप जैसा कोई सन्धि पत्र नहीं है। इतना अवश्य है कि सत्य ने अपनी बीबी से तीसरे से जुड़ने की स्थिति में मौन स्वीकृति दे दी इसलिए कि उसके कारण ही जया को तीसरे व्यक्ति से जुड़ने की आवश्यकता अनुभव होने लगती है। यहाँ जया तो अपने को अपराध बोध से अपने को मुक्त कर लेती है। अपराध भावना किसके प्रति?? उसके पति के प्रति जो एक निमित्त है उसके तीसर से जुड़ने का?? परन्तु पिघलती हुई बर्फ में वीरू अपराधबोध की हिमशिला में नीचे दबने लगता है। वह और अक्षय दोनों प्रतिद्वन्द्वी हैं। सुधीरा के दोनों एक दूसरे के लिए तीसरे हैं। अक्षय वीरू की कार दुर्घटना में हुई मौत का सीधे ही जिम्मेदार है वह सुधीरा को खो बैठता है। अपराध बोध के इस निरन्तर हिमपात में वह छवि से नहीं बंध पाता है यहाँ वह तीसरे आदमी का दंश देता भी है और पाता भी है। अक्षय तीसरे से प्रतिशोध लेने हेतु स्वयं तीसरे की भूमिका में उतरता है। इस बिन्दु पर वह खलनायक सा आचरण करता है।

मछलियाँ में भी विजी प्रतिशोध की मुद्रा में है, परन्तु वह ऐसी क्रूर नहीं है। विजी भी खलनायिका का सा आचरण नहीं करती। वस्तुतः वह तीसरे से प्रतिशोध लेने की भूमिका में क्यों उतरी। मनीष उसे विदेश बुलाता है। एक स्थायी संबंध जोड़ने के लिए। वहाँ जा कर वह पाती है कि मनीष उसके पहुँचने से पूर्व ही किसी से जुड़ चुका है। वह निमंत्रित हो कर अस्वीकृत हुई। यही है प्रतिशोध का बिन्दु। यह ।बन्दु तब और आग्नेय हो जाता है जब वह पाती हे कि उसके नए पुरुष और उसके बीच मुकी नाम की महिला खड़ी। "सागर पार का संगीत" प्रतिशोध से हट कर पे–दर–पे फिसलन से जुड़ा है। एक व्यक्ति से टूट कर व्यक्ति कहीं जुड़ नहीं पाता। जुड़ने के प्रयास में वह उत्तरोत्तर खंडित होता जाता है। इस कहानी में देवयानी की यही त्रासदी है। बराबर विस्थापित होते रहने की इस प्रक्रिया में वह अपने से अपराध–भावना को छिटक चुकी है। इसलिए वह टूटने की प्रत्येक स्थिति में अपने को बिखरने से बचा लेती है। परन्तु अंततः बिखरना ही उसकी नियति है। औस्कर से मिली विपुल सुख सुविधाओं में वह पूर्व पुरुषों को भूल जाती है परन्तु औस्कर की व्यस्तताओं में वह औस्कर को भी भूलने लगती है। तब वह समर्पित होती है यास्पर को। इस धरातल पर वह पाठकीय संवेदना खोने लगती है। टूटे हुए में त्रिवेणी की भी ऐसी त्रासदी उपस्थित होती है। प्रो0 पति से मिला पुत्र उसके लिए कोई अंतिम उपलब्धि नहीं। पति से विच्छेद पाए बिना ही वह बाहर के पुरुषों से खुलती है। इस प्रक्रिया में वह भी विवेकहंता हो चुकी है। संभवतः इसीलिए वह सहजता से उत्तरोत्तर नए पुरुष खोज लेती है। भास्करन ऐसा ही पुरुष है परन्तु

उसमें विवेक का प्रदर्शन भी है। और त्रिवेणी को नौकरानी तथा इलेन के कमरा में जीने की दस्यु भावना भी। इसीलिए ये दोनों अपने आप में तो टूटते ही हैं साथ ही पाठकीय तिरस्कार भी पा जाते हैं। "चाँद चलता रहा" में रोहिणी शर्मा भी एक निरन्तर खोज में है। अरविन्द से स्थायी गठबंधन पाने से पूर्व ही वह नियति द्वारा छली जाती है। एक दुर्घटना में वह उससे स्थायी रूप से दूर हो जाता है। यह उसकी अंतिम पराजय थी। परन्तु इससे पूर्व भी वह कई तीसरों से पराजित हो चुकी है। भले ही उसके मन पर अंतिम विजय पाई थी। विजय, पराजय के इस धरातल पर वह अपना गणित स्वयं नियत करती है। तीसरे व्यक्तियों के आतंक में यात्रा करने वाली रोहिणी अब स्वयं तीसरा व्यक्ति बनने लगती है। निश्चित ही वह उन व्यक्तियों के लिए तीसरा व्यक्ति नहीं बन पाती जो उसके लिए तीसरा व्यक्ति रहे हैं। वह श्यामा और श्रीमती शर्मा को तीसरे का दंश देने लगती है। यह व्यक्तियों से नहीं बल्कि उस स्थिति से प्रतिशोध लेती है जो उसके प्रति इतनी क्रूर हो उठी है। अतः प्रतिशोध का यह धरातल मछलियाँ में उपस्थित प्रतिशोध के धरातल से अलग प्रकार का है। जहाँ तीसरे व्यक्ति में पहले पुरुष की खोज भी हुई है। "नींद" में यही आयाम उद्घाटित हुआ है। इसकी नायिका अपने प्रथम पुरुष से अलगाव में है। यह स्थिति उसके लिए असह्य हो उठी है। वह किसी तीसरे से जुड़ने की मनः स्थिति में नहीं हैं। वह किसी भी अन्य पुरुष के संपर्क में जाती है। वहाँ वह स्वयं को उस तीसरे से निस्संग रखती है। परन्तु उसमें अपने प्रथम पुरुष का साक्षात्कार कर उन क्षणों को पकड़ना चाहती है। उस धरातल पर जो भी पुरुष उसके संपर्क में

आता है। प्रत्येक संपर्क उसमें प्रथम पुरुष को जीवित कर जाता है। यह धरातल तीसरे के अस्वीकार और स्वीकार का है। ऐसा ही धरातल **"दृष्टिबोध"** में उभरता है। मधुर ऐसी महिला है जो प्रत्येक पुरुष संपर्क को क्रम संख्या से अलग होकर जीती है। प्रत्येक संपर्क उसके लिए निरपेक्ष और स्वतंत्र इकाई है। उसके आस्वादन का भी स्वतंत्र धरातल है। एसे ही धरातल पर वह सांव को पाती है। सांव उसके सहयोगी चन्हा का विच्छेद में आया हुआ पति है। वह इस तीसरे को स्पष्ट अस्वीकार कर देती है। इसलिए नहीं कि वह चन्हा का पति है उसके मन में चन्हा के प्रति कोई संवेदना बन चुकी है। अस्वीकार का कारण और है। सांब मधुर से खुलते समय अपने पूर्व संबंधो से उसी तरह निरपेक्ष नहीं हो पाता है जिस तरह कि मधुर। ऐसे व्यक्ति से कैसे जुड़ा जा सकता है? चन्हा से विच्छेद में आ चुके सांवब पर उस समय भी चंहा छाई रहती है जब वह एकांत समर्पणों में मधुर से संवाद जोड़ने लगता है। ऐसा व्यक्ति मधुर के लिए तुरन्त तीसरा व्यक्ति बन जाता है। दूसरे क्षण से पूर्व ही मधुर सांब के लिए अपने द्वार बन्द कर देती है। वह सवर्था अवांछित पुरुष बन जाता है। "दो अंधेरे" में तीसरे का संशय दो आयामों में फैला है। एक है वास्तविक आयाम जिसमें कौशिल्या अपने पति दिनेश से अलग खड़ी है। दोनों में पड़ोसी युवती केवल तीसरा बन कर खड़ी है। वह कौशिल्या को विस्थापित कर देती है। दूसरे आयाम में सुमित्रा है। वह शंकर से बँधने की प्रक्रिया में है। परन्तु अन्य स्थानान्तरित होने पर शंकर सुमित्रा को अनिर्णय ही छोड़ जाता है। कौशिल्या किसी संभावित तीसरे आदमी के संशय से आतंकित होने लगती

है। कहीं उसकी बहिन सुमित्रा उसी तरह तीसरे से छलना न पा जाए?? यह संभावित दंश वास्तविक दंश के संपर्क में और भी संत्रास पूर्ण हो जाता है। **"जिन्दगी और गुलाब के फूल"** में ठीक इसके विपरीत स्थिति है। **"दो अंधेरे"** में शंकर का स्थातंरण तीसरे के आने की सम्भावनाओं को जन्म देता है। **जिंदगी और गुलाब के फूल** में सुबोध नौकरी न मिलने के कारण तीसरे से संत्रास्त होता है। शोभा उसकी पसंद है। उससे निश्चित हुआ गठबंधन इसलिए स्थगित होता है कि उसके पास खड़े होने का कोई वास्तविक आधार नहीं है। शोभा अन्यत्र प्रस्तावित होती है। एक ओर यह नया पुरुष उसे तीसरे आदमी की पीड़ा दे जाता है दूसरे ही वह अपने ही घर में एक अतिरिक्त तीसरा आदमी बन जाता है। तीसरे का यह दोहरा संत्रास उसे हवाक्त कर जाता है। परन्तु **जाले** में तीसरा व्यक्ति प्रथम दो को जोड़ने और तोड़ने की दोनों प्रकार की भूमिकाएँ निभाता है। यहाँ एक चतुष्कोण है। पहले ओर दूसरे कोणों पर राजेश्वर और कैमुदी हैं। तीसरे और चौथे कोण पर राजेश्वर और गुलबियाँ हैं। पूर्व दोनों बिन्दु एक प्रकार से कटे हुए द्वीप हैं। ठाकुर के चले जाने पर दोनों अपनी – अपनी नौकाओं पर बाहर निकलते हैं एक दूसरे के संपर्क में अपनी पहिचान पाते हैं। अतंतः एक हो जाते हैं। ठाकुर के जाने के बाद ये द्वीप मिल जाते हैं। परन्तु अगले मोड़ पर जब ठाकुर गुलबियां को लेकर लौट आता है तब वह कारण तिरोहित होने लगता है जो राजेश्वर और कौमुदी को बाँटा गया था। वे पाते हैं कि वे पुनः द्वीप बनने लगे हैं। इधर **"कँटीली छाँह"** में जगत बाबू यथार्थ धरातल पर उपस्थित तीसरे का डंक पाते हैं। राधा उनकी परिचायिका है। उनकी

दंभी बीबी उसे तीसरा व्यक्ति मान बैठती है और घर त्याग कर चली जाती है। अस्वस्थ्य जगत बाबू राधा की एकनिष्ठ परिचर्या से स्वास्थ्य लाभ तो करते हैं साथ ही लोकापवाद भी अर्जित करते हैं। लोकापवाद पत्नी की अनुपस्थिति में राधा से एक तीसरे व्यक्ति से जुड़ने का। वे इतने संत्रास्त हो उठते हैं कि एक रात चुपचाप घर से निकल जाते हैं। एक अवास्तविक तीसरे आदमी के कारण मिल अपयश में जी पाना उनके लिए दूभर हो जाता है।

समापन बिन्दु –

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि ऊषा प्रियंवदा की कहानी में मुख्यतः दो प्रकार का परिवेश है –––

– भारतीय परिवेश

– विदेश परिवेश

भारतीय परिवेश में जन्म ले रहा तीसरा आदमी विदेशी परिवेश में जन्म ले चुके तीसरे आदमी की तुलना में कहीं अधिक क्रूर, निर्मम, निरपेक्ष, अप्रतिबद्ध और अरचनात्मक प्रकार है। तीसरे आदमी के संपर्क में खंडित होने की प्रक्रिया जितनी विदेशों में तीव्र है उतनी संभवतः भारतीय परिवेश में उनकी रचनाओं में नहीं हो पाई। भारतीय जीवन का तीसरा आदमी भी संत्रासदायक है। परन्तु विदेशी परिवेश में विदेशी तीसरा आदमी और भारतीय मूल का तीसरा आदमी अत्यधिक तीव्र दंश दे जाते हैं। विदेशों में विदेशी तीसरे व्यक्ति की अपेक्षा भारतीय मूल के तीसरे

व्यक्ति का दंश कम विषधक है। क्योंकि विदेश के विदेशी आचरण में भी उनके भारतीय संस्कार किसी न किसी अंश में जीवित रहते हैं। तीसरा व्यक्ति, विदेशी, अविदेशी दोनों ही कहीं – कहीं अमानवीय हो उठे हैं और ऐसे संदर्भों में वे खलनायक की भूमिका की ओर अग्रसर होते प्रतीत हुए हैं। एक और बात इनकी रचनाओं में उभर आई है। प्रियंवदा के नारी पात्र ही अधिकांशतः देहसुख के लिए पुरुष परिवर्तन करते मिलेंगे।

उनमें संबंधों को जीने की तीव्रता पुरुषों से अधिक मिलती है। वही अपराध भावना से मुक्त हो कर तीसरे पुरुष के संपर्कों में अपने को प्रस्तुत करती हैं।

उपन्यासों का परिचय

पचपन खंभे लाल दीवारें –

हिंदी की विशिष्ट कथाकार ऊषा प्रियंवदा का यह पहला उपन्यास है। उपन्यास में सुषमा नायिका है जिसके माध्यम से एक भारतीय नारी की सामाजिक–आर्थिक विवशताओं से जन्मी मानसिक यंत्रणा का बड़ा ही मार्मिक चित्रण हुआ है। छात्रावास के पचपन खंभे और लाल दीवारें उन परिस्थितियों के प्रतीक हैं, जिनमें रहकर सुषमा को ऊब और घुटन का तीव्र अहसास होता है। उन परिस्थितियों के बीच जीना ही उसकी नियत है। समकालीन हिन्दी कथा साहित्य में यह कथाकृति विशेष रूप से चर्चित हुई है।

रुकोगी नहीं राधिका –

ऊषा प्रियंवदा का यह बहुचर्चित उपन्यास एक ऐसी स्त्री की कहानी है जो अपने आप में उलझ गयी है और अपनी खोज में अपने ही अन्दर पैठ कर यात्रा कर रही है। विदेश में जाकर अपने परिवेश के प्रति व्यग्रता और उस परिवेश में लौटकर उसमें भोगभंग के कारण आखिर उसी के भावनात्मक लगाव में निहित है। राधिका के इस द्वन्द्व को शिवानी ने अत्यन्त सूक्ष्मता और तन्मयता से चित्रित किया है। उससे पाठक अभिभूत हो उठता है और राधिका के निर्णय से आत्मतुष्ट भी। राधिका इस उपन्यास की नायिका है जो अपने घर, भारत में अकेलापन झेलती है, अमरीका पहुँचकर उसकी भयावहता और भी सघन हो उठती है। उसके समक्ष एक सांस्कृति शून्यता की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। नये – नये संबंधों की रसवयता उसके जीवन में आती है किन्तु इस रसमयता के बावजूद, उसका अजनबीपन बढ़ता जाता है। वह लौटना चाहती है, अपने घर – परिवार, अपने देश, अपने पिता के पास, जिनसे उसे गहरा अनुराग है। वह लौटकर भारत पुनः आती है, किन्तु उसका व्यक्तित्व विभाजित हो जाता है।

तृतीय – अध्याय

अध्याय – 3

आलोच्य कथकारों के साहित्य में मानव सौन्दर्य

मानव – सौन्दर्य

मानव सौन्दर्य एक ऐसा सौन्दर्य है जिसके अंतर्गत पुरुष और नारी दोनों का सौन्दर्य आता है। पुरुष और नारी सृष्टि के के आकर्षण के केन्द्र रहे हैं। जहाँ पुरुष का सौन्दर्य पुरुषार्थ का प्रतीक धर्म रहा है, वहीं नारी का सौन्दर्य पुरुष के लिए मुक्ति का धाम। सौन्दर्य ही शिवत्व का तथा साहित्य का मूल राग रहा है। सौन्दर्य के प्रति रचनाकारों का सहज अभिनिवेश होता है। हरि कथा की भाँति सौन्दर्य भी अनंत है। सौन्दर्य व्यक्ति के अन्तर और बाह्य रूप का एक संस्कार विशेष है। सौन्दर्य जहाँ शिवत्व और सृष्टि का मूल राग है वहीं वह चेतन और मन के अवचेतन का मधुमय पराग भी कहा गया है। साहित्य कला सभी सौन्दर्य की देहरी पर समर्पित होते देखे गये हैं। सौन्दर्य के संबंध में डॉ0 ललित की अवधारणा एक समग्र अवधारणा प्रतीत होती है।

"यह सौन्दर्य शिवत्व।
सृष्टि का मूल राग है.
सत्य वही चेतन का, मन के अवचेतन का
और सृष्टि – सेचन का यह मधुमय पराग है
यह पूजा आराधना का तप तेज प्राण है
किसी अपर्णा के तप का सर्वस्व दान है
और यही तुलसीदास है लोचन का फल है
नयनों की निर्झरणी का यह गंगा जल है

पूजा की यह वस्तु भावना की चर्या है

सम्वेदना कला की काव्य – तपस्चर्या है

प्रणय – तपस्या कविता का इतिहास यही है

और सृष्टि का आदिम – मूलोच्छ्वास यही है।[1]

मानवीय सौन्दर्य जो मूलतः रचनाकारों का प्रेरक रहा है वह साहित्य में प्रायः दो रूपों में पाया जाता है। पुरुष सोन्दर्य ओर स्त्री सोन्दर्य –

1. पुरुष सोन्दर्य –

यह सोन्दर्य सर्वाधिक गंभीर और संयत होता है। इसका चित्रण बहुत कम हुआ है। पुरुष का सौन्दर्य इसकी कार्य कुशलता के आधार पर किया जाता हे अर्थात् शारीरिक दृष्टि से कुरूप व्यक्ति भी सुन्दर सिद्ध हो सकता है और शारीरिक दृष्टि से सुन्दर भी कुरूप हो सकता है। लोक मंगल की सकाम साधना से युक्त ये गुण कर्तव्यपरायणता, त्याग, पर दुःखकातरता, परोपकार, इन्द्रियनिग्रह, कपट, सहिष्णुता, अहिंसा आदि उसे सोन्दर्यशाली बनाते हैं।

2. नारी सोन्दर्य –

सोन्दर्य के संसार में नारी सोन्दर्य अत्यंत कमनीय है, सांसारिक कान्तता सोन्दर्य इसी से समुद्भूत है। नारी की बाह्य

---

1. अभिशप्त शिला, चंद्रिका प्रसाद दीक्षित ललित, पृ0 – 10

रूपाकृति आकर्षक एवं आल्हादक होती है। नारी सौन्दर्य दो रूपों में चित्रित है –

1. बाह्य सोन्दर्य 2. अन्तः सोन्दर्य

प्राचीन तथा मध्यकाल में नारी का बाह्य रुपांकन करना ही हिन्दी रचनाकारों का आवश्यक कर्म था। हजारी प्रसाद द्विवेदी – "प्राचीनकाल में बाह्य सौन्दर्य वर्णन भी रचनाकारों का एक आवश्यक अंग है। इसके लिए अनेक रूढ़ियों (नख शिख ऋतु वर्णन, वारह माला) का भी ग्रहण और पालन हुआ है।"

नारी के बाह्य सोन्दर्य के अंतर्गत अंग–प्रत्यंग, वेष–भूषा, आभूषण, आलेपन, एवं अनुभावनों का वर्णन व्यापक रीति से किया जाता है। अंगों के वर्णन में उसकी स्निग्धता, गठन, सुधरता, सुडोलता. मृदुलता ओर सुकुमारता, पुष्टता तथा आयु, वर्ण, कद, स्वास्थ्य आदि का वर्णन होता है।

अतः सोन्दर्य के अंतर्गत नारी के शील, सत्यनिष्ठता, लज्जा, सेवा, त्याग, करुणा, उदारता, विनम्रता आदि गुण आते हैं। नारी का बाह्य रूप उसके शील से ही दीपित होता है।

शिवानी के कथा साहित्य में पुरुष सौन्दर्य

शिवानी के कथा साहित्य में पुरुष सौन्दर्य का वर्णन नारी सौन्दर्य के वर्णन की तुलना में उतना प्रभावी नहीं सिद्ध होता। पुरुष सौन्दर्य की प्रशंसा भी वैसी नहीं मिलती जैसी नारी सौन्दर्य की पुरुष

सौन्दर्य के अंतर्गत शिवानी ने पुरुष के जिन मुख्य अंगों का वर्णन किया है। उनमें से उसका प्रदीप्त ललाट, उसकी सुडौल नासिका, तथा उसके मुख पर सुशोभित होने वाले मुच्छ और दाढ़ी आदि का वर्णन ही मिलता है। शारीरिक सौष्ठव में स्फूर्ति, पौरुष प्रलम्ब काया तथा धातव मूर्ति और आकार पर ही शिवानी की दृष्टि मुग्ध होती है। पुरुष सौन्दर्य के निरुपण में उनकी दृष्टि मूलतः भारतीय और सांस्कृतिक दिखाई पड़ती है। नारी में जहाँ वो कोमलता ओर सौकुमार्य को लक्ष्य में रखती हैं, वहीं पुरुष के सोन्दर्य वर्णन में उनकी दृष्टि दीप्ति और पुरुषार्थ पर अधिक रहती है। पुरुष सोन्दर्य का आधार नारी के प्रति पुरुष के दृष्टिकोण को भी ध्यान में रख कर किया गया है। वे पुरुष सोन्दर्य में प्रधानों को नहीं बल्कि एक कर्मयोगी और संन्यासी जैसी कर्मठ सेवा के भाव को चित्रत करना चाहती हैं। शिवत्व के प्रति उनमें एक विशेष आकर्षण दिखाई पड़ता है। इसीलिए साधु व्यक्तित्व वाले पुरुषों पर शिवानी की सोन्दर्य दृष्टि अधिक ठहरती है।

शिवानी मानव आकृतियों में देवमूर्ति और गुरुकुल के गुरूदेव की छाया भी चित्रित करना चाहती हैं। सुडोल और प्रलम्ब आर्य – व्यक्तित्व उनके पुरुष सोन्दर्य से झलकने लगते हैं। शिवानी पुरुष सोन्दर्य के अंतर्गत भूषणों का प्रयोग कम कराती हैं। वे ऐसे पुरुषों को भी अपनी सौन्दर्य दृष्टि से अवतरित करती हैं जिनमें पराक्रम हो, जिनकी आँखों में शृंगार दृष्टि हो तथा जो शिव स्वरूप हो।

सौन्दर्य चेतना के दो स्तर हैं, मानव विग्रह का बाह्य सौन्दर्य और आन्तरिक सौन्दर्य। भारतीय दृष्टि बाह्य की अपेक्षा आन्तरिक सौन्दर्य चित्रण पर ही अधिक रही है। यद्यपि आवयविक अनुपात, बाह्य सुडौलता पर हमारे यहाँ की मूर्तिकला में ध्यान रखा गया है। ऋग्वेद में इन्द्र का विग्रह वर्णन करते हुए उसे ओजपूर्ण, वृषभ, वज्रवाहु और सुदृढ़ अंगोवाला कहा गया है –

ओजायमानं यो अहि जधान यः साम या निचितो वज्रबाहु ये।

वज्रहस्तः स जनास्य इन्द्रः।"[1]

शिवानी ने वैदिक साहित्य में वर्णित इन्द्र को अपना आधार नहीं बनाया। पुरुष सौन्दर्य का निरूपण शिवानी के कथा साहित्य में पर्याप्त संस्कारिक दिखाई पड़ता है। उदाहरण के लिए ---- दो बड़े–2 लाल फूल तोड़कर गुरू पोप ने मुझे थमाये। मैंने जूड़े में खोंस लिये तो वे प्रसन्न हो गये। अपनी दूधिया हँसी का अर्घ मुझे समर्पित कर उन्होंने अपनी भाषा में मुझे क्या कहा, मैं न समझने पर भी समझ गये कि वे कह रहे हैं – "वाह बहुत अच्छे लग रहे हैं।[2]

शिवानी ने पुरुष सौन्दर्य में बुन्देलखण्ड के शार्य को भी रेखांकित किया है ------

नाक सुडौल और खड्ग की धार सी तीखी थी। और डरावनी बड़ी–2 आखों बैल की सी भावनाहीन फटी–2 बाहर को निकली और मूँछे बुन्देलखण्डी रजवाड़ों की सज्जा से बीच में विभक्त कर कान

---

1. ऋग्वेद 2/12/3
   चरैवेति, शिवानी पृ0 – 39

2. स्वयं सिद्धा शिवानी पृ0 – 88

पुरुषोचित सोन्दर्य की एक अन्य झलक शिवानी में इस प्रकार है –

उसके पूरे चेहरे पर, उनकी नाक ही सबसे रहस्यमय अवयव थी, ऐसी मोटी और इतनी लम्बी नाक मैंने कभी नहीं देखी। दोनों नथुनों के गोहर से निकले सफेद बालों के गुच्छे और वेसे ही केश गुच्छ कानों से निकल कर देखने वाले को सहमा देते थे।[1]

पुरुष सोन्दर्य को शिवानी नारी के लिए सार्वभोम आकर्षण का विषय बताती है ------

मोहन लाल को भला अल्मोड़ा की कोन किशोरी नहीं जानती थी। अधेड़ चेहरा, स्याह रंग ओर सींक सी उँगलियों में गजब की फुर्ती पतले तवे पर सिकती गुलाबी आलू की टिकिया, चुटकियों से छिड़का गया मसाला और खट्टी – मीटी चटनी डाल बनाई गई अमृत बूटी। केसा अद्‌भुत व्यक्ति था वह![2]

पुरुष सोन्दर्य को शिवत्व रूप में शिवानी ने वर्णित किया है ------

"संन्यासी की अब तक अस्पष्ट आकृति सहसा खिड़की खुलने पर स्पष्ट हो उठी। अंग भर में पुती भस्म, आश्चर्यजनक रूप से लम्बा कद ओर बैठने की अडिग मुद्रा देखकर लग रहा था, जेसे धूल–गर्द के अम्बार से ढकी कोई मानव मूर्ति हो।[2]

---

1. कृष्ण वेणी शिवानी, पृ० – 32
2. विष कन्या, शिवानी, पृ० – 62
3. भैरवी, शिवानी, पृ० – 13

शिवानी के कथा साहित्य में स्त्री सोन्दर्य

डॉ0 रामानन्द तिवारी ने रूप के अतिशय को सौन्दर्य की संज्ञा दी है।[1] मानवीय सृष्टि में नारी रूप कांति, लावण्य, उत्कर्ष सभी दृष्टियों से श्रेष्ठतर है। डॉ0 ललित ने नारी के अतिशय सोन्दर्य विधान को विधाता के करुण विधान की संज्ञा दी है –

सर्वजयी सम्राट/ तुम्हारी हस्थावली विराट/ किन्तु नारी रचकर केसी करुणा की/ रूप देह को दिया और मन के भीतर तृष्णाएँ पाली।[2]

नारी रूप में यौवन ओर लावण्य का विशेष आलोक रवीन्द्र के साहित्य में परिलक्षित होता है। रवीन्द्र में नारी रूप चित्रण की जितनी विशेषताएँ हो सकती हैं, वे सभी पायी जाती हैं। उनके नारी रूप में गति, तरंगमयता, लालित्य, माधुर्य, कोमलता, लय अंगो का सन्तुलन प्रतिफलित हुआ है। रवीन्द्र के सानिध्य में रहने वाली शिवानी पर रवीन्द्र की सौन्दर्य चेतना का प्रभाव परिलक्षित होता है।

शिवानी ने अपने कथा साहित्य में नारी के किशोरी रूप, वधू रूप, यौवन से परिपूर्ण यौवना रूप, प्रेयसी और कल्याणी सभी रूपों के चित्र हैं। नारी के अंगों की सुषमा, लावण्य, शोभा, गंभीरता, साक्षरता, कान्ति और वर्ण आदि को रेखांकित करने में शिवानी को अद्भुत सफलता प्राप्त हुयी है।

---

1. सत्यं शिवं, सुन्दरम्, डॉ0 रामानन्द विवारी, पृ0 – 839
2. अभिशप्त शिला, डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित ललित, पृ0 – 66

शिवानी ने नारी सोंदर्य को मात्र आंगिक नहीं रख वरन् उसमें एक सचेतन नारी का हृदय तरंगित होता हैं। नारी का वाह्य सोन्दर्य तथा उसका आन्तरिक सोन्दर्य दोनों शिवानी के कथा साहित्य में मूर्तित हुए हैं।

नारी सोन्दर्य का चित्रण शिवानी ने विभिन्न स्थलों पर अनेक रूपों में किया हैं, जिसमें नारी प्रेयसी, कल्याणी, आदि रूपों में चित्रित हुयी हैं:

1. एक बार हजारी बाग घूमने गये वहाँ एक किशोरी की नाक की लोंग देखी, पत्ते के आकार की तुरन्त पत्र छवि में वह नाक छवि आई।[1]

भारतीय नारी के अतिरिक्त विदेशी नारियों का सोन्दर्य भी शिवानी को मुग्ध करता हैं,।

"पति की अपेक्षा पत्नी अधिक हष्ट-पुष्ट घी ठेठ रुसी पहनावा सिर पर बंधा कज्जाकी रंगीन स्कार्फ कानों में एमूरी लटकन,[2]

2. इस हंसमुख दीर्घांगी गम्भीर महिला ने मुझे अत्यन्त प्रभावित किया[3]

3. श्री निकेतन तोलिये का ब्लाउज बना लिया, या जूड़ा बनाकर पलास का फूल लगा लिया।[4]

4. भारतीय नारी के छवि चित्र शिवानी में सम्पूर्णता के साथ उद्घाटित हुए हैं-

(अ) छरहरी कनक छड़ी सी देह

(ब) वह अपने समय की अनूठी सोन्दर्य सम्राज्ञी थी

(स) दीर्घदेही मृणाल की छन्दमयी गति, बिना घुंघुरु बांधे ही वह विन्यास की छम-छम कान गले में पहने गये सर्वथा मोलिक गढ़न के आभूषण, असामान्य रुचि का परिचय देती, पीतापुरी साड़ियाँ ओर सर्वो परि पहली ही झलक

---

1 चरेवेति, शिवानी, पृ0 - 66
2 तदुपरिवत्, पृ0 - 48
3 तदुपरिवत्, पृ0 - 55
4 तदुपरिवत्, पृ0 - 66

में मन में खूंटे से बांधकर रख देने वाली मधुर मुस्कान।[1]

(द) मृणाल झूम-झूम कर मूठ चला रही थी, और देहयष्टि सहसा झूमठी-झूमठी एक रंगीन लट्टू में परिवर्तित होती चली जा रही थी, दीप्ताओं से तमतमा चेहरा,[2]

(य) वही रुतर देह, वैसी ही भुवन मोहनी हंसी, योवन जेसे पाते-पाते फिर लोट आया था किसी बुलन्द ऐतिहासिक किले के झरोखे की संगमरमरी दरार सी कटावदार आँखे, पद विन्यास में वहीं अदृश्य घुंघुरुओं की खनक[3]

(र) शिवानी ने नारी सोन्दर्य में त्याग और साधना संगीत और कलात्मकता अपूर्व योगदान प्रस्तुत किया हैं। लेखिका का ये कथन हैं ना मेरे लिए नारी अपरिमेय शक्ति का प्रतीक रही हैं।[4] नारी के भारतीय रूप की सराहना करते हुए वे नहीं थकती,- "अत्यन्त साधारण सी वेशभूषा सीधे पल्ले की साड़ी उदास सा चेहरा, किन्तु जब हंसी तो वहीं सरल चेहरा एक छण में उद्भाषित हो उठा।[5]

(ल) सोन्दर्य का वेविहय शिवानी में देखने को मिलता हैं- "नानकिन का वो नूरानी चेहरा और दमकता रंग गुस्से से लाल पड़ जाता तो दे और भी सुन्दर लगती यूनानी नाक प्रत्यंचा सी भवे सन सफेद बालों से आती असगर अली के चमेली के तेल की भुवन मोहनी सुगन्ध"[6] अब समझ में आया सुन्दर पत्ते के सोन्दर्य को निखारने के लिए सुन्दर विशिष्ट चेहरा भी उतना ही आवश्यक हैं। लड़की भले ही गरीब रही हो, प्रकृति देवी ने उसके सोन्दर्य भण्डार में चाभी ढूढ़ कर ही लगाई हैं।[7]

सन्मुख नैना देवी की शांत मूर्ति किम्ख्वाब की लंहगो की तह पर तह बनारसी जामदानी दुपट्टे पर रंगवाली की चुनरी, माथे पर बेंदी, कंठ में पंचलड़, सतलड़ हीरे की लोलक वाला नथं,।[8]

---

1. चरैवेति, शिवानी, पृ0-80
2. तदुपरिवत्, पृ0 - 81
3. तदुपरिवत्, पृ0 - 82
4. तदुपरिवत्, पृ0 - 84
5. तदुपरिवत्, पृ0 - 91
6. तदुपरिवत्, पृ0 - 101
7. तदुपरिवत्, पृ0 - 67
8. चरैवेति, शिवानी, पृ0 - 109

(ब) जया की वो लचीली भंगिमा, दोनों हाथ बाग देवी के स्तुति जपार्चन में बंधे खुले लहराते केश, दमकते शुभ्र ललाट पर रोली का लम्बा तिलक। न कोई सज्जा न कोई आभूषण केवल ओठो की कोर पर लगी, माखन चोर भेले कन्हैया श्री अधकोर पर लगी न बीन तिन्की सी चुगलखोर रेखा ऐसी कृपण स्थिति रेखा आज तक उन्होंने किसी के चेहरे पर नहीं देखी थी। न हँसने पर भी लग रहा था कि हंस रही हैं।[1] नारीत्व सहज सोन्दर्य का प्रस्फुटन शिवानी के कथा साहित्य में भरपूर रूप में पाया जाता है। योवन से सुगठित अनुपातयुक्त उसका शरीर बिना आभूषणों के ही दिव्य सोन्दर्य से प्रस्फुटित लग रहा था, इस हार को धारण कर वह वेसी ही खिल उठेगी, जेसे सूर्य की किरणों से कमल।[2] बालूचेरी साड़ी जो वे उसके लिए अपने पश्चिम बंगाल के दोरे से खास विष्णूपुर के लूम से ताजी उतारकर लाये थे, उसके गोर वर्ण को ओर भी निखार रही थी। हाथ में हीरे की चूड़ियाँ झिलमिला रही थीं। नाक में हीरे की लोंग, हाथ की ब्रेसलेटनुमा घड़ी सब आयुध शायद शत्रु पक्ष को पराजित करने के लिए धारण किये गये थे।[3]

---

1. अतिथि, शिवानी पृ0 – 19
2. अतिथि शिवानी, पृ0 – 18
3. अतिथि, पृ0 – 20

वही सतार दुन्धे, भोला चेहरा, लाल टीका, और सिथिल दुबरी, ने चेहरे पर प्रसाधन की भ्रामक भूमिका, न कटीले भ्रू-भंग में विलास का स्पर्श[1] कैसी अम्बान निष्पाप दृष्टि थी उस लड़की की और कैसी स्वाभाविक मुस्कान, ठीक जेसे नवजात शिशु को नींद में ही पिछले जन्म की माता हंसा रही हो।[2] इस प्रकार शिवानी का नारी सौन्दर्य निरूपण अम्लान और निष्पाप दृष्टि वाला बंग संस्कृति से प्रभावित रवीन्द्र के संस्कारों से सुसंस्कृत भारतीय सौन्दर्य को प्रतिष्ठित करने वाला है।

उसका ढीला जोड़ा स्वयं कुबरी बन पीठ पर बिखर गया था, दोनों कानों में झूल रहे झुमके हर गस्से के साथ हिल रहे थे, जुगनू से चलते - चलते उसके बालों में मोंगरे की वेणी टांक दी थी। शिथिल जूड़े के साथ पुष्प गुच्छ स्वयं ही कानों के पास आकर अटक गया था।[3]

(अ) कैसी गढ़न थी उसकी जैसे सांचे में ढली कोई मूर्ति हो। उसके मुख की सरल रेखाओं में, आकृति कि निर्भीक गढ़न में पैरो की दृढ़ता में न जाने कैसा आकर्षण था।[4]

शिवानी के कथा साहित्य में सौन्दर्य उदधि उत्ताल केनिल तरंगों के साथ तरंगायित होता है। ऐसी रूप सम्पदा है जिसको शब्दों में समेटन

---

1. अतिथि, पृ0 - 21
2. अतिथि, पृ0 - 24
3. अतिथि, शिवानी, पृ0 - 220
4. अतिथि, शिवानी, पृ0 - 222

कठिन होता है, और उसी कठिन कार्य को लेखिका ने पूरा किया है। संयत और शालीन शृंगार की मर्यादा को शिवानी जानती हैं, "मजाल है कि कुर्ते का गला जरा सा भी नियत सीमा को लाँघ जाये, गर्दन की हड्डियाँ तक पर्दे में दुबकी रहती हैं।"

शिवानी के नारी सौन्दर्य में कहीं पहाड़ी हरनियाँ हैं और कहीं पहाड़ी कुन्दनियाँ चम्पाकली, कहीं गढवाली चोटियाँ हैं, तो कहीं कश्मीरी दुपट्टों में लहराता हुआ सतरंगी सौन्दर्य। सौन्दर्य की कैसी रसवन्ती धारा शिवानी के साहित्य में प्रवाहित हुई है उसे देखते हुए ये कहने में कोई भी अतिशयोक्ति नहीं प्रतीत होती है, कि शिवानी सिर से पाँव तक सौन्दर्य में ही नहाई हुई हैं। यही सौन्दर्य दृष्टि उनकी रचनात्मक सृष्टि में भी परिलक्षित होती है। सौन्दर्य निरूपण में आञ्चलिकता ने चार चाँद लगा दिये हैं। एक आञ्चलिक सौन्दर्य का चित्र देखिये –

"एक हाथ में धानी हरी चूड़ियाँ भर वह दूसरे हाथ में चूड़ियाँ समेटती पास ही बैठे गोदनियाँ से मोल भाव कर रही थी। "एक हाथ में राधा – कृष्ण गुदवायेंगी हम, और टुड्डी में तिकोनी 3 बुन्दियाँ।[1]

उसने अपनी माँ की नहारी चम्पई रंग पाया था, और पिता के चेहरे की भव्य गढ़न, प्रशस्त ललाट के बीच से मांग निकाल कर और नन्हें सीप से सफेद दानों की सफेदी को कृष्ण केशपाश के वैभव से तनिक ढांककर कैसे मनोहारी बनाया जा सकता है।[2]

---

1. चिर स्वयं , शिवानी, 114
2. चौदह फेरे, शिवानी, पृ0 – 27

शिवानी ने नारी सौन्दर्य को ललित कलाओं का आधार मानते हुए अपनी कलात्मक दृष्टि से भारतीय संस्कारों विशेष रूप से बंगला संस्कृति तथा पर्वतीय संस्कृति से मिले जुले अत्यंत रमणीय एवं मनोरम चित्र विविध रूपों में प्रस्तुत किए हैं। कतिपय उद्धरण यहाँ प्रस्तुत किए जा रहे हैं –

(अ) लाल रेशमी साड़ी की एक-एक भांज उसके शरीर से चिपक गई थी, एक हाथ से साड़ी को ऊँचा उठाने से उसकी बताशे सी गोरी पिंडली, भीग कर, और भी सफेद लग रही थी। ललाट का लाल लंबा टीका, पानी से बह सुभग नसिका पर फैल गया था – एकदम रक्तवर्णी वह रूप देख कर वह अनचीन्हा सुदर्शन अतिथि, अचकचा कर उठ गया।[1]

(ब) भारतीय संस्कति में नारी का स्थान सर्वोपरि है। वह अमूल्य रूप में सौन्दर्य की मूर्ति है, उसके योगदान के बिना मनुष्य की ललित कलाएं कभी सप्राण नहीं हो सकतीं।[2]

(स) हमारी संस्कृति ने सदैव उसी सौन्दर्य को मान्यता दी है जिसके सुवर्ण में शील और विनय का सुहागा मिश्रित है, हमारी इस संस्कृति ने आज तक कभी नारी-सौन्दर्य को, इंच टेप से नाप कर उसे सर्वश्रेष्ठ सुंदरी का ताज नहीं पहनाया गया।[3]

---

1. कालिंदा, शिवानी, पृ0 – 115
2. वातायन, शिवानी, पृ0 – 44
3. वातायन् शिवानी, पृ0 – 100

(द) नारी की सृष्टि केवल विलास के लिए ही नहीं हुई वह वंदनीय है। उसका यह स्वरूप अखंडित रहे इसके लिए यह आवश्यक नहीं कि वह अपने सौन्दर्य का प्रदर्शन करे। सौन्दर्य प्रदर्शित किया नहीं जाता, सूर्य की प्रखर किरणों की भाँति वह स्वयं प्रदर्शित होता है।[1]

(इ) ऐसी सौन्दर्य प्रतियोगिताएं पाश्चात्य परिवेश से ही मेल खाती हैं। भारतीय नारी का जो परम् वंदनीय स्वरूप रहा है उसे ऐसे प्रदर्शन कभी विकृत भी कर सकते हैं। नारी की गरिमामयी तटस्थता ही उसके सौन्दर्य को द्विगुणित करती है उसका प्रदर्शन नहीं। उसके लिए तो यह विदेशी उक्ति ही उचित लगती है – "संसार का सबसे सुगंध वाला पुण्य व्रत है जिसकी सुगन्ध किसी में नहीं मिलती।[2]

शिवानी ने नारी सौन्दर्य चित्रण में प्राच्य एवं प्रतीच्य संस्कृतियों का उद्भुत समन्वय उपस्थित किया है। जहाँ एक ओर वे भारतीय सौन्दर्य को मूर्तित करती हैं। वहीं दूसरी ओर पाश्चात्य सौन्दर्य के भी सम्मोहक तत्व मिलकर नारी को समग्र सृष्टि का प्रतिनिधित्व प्रदान कराया गया है –

---

1. वातायन, शिवानी, पृ0 – 100
2. वातायन, शिवानी, पृ0 – 100

(अ) उत्तेजना से उठता गिरता उसका सुडौल वक्षस्थल, अंगारे से दहकते कपोल और तरंगित भ्रू भ्रंग देख माधवी ने अविश्वास से अपने नवीन सहचर को देखा।[1]

(ब) एक ओर स्फुर–मौल कल्लोलिनी गंगा, दूसरी ओर वीनस की भुवन मोहनी सुन्दरता, प्राच्य, प्रतीच का ये मिलन कैसा लगा आपको।[2]

(स) उसको मैक्सी का गला भी उसी सौन्दर्य से खुला, किसी उत्तुंग पर्वत श्रेणी पर फिसल रहे पहाड़ी झरने के वेग से ही झर झराता नीचे उतर गया था। पतली ग्रीवा में थी सुवर्ण मण्डित रुद्राक्ष की माला, गेरूवा रंग की शांट सिल्क की मैक्सी और कण्ठ की रुद्राक्ष कण्ठी से मेल खाता ही उसका केश विन्यास भी था।[3]

(द) सांचे में ढली काली तनवी देह का वही दैर्ध्य, होठों पर वही स्निग्ध स्मित, काजल से चिरी आँखों में वही चुहल।[4]

(य) लड़की सुनहरी थी इसमें कोई सन्देह नहीं, किन्तु वह सौन्दर्य विदेशी ट्यूलिप और डैफोडिल का सौन्दर्य था।[5]

(ल) मोतियों में छाया की आंतरिक तरलता के समान जो वस्तु अंगों में चमकती है, वही तो लावण्य है।[6]

---

1. स्वयंसिद्धा, शिवानी, पृ0 – 15
2. स्वयंसिद्धा, शिवानी, पृ0 – 66
3. स्वयंसिद्धा, शिवानी, पृ0 – 77
4. कृष्णवेणी, शिवानी, पृ0 – 12
5. कृष्णवेणी, शिवानी, पृ0 – 49
6. श्मशान चंपा, शिवानी, पृ0 – 33

(र) "अरुन्धती का चेहरा विधाता ने अवकाश में ही गठा होगा। खड्ग की धार – सी नाक, छोटे से रसीले अधर और मद भरी आँखें। न कोई मेकअप, न सज्जा, फिर भी अष्टभुजा का सा दिव्य रूप।"[1]

शिवानी नारी सौन्दर्य को अष्टभुजी मूर्ति के रूप में चित्रित करती हुई उसमें दिव्यता का दर्शन करती हैं। रवीन्द्र नाथ सौन्दर्य को प्रत्यक्ष देवता के रूप में मानते थे। शिवानी स्त्री को समस्त जगत् की महाशक्ति के रूप में रूपायित करती हैं। नारी सौन्दर्य का इतना प्रोज्जवल रूप में व्यक्त करती हैं।

उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य में पुरुष सौन्दर्य –

सम्बन्ध कथा के अन्तर्गत "सर्जन" के सौन्दर्य का निरूपण करते हुए उषा प्रियंवदा ने पुरुष के सौन्दर्य में चरित्र की दृढ़ता और आत्म–विश्वास को अंग माना है।

"पुरुष की इस आयु में चरित्र की दृढ़ता उसमें थी, सफल होने का कान्फिडेंस, और दिन–रात मौत और तकलीफ देखते रहने से आँखों में एक अकेली–अकेली उदासी।"[2]

"सत्य कत्थई रंग का, काफी पुराना स्वेटर पहने था, जो उसके गेहुएँ रंग पर बुरा नहीं लगता था। सत्य की गम्भीर काली आँखों घुँघराले बाल काफी आकर्षक लगते थे।"[3]

---

1. स्मृति कलश, शिवानी, पृ0 – 62
2. कितना बड़ा झूठ, ऊषा प्रियंवदा, पृ0 – 12
3. कितना बड़ा झूठ, पृ0 – 82

शिकागो वासी डैन को जो राधिका को आकर्षित कर रहा था, उसका उल्लेख लेखिका ने किया है –

"गर्म जलवायु में उसका रंग तपकर ताँवई हो गया था, और उस वर्ण में स्लेटी रंग की आँखो की दृष्टि अत्यन्त बेध देने वाली लगती थी।"[1]

"पुरुष सौन्दर्य के अन्तर्गत प्रशस्त ललाट, दीप्त आँखो और विचारशील मुख मुद्रा का वर्णन लेखिका ने किया है–

"बदी प्रशस्त ललाट, घनी भौहों के नीचे प्रतिमा दीप्त आँखों के आस–पास नन्हीं–नन्हीं असंख्य सिकुड़ने, वही विचार मग्न मुँह और जब कभी मुस्कराना, तब पूरे चेहरे पर धवल ज्योति का बिखर जाना।"[2]

ऊषा प्रियंवदा ने पुरुष सौन्दर्य में गति शीलता चापल्य के साथ–साथ बाल सुलभ सरलता को भी रेखांकित किया है———————

"मनीस साँवला है, लम्बा दुबला शरीर चलने–फिरने में एक सहज गरिमा लंबा ही चेहरा, मुद्रा में चापल्य और कभी–कभी शिशुओं–सा साख्य।"[3]

जहाँ एक ओर वे चापल्य को पुरुषों का एक मानवीय गुण मानती है वही चारित्रिक विकास की दृष्टि से स्थैर्य को भी मानव सौन्दर्य का अंग स्वीकार करती है ———————

---

1. रुकोगी नहीं राधिका, ऊषा प्रियंवदा पृ0 25
2. तदुपरिवत्, पृ0 42
3. तदुपरिवत् पृ0 68

"मैं संगी चाहती हूँ, जिसमें स्थिरता हो, सौन्दर्य हो जो मुझे मेरे सारे अवगुणों सहित स्वीकार कर ले।"[1]

ऊषा प्रियंवदा के साहित्य में स्त्री सौन्दर्य :-

श्यामला अभी-अभी नहाकर आई थी। सामने के बाल भीगकर अपने-आप दो तीन लटों में घुंघरा गये थे।"[2]

नारी के स्वतन्त्र व्यक्तित्व को ऊषा प्रियंवदा ने सौन्दर्य के अर्न्त किया है-

दुबली-पतली सांवली श्यामला, अविवाहित शरीर अभी भी गठा हुआ है, उसमें युवावस्था की लचक है, चहरे पर लावण्य आकर थम गया है।"[3]

श्यामला ने रुचिरा से अपने स्वतन्त्र व्यक्तित्व पर जो प्रसन्नता व्यक्त की है, वह नारी सौन्दर्य का अंग है कैसे कहें कि मुक्त होकर उसे पहली बार लगा था कि वह एक आकर्षक युवती है, उमंगें और कामनाएँ भरी नहीं हैं। अपने में निहित स्वतन्त्र पूर्ण व्यक्तित्व को पाना कितनी बड़ी उपलब्धि थी।"[4]

किसके आधुनिक शृंगारिका प्रसाधनों का वर्णन करते हुए, ऊषा प्रियंवदा नारी सौन्दर्य का निरूपण करती है -

झुककर उँगलियों से चेहरे पर लगने लगी, माथे पर बालों की सीमा तक,

कानों पर गर्दन पर नीचे जहाँ तक ब्लाउज का गला आरम्भ होता है,

---

1. रुकोगी नहीं राधिका, ऊषा प्रियंवदा पृ0 69
2. कितना बड़ा झूठ, ऊषा प्रियंवदा पृ0 7
3. तदुपरिवत, पृ0 9

फिर फाउन्डेशन, फिर बेहद हल्की रूज, पलकों पर आई लाइनर से लकीरे डाला भौहों को सवाँरा। कानों की लवों पर ईव सेन्ट लरों का सेट, बालों का जूड़ा, फिर हेयर स्प्रे, कानों में बुन्दे, दोनों हाथों में सोने की चूड़ियों से मिलाकर काँच की सफेद चूड़ियाँ, चप्पलें -------[1]

सद्यःस्नाता राधिका के उन्मुक्त केशों के सौन्दर्य पर सहज प्रसन्नता का संकेत लेखिका ने दिया है –

"नहाकर आई राधिका को यह वासंती–सा मौसम अच्छा लगा। बाल खुले हुए पीठ पर फैले थे और कलफदार साड़ी पहनकर उसका मन जैसे एकदम हलका हो आया था।"[2]

उषा प्रियंवदा ने जहाँ पाश्चात्य परिधान, मुद्राओं आदि का नारी सौन्दर्य में चित्रण किया है, वही वे भारतीय परिधान एवं मुद्राओं को भी सौन्दर्य के क्षेत्र में स्थापित करती है –

"विद्या इस समय मूँगा सिल्क की साड़ी में पश्मीने की साड़ी ओढ़े हुए थी, लम्बा, दुबला शरीर, ऊँचा माथा, पतले चेहरे पर खिची–खिची आँखें, खड़ी नाक और बेहद पतले ओंठ। बीच की माँग निकालकर दोनों ओर से सादे प्रलम्ब, छरहरे शरीर और सामन्तीय परिधान को नारी सौन्दर्य के अन्तर्गत वर्णित किया गया है–

"विद्या औसत स्त्रियों से अपेक्षाकृत लम्बी थी, और साड़ी बहुत सावधानी से बाँधती थी, जिससे कि उसके शरीर की सानुपातिकता और भी स्पष्ट हो जाए। साथ ही अधिक रूप से स्वतन्त्र होने के कारण उसके कपड़े काफी मँहगे पर सुरुचिपूर्ण होते थे।"[3]

---

1. कितना बड़ा झूठ, प्रियंवदा पृ0 48
2. रुकोगी नहीं राधिका, शिवानी पृ0 21
3. तदुपरिवत् पृ0 21

उषा प्रियंवदा पाश्चात्य जीवन दर्शन से प्रभावित होने के कारण आधुनिक नारी को रेखांकित करती हुई उसे आधुनिका के रूप में भी प्रस्तुत करती हैं–

अनिता ने इस समय बालों का खूब बड़ा सा जूड़ा बना रखा था। कढ़ी हुई साड़ी, लिपिस्टक, पाउडर, आई पेन्सिल से सँवारी आँखे, तीव्र सुगंधवाला सेंट।[1]

नारी सौन्दर्य के परिधान और वर्ण चित्रण में छोटे आकार और भूरे रंग का संयोजन किया गया है -----

"कारिन कढ़ा हुआ कश्मीरी फिरन पहने थी। बहुत छोट बाल, जिससे उसके सिर का सुंदर आकार दीखता था, छोटा उज्जवल माथा, हल्की भौंहे, ग्रे रंग की आँखें, खड़ी नाक, सुन्दर, हल्के गुलाबी ओंठ।"[2]

कौमार्य एवं लज्जा जैसे मानवीय सौन्दर्य के तत्वों का नियोजन भी लेखिका ने किया है ----

अनछुई सी, कौमार्य की लज्जा से भरपूर।[3]

पुष्प सज्जा नारी सौन्दर्य का एक प्रमुख आकर्षण बिन्दु रहा है। लेखिका की सौन्दर्य दृष्टि उस ओर भी जाती है ------

"राधिका ने बेहद फीके पीले रंग की आरगंडी की साड़ी पहन रखी थी। बालों में पीला फूल खोंस रखा था।"[4]

---

1. रुकोगी नहीं राधिका, पृ0 – 59
2. रुकोगी नहीं राधिका, पृ0 – 66
3. रुकोगी नहीं राधिका, पृ0 – 92
4. रुकोगी नहीं राधिका, पृ0 – 108

नारी सौन्दर्य को चटक रंगों में व्यक्त करने की कला ऊषा प्रियंवदा में परिलक्षित होती है -------

नील सिल्क की साड़ी, उस पर चटक नारंगी बार्डर। नीला ब्लाउज साड़ी में कुछ ऐसा घुल-मिल गया था कि सुनहरे तारों से बुना नारंगी बार्डर ही झिलमिला रहा था। बार्डर के रंग की वैसी ही चटक लिपिस्टिक।[1]

तुलनात्मक समीक्षा -

शिवानी और उषा प्रियंवदा दोनों महिला कथाकारों के मानव सौन्दर्य दृष्टिकोणों के अनुशीलन के पश्चात् तुलनात्मक दृष्टि से विचार करने पर निम्नलिखित बिन्दु उभर कर सामने आते हैं -

(1) शिवानी ने पुरुष सौन्दर्य के जिन अंगों का वर्णन किया है उनमें मुख मण्डल, ललाट, दासिका तथा केश-गुच्छ, मुच्छ, प्रशस्ट ललाट आदि प्रमुख हैं -

ऊषा प्रियंवदा ने भी पुरुष सौन्दर्य के अन्तर्गत प्रशस्त ललाट, दीप्ति आँखों, भ्रकुटियों आदि का चित्रण किया है। इस दृष्टि से दोनों में प्राय: समानता पायी जाती है।

(2) पुरुष सौन्दर्य में शिवानी ने पुरुष की नारी के प्रति स्नेहिल आस्था को प्रमुख रूप से आधार बनाया है जबकि उषा प्रियंवदा ने पुरुष की चारित्रिक दृढ़ता और उसके आत्म विश्वास को महत्व प्रदान किया है।

---

1. **एक कोई दूसरा, ऊषा प्रियंवदा, पृ0 - 12**

(3) शिवानी ने प्रायः पुरुषों के गौर वर्ण का ही अधिकांश रूप में उल्लेख किया है जबकि उषा प्रियंवदा ने पुरुषों के सौन्दर्य में कृष्ण वर्ण का अधिक उपयोग किया है इस अंतर का मूल कारण यह भी है कि शिवानी कुरमांचल प्रदेश के पर्वतीय प्रदेश में जन्मीं वे गौरा पन्त के रूप में स्वयं गौर वर्ण वाली लेखिका हैं साथ ही पर्वतों में गौर वर्ण मुख्य रूप में पाया जाता है अतः अपनी जन्म भूमि के पुरुषोचित सौन्दर्य को वे गौरवर्ण में ही चित्रित करती हैं। इसके विपरीत उषा प्रियंवदा गर्म जलवायु वाले ताम्र वर्ण का उल्लेख करती हैं जिससे आधुनिक युग के श्रमजीवी सौन्दर्य का भी बोध होता है।

(4) शिवानी के पुरुष पात्र प्रायः वैचारिक उत्कर्ष के साथ नहीं चित्रित होते जबकि उषा प्रियंवदा जिन पुरुषों के सौन्दर्य का वर्णन करती है उनमें वैचारिक दीप्ति भी दिखाई पड़ती है।

(5) शिवानी पुरुष सौन्दर्य के अतंर्गत आश्चर्य श्रम, सामर्थ्य आदि का चित्रांकन करती हैं जबकि उषा प्रियंवदा स्थिरता और औदार्य को पुरुष सौन्दर्य के अन्तर्गत समाहित करती हैं।

नारी सौन्दर्य की तुलना -

(1) शिवानी और उषा प्रियंवदा नारी सौन्दर्य के जिन अंगों का वर्णन करती हैं उनमें केश, ललाट, कपोल, मुख, नासिका, नेत्र, अधर, ओपढ़, दाँत, वाणी और कण्ठ अवयव मुख्य रूप से आते हैं। उषा प्रियंवदा ने नारी के जिन अंगों का मुख्य रूप से वर्णन किया है उनमें हथेलियाँ, उंगलियाँ, केश, पलकें, भौंहे, नासिका और अधर आदि का वर्णन मुख्य रूप से किया गया है।

(2) शिवानी ने मुख मण्डल को चन्द्रमा, चम्पा, प्रस्फुटित कुसुम आदि उपनामों से वर्णित किया है। नारी मुखमण्डल के आकार वर्ण और कान्ति की व्यंजना भी शिवानी के नारी के सौन्दर्य के अन्तर्गत मिलती है। उषा प्रियंवदा ने मुख की मुद्राओं प्रायः कान्ति द्युति का उल्लेख किया है।

(3) शिवानी मुख पर फैली हुई हँसी का वर्णन करती हैं उषा प्रियंवदा आनन के लावण्य पर ही अधिक दृष्टि रखती हैं।

(4) शिवानी ने केशों के शिथिल रूपों का वर्णन किया है तथा केशों की दीर्घता मृदुता नीलिमा आदि गुणों का उल्लेख कराया है। उषा प्रियंवदा ने उन्मुक्त तथा बद्ध दोनों प्रकार के केशों का वर्णन किया है। बालों का जूड़े में बंधन होना तथा उन पर हेयर स्प्रे आदि का उल्लेख आधुनिकता की ओर संकेत करने वाला है जबकि शिवानी ने केशों की निविड़ता, गाढ़ता और

कृष्णता वर्णनों की व्यंजना की है। शिवानी जिन केशों का वर्णन करती हैं वे केश शक्तिमयी नारी के केश प्रतीत होते हैं। उषा प्रियंवदा ने पीठ पर जिन पड़े हुए खुले केशों का वर्णन किया है उसमें पाश्चात्य नारी का रूप मुखर हुआ है।

(5) शिवानी ने नारी सौन्दर्य के अंतर्गत नेत्रों का वर्णन किया है जो स्निग्धता, विशालता, ललिता, कटाक्षों की दीर्घता, नलिता, प्रांत भाग की लालिमा, स्वेतता आदि गुणों का वर्णन किया है। इन नेत्रों के उपमान्य कमल हरिण, नीले आकाश से डूबे हुए ये नेत्र बड़े - बड़े तथा कजरारे हैं प्रायः करुणा से भीगे हुए दिखाई पड़ते हैं। ऊषा प्रियंवदा ने जिन नेत्रों का वर्णन नारी सौन्दर्य के अन्तर्गत किया है वे जादुई आकर्षक, अतिरंजित कटाक्ष युक्त तथा बंकिम दिखाई पड़ते हैं। इन नेत्रों में अंतर्गत विलास एवं रति आदि के संकेत भी व्यक्त होते हैं।

(6) शिवानी ने नारी सौन्दर्य में कपोलों का चित्रण किया है जो मृदु हास से भरे हुए लालित्यपूर्ण तथा सुकुमार रूप में चित्रित हैं। ऊषा प्रियंवदा ने कपोलों के वर्णन में अनुपातिक सौन्दर्य का वर्णन किया है तथा उनके कपोलों में हास्य के स्थान पर चिन्ता तथा भय की छाया दिखाई पड़ती है। जो आधुनिक युग की विसंगति को रेखांकित करती है।

(7) शिवानी नारी सौन्दर्य के अन्तर्गत अधरों का वर्णन करती है। अधरों की अरुणिमा तथा कोमलता के लिए किसलय, बिम्बाफल तथा बन्धूकपुष्प का प्रयोग किया गया है। अधरों में सुधा और विष दोनों का दर्शन होता है। उषा प्रियंवदा ने नारी सौन्दर्य के अंतगर्त जिन अधरों का वर्णन किया है वे कृत्रिम प्रसाधनों से रंजित तथा चुम्बन से खचित मदुर्यक्त दिखाई पड़ते हैं।

(8) शिवानी ने नारी सौन्दर्य में विलास को न चित्रित करके भारतीय सौन्दर्य की मर्यादाओं को ही चित्रित किया है तथा उसे कालिदास के अनाघ्रात पुष्प की भाँति अनसूँघे फूल के रूप में अधिकाँश रूप में चित्रित किया है जबकि उषा प्रियंवदा ने नारी को चटक रंगों में रंग कर उसके आधुनिक रूप को व्यक्त किया है।

(9) शिवानी ने नारी को कालिदास और रवीन्द्र की भाँति सज्जित तो किया है। कुसुमों से वनमालाओं से यूथिकाओं से उसे संवारा तो है किन्तु उसमें सर्वत्र भारतीयता की गन्ध है उषा प्रियंवदा की नारी या तो रूप गर्विता है अथवा आधुनिक विसंगतियों से पीड़ित दयनीयता और एकांकीपन के एहसास से छत विक्षत एवं म्लान।

शिवानी ने सौन्दर्य भावना में आभूषणों को आवश्यक नहीं माना, कालिदास और रवीन्द्र की भाँति वे रूप के सहजगुणों को ही महत्व देती हैं। रूप, वर्ण, लावण्य, छाया, सौभाग्य, स्नेहशीलता,

करुणा आदि का उल्लेख करती है। आभूषण सौन्दर्य को निखार प्रदान करते हैं। सौन्दर्य के आधादक तत्व कान्ति, दीप्ति एवं माधुर्य के अतिरिक्त गतिशीलता भी है। कवीन्द्र रवीन्द्र ने नारी मूर्ति को मानसी सृष्टि कहा है, वह वासना की प्रदीप्ति नहीं है। शिवानी भी नारी को मानसी सृष्टि, अष्टभुजी रूपा मानती हैं।

नारी में शक्ति का दर्शन, उसमें भगवती दुर्गा, अष्टभुजी देवी की भावना शिवानी के दार्शनिक सौन्दर्य बोध का परिणाम है। नारी को कलामय, संगीतमय रूप में अवतरित करने के पीछे रवीन्द्र सौन्दर्य की दृष्टि ही प्रमुख रही है।

शिवानी की नारी सुन्दरी है, "अनाघ्रांत पुष्पं किसलय मूलनं, की भाँति अनाघ्रात पुष्प की सुंगंध है, वह पृथ्वी में अपार्थिव शक्ति के रूप में चित्रित है।

शिवानी ने जिस नारी रूप को चित्रित किया है, वह सर्वमंगला, सर्वकल्याणी, सर्वभद्रा एवं सर्वकाली है। निर्मल कान्ति और शंन्ति प्रदायिनी नारी शिवानी की कला की सम्पूर्णता है। उषा प्रियंवदा इस क्षेत्र में शिवानी की समकक्षता में नहीं आपाती, उनमें शिवानी जैसा दृष्टि विस्तार नहीं हे।

* * * * * * * * * * *

* चतुर्थ - अध्याय *

* * * * * * * * * * * * *

अध्याय – 4

शिवानी एवं उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य में मानवेत्तर सौन्दर्य

प्राकृतिक सौन्दर्य :-

जिस अनन्त रूपात्मक क्षेत्रों में भावों, विचारों का यह व्यवसाय चलता है उसका नाम है जगत्। जगत् अनेक रूपात्मक है।[1] इस जगत् का प्राकृतिक प्रतिरूप मानव को अपने प्रति अत्यधिक आकर्षित करता है। इस समस्त संसार में कहीं वनों का प्रांगण है कहीं देश प्रहरी के रूप में पर्वतों का समवय कहीं तरंगों के माध्यम से अपने भावों की तरंगायित और निनादित करती नदियों प्रियतम समुद्र के अंक में समा जाने के लिए आकुलि वेग से प्रवाहित हो रही है, कहीं निर्झरणी अपनी कल[2] , छल[3] प्रतिध्वनि का अनुसरण करती हुई तालमय संयुक्त गति सुना रही है। कहीं पक्षी गण चीं चीं, शब्द निःसृत कर गाना गा रहे हैं तथा नभ में बुद्धिमान तारकगण अपनी अमुखर मुस्कान से रहस्यमय संगीत सुना रहे हैं और कहीं नाना रूप नाना वर्ण पुष्पों की मनमोहिनी अवलियाँ अपनी विकचित आंदोलित, स्निग्ध एवं मसृण आभा से मन को अपहृत किये ले रही हैं। प्रकृति या प्राकृतिक का अर्थ है – स्वाभाविक । अन्त प्रकृति के अर्न्तगत वे वस्तुएँ आती है जिसे मानव के हाथों नें सजाया और सँभाला है और जो स्वयं ही अपनी नैसर्गिक छटा से हमें आकर्षित करती है।[3] पुरातनता के निर्भीक को पल मात्र सहन न करने वाली प्रकृति के इस अलौकिक, अनाविल, नित्य नवीन रूप को देखकर सहृदय मानव अपने लोभ का संवरण न कर सका। उसने दीप्ति मयी इस विचित्र प्रकृति

---

1. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, चिन्तामणि भाग-1 पृ0 97
2. तद्परिवत्
3. डॉ0 किरन कुमारी गुप्ता, हिन्दी काव्य में प्रकृति चित्रण पृ0 10

को अपनी जीवन संगिनी बनाने के लिए ललक एवं आशावादी नजरों से निहारा। प्रकृति ने भी उसके हृदय की धड़कन को समझा और सिर हिलाकर उसके निवेदन को स्वीकार किया। बस फिर क्या था पगों में रक्त का संचरण हुआ उसमें स्फूर्ति आई और गतिशील हो गये। मधुमय बसंत की मधुसिंचित बेला में नवोत्साह संवलित उसकी सहचरी ने उसका साथ दिया उसके पल-पल को सुखमय बनाने के लिए सेवा के अपार भार को अपने हाथों में ग्रहण करना अपना दायित्व समझा।

मानव का सौन्दर्य परक जीवन प्रत्येक व्यापारों को सौन्दर्य से अभिमंडित देखना चाहता है और प्रकृति सौन्दर्य का समन्वय है। काली घटाएँ सतरंगी इन्द्रधनुष की मनोमुग्धकारी आभा नदी निनाद वन में आनंद पूर्वक कल्लोल करते हुए पशु पक्षी क्षण-क्षण परिवर्तित तथा विवर्धित ऋतु चक्र आदि प्रकृति सौन्दर्य के ऐसे उपादान है जिनमें आकर्पित हुए बिना मानव रह नहीं सकता। प्रकृति के पर्यवेक्षण की शक्ति मानव की ही दृष्टि में सन्निहित है। इसीलिए दोनों के पारस्परिक सम्बन्ध में संदेह नहीं है।

भारतीय वांगमय में प्रकृति को विभिन्न रूपों में परिभाषित किया गया है-

1. भारतीय वांगमय में प्रकृति, सृष्टि , माया शाश्वत, सत्य, प्रज्ञा, विचार शून्य स्वभाव आदि छः रूपों में स्वीकार की गई है।

---

1. भारतीय दर्शन सांख्य दर्शन पृ0 335

2. प्रकृते क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः।[1]

3. मरण प्रकृति शरीरिणां प्रकृतिर्जीवित्त मुच्येते वुधैः।[2]

4. प्रर्वत्तां प्रकृति हिताय पार्थिवाः सरस्वती श्रुति महती महीयताम्।[3]

5. कामार्ता हि प्रकृति कृपणार चेतना चेतनेषु।[4]

6. प्रकृति सिद्ध मिदं हि महाव्यदाम्।[5]

प्रकृति और मानव :-

प्रकृति और मानव का सम्बन्ध अत्यन्त प्राचीन, अखंड एवं शास्वत् है। इसीलिए प्रकृति मानव की चिर सहचरी मानी जाती है। शैशवकाल से मानव प्रकृति की गोद में ही पालित पोषित होता रहा है। प्रकृति के क्रिया–कलापों ने ही आनंद पिपासा को पूर्ण किया। सूर्योदय, सूर्यास्त्त के दृश्य, प्रशान्त रजनी की मृधुरिमा, शशि की ज्योत्सना, पुष्पों का मधुर हास, कोकिल की कल काकली एवं बसंत की मादक गंध जो अमराइयों से वहती आती है ये सारे दृश्य किसके हृदय को आकृष्ट नहीं करते। समस्त्त मानव एवं मानवेत्तर सचेतन प्राणी प्रकृति के इस सौन्दर्य पर लुब्ध होते हैं। मानव प्रकृति के साथ इतना अधिक जुड़ा है कि उसी प्रकृति को उसका सहचरि, मां प्राण तक मान लेने में संकोच नहीं होता। कवि का काव्य तो प्रकृति से ही अनुप्राणित होता है।

---

1. गीता 3/27
2. रघुवंश8/27
3. रघुवंश 8/87
4. मेघदूत/पूर्वमेघ/श्लोक –3
5. भृतृहरि, नीतिशतक – श्लोक –63

शिवानी के साहित्य में प्राकृतिक सौन्दर्य

शिवानी के लिए प्रकृति जीवंत सत्ता है। वे क़ुमायूँ सौन्दर्य आपूरित पर्वतीय क्षेत्र में जन्मी। प्रकृति का गहरा तादात्म्य उनके कथा साहित्य में सर्वत्र वर्णित है। वे भुवन व्यापी सौन्दर्य की रचनाकार हैं। शैशव से ही उनके मन में प्रकृति के प्रति अपार स्नेह है। प्रकृति और जीवन का एकाकार उनके स्वभाव एवं प्रकृति का एक अंग है। प्रकृति–सौन्दर्य के पीछे विश्व मानवता, रवीन्द्र दर्शन एवं मातृभूमि के प्रति सघन अनुराग व्यंजित हुआ है। सूर्य, चन्द्र, मेघ, दामिनी, पावस, बसन्त, वायु के अनेक सुन्दर चित्र शिवानी की कथाओं में सतरंगी पंखों के साथ इन्द्रधनुषी छवि–छटाएँ बिखेरते हैं।

प्रकृति का व्यापक एवं संवेदनशील चित्रण शिवानी की विशेषता है। प्रकृति चित्रों में उदात्त, नैसर्गिक, पर्वतीय छवि छटाएँ मनोहरी एवं ललित मुद्राओं में बरबस पाठकों को बाँध लेती हैं तथा प्रकृति के सौन्दर्य से जीवन को आलोकित करती हैं।

प्रकृति के प्रति जैसा उल्लास शिवानी में पाया जाता है, उसके अनन्त रूपों का जैसा रम्यपूप शिवानी ने चित्रित किया है, वह हिन्दी क्या विश्व कथा क्षेत्र की महत्तर उपलब्धि है।

प्रकृति गिरि, नदी, वन, अरवी, पहाड़, तृण, फूल तथा पाती–पाती में शिवानी प्रकृति का एक अद्भुत संगीत सुनती है। प्रकृति के सुकुमार एवं कठोर दोनों रूप दिखाई पड़ते हैं, किन्तु अधिकांश रूप में प्रकृति का कोमल रूप ही शिवानी को अभीष्ट है, जहाँ कहीं वे प्रकृति के उग्र रूप का वर्णन करती है वहाँ उनकी दृष्टि दार्शनिक अधिक हो उठती है।

शिवानी की रचनाएँ प्रकृति के परिवेश में ही जीवंत होती हैं, खुला आकाश नीलवर्णी छत्र की भाँति टँगा हुआ है। जिसके तले प्रकृति का लीला विलास होता है –

(अ) चारो ओर चिलचिलाती धूप में अबरख से चमक रहे, नील वर्णी आकाश के चंदोबे के नीचे, स्तब्ध, अचलखड़ी वे पाषाण भित्तियाँ जैसे निर्जीव पत्थर नहीं, किसी प्राचीन देवताओं में खड़ी विराट मूर्तियाँ लग रही थी।"[1]

प्रकृति के मध्य संघर्ष शील जीविका की वृत्तियाँ पनपती है –

(ब) सहर्षों वर्षों से आतप वर्षा हिमपात और दो–दो युद्धों की विभीषिका सहनकर वे आज भी गर्वोन्नत असितत्व, दाँतों के बीच जीभ सा बचाए, ज्यों के त्यों खड़े हैं।"[2]

शिवानी ने प्रकृति की आँख मिचौनी का अत्यन्त मनोहरी वर्णन किया है–

(स) "लता गुल्मों से आच्छादित, कहीं प्राकृतिक जल प्रपात का मधुर निनाद, कहीं आँख मिचौली सा खेलता समुद्र तट।"[3]

प्रकृति की सम्पूर्ण शिवानी की सौन्दर्य दृष्टि में सृष्टि का बिलास बनकर मूर्तित हुई है –

(द) "पहाड़ी से वनस्पतियों से परिपूर्ण शिलाखंड़ो पर धूप आँख मिचौनी कर रही थी। कभी सहसा घिर आया मेघ खण्ड सूर्य को ढ़क लेता है और कभी स्वयं उसे मुक्त कर, उजली

---

11. कसतूरी मृग शिवानी पृ0 61
2. तदुपरिवत् पृ0 64
3. तदुपरिवत् पृ0 65

धूप से पूरे वन खण्ड को उजला कर छोड़ जाता, उपव्यकाओं में प्रहरी से खड़े चीड़, देवदार, बाँस, बुरंश, भोज, कैल, खरशू, और साल के भव्य वृक्ष ------ पर्वत और सीढ़ियों पर बने घरौंधों से नन्हे-नन्हे घर ये सब हिमालय के कितने विराट सौन्दर्य को अपने में समेटे हैं। कौसानी पहुँची तो सामने नगाधिराज के श्वेत हिममंडित शिखर उसे इतने निकट लगे कि जी में आया कि दौड़ कर उन्हें छू लें।"[1]

मनोवृत्तियों को भी प्राकृतिक रंगों से शिवानी ने अभिव्यक्ति दी है -

(ङ.) जैसे कृष्णवर्णी तिरती गंभीर मेघावलि के बीच प्रातः कालीन सूर्य की मंद मधुर रश्मियां, दिवालोक से दिशाएं रंग जाती हैं। ऐसे ही मधुर स्मृति का परिहास उस गंभीर चेहरे को उद्‌भासित कर गया।[2]

"कूर्मांचल" लेखिका की जन्मभूमि सर्वत्र जीवन दर्शन बनकर मुखरित होती है।

"जैसे कुर्मांचल का अस्ताचलगामी गामी प्रौढ़ सूर्य, जाते-जाते भी डूबती किरणों का उज्जवल जाल बिछाता पर्वतश्रेणियों को अनोखी आभा से आलोकित कर जाता है, वैसे ही उससे विदा लेता यौवन बड़ी हंठीली धृष्टता से उड़ती, उस लुभावने चेहरे को और भी लुभावना बनाता चला गया था।"[3]

---

1. कालिंदी, शिवानी, पृ0 - 44
2. स्वयंसिद्धा, शिवानी, पृ0 - 21
3. विषकन्या, शिवानी, पृ0 - 60

शिवानी के कथा साहित्य में वस्तु सौन्दर्य -

भाव सौन्दर्य के अतिरिक्त वस्तु जगत के सौन्दर्य को भी शिवानी अपने कथा परिदृश्यों में समेटती हैं। मूर्ति सौन्दर्य का एक दृश्य चित्र देखें -

(अ) बैजनाथ की सर्वोत्तम मूर्ति, भगवती को देखा तो वह निर्वाक् खड़ी ही रह गई। सामान्य सी खण्डित होने पर भी आकृति के निर्भीक उभार में, पैरों की दृढ़ता में, महिमामय सुख की रेखाओं में कैसा अद्भुत तेज था। कौन रहा होगा इसका सुदक्ष मूर्तिकार, क्या यह भव्य स्मित, मोनालिसा के विश्वविख्यात स्मित से कुछ कम था।[1]

(ब) काली भुजंग सी देह पर था राख का प्रगाढ़ प्रलेप, और भयंकर रूप से उलझे जटाजूट का चूड़ा, शिथिल होकर गर्दन पर ढल आया था दोनों आँखें अंगारे सी लाल-लाल दहक रही थीं कालिंदी ने देखा, उसके कानों से लटके भैंसे के सींग से बड़े-बड़े कुंडल, कानों की लोड़ी चीरते ऐसे झूल रहे थे, जैसे अभी-अभी नीचे गिर पडेंगे, नाक पर एक बड़ा सा मस्सा उस अमानव चेहरे को और भी भयावह बना रहा था।[2]

(स) आज भी मैं उस बुन्देलखण्डी ढाल सी चौड़ी कठोर रोटी और मुक्ता-सी अलग-अलग छितरी चने की दाल, चटनी के स्वाद को नहीं भूल सकी हूँ।

---

1. कालिंदी, शिवानी, पृ० - 147
2. कालिंदी, शिवानी, पृ० - 162

(द) कुल चार आने में खरबूजा अन्नानास केला, सेव उस पर फलाहार के पश्चात् जीवंत सुपारी और प्राण वान इलायची की भी व्यवस्था रहती है। खिलौनों की वह फ्रूट बास्केट आज भी मिलती है किन्तु उनके रूप रंग में अब वो बहार नहीं रही। पहले का केला था कि जी में आता कि अभी छील कर खा डालें। होली आती तो मिट्टी की वही इलायची, सुपारी, अतिथियों को असली पान के बीड़ों के साथ पेश की जाती।[1]

– बरेली का कामदार लंहगा, गुलबाँक के रेशमी पिछोड़े की सिहरन, हाथ भर काली चूड़ियों की खनक कुछ भी तो नहीं भूली थी वह।[2]

– दीर्घाकार काली भुजंग मूर्तियाँ अंधेरे संकरे गुल्य कक्ष में झका – झक चमकता दिव्य शिवलिंग उतनी ही काली चिकनी पसीना चूती अर्धनग्न देह को नंगी तलवार सा चमकाता पुजारी दूसरे एक के हाथ में आरती का थाल जिसकी प्रकम्पित शिखा क्रमशः एक के बाद एक शिखाओं को किसी बाजीगरी चमत्कार से जलाती जाती है। --दर्शनार्थियों की ऐसी भीड़ कि कपूर का धुआँ, बेड़ियों की सुगंध, आरती की जलती शिखाओं की महक, सबसे सम्मिलित एक नशीला धुआँ बन फैलता–फैलता समुद्र तट पर झुग आए काले बादल सा ही सीधे भीड़ के ललाट पर उतर आता है।[3]

---

1. वातायन, शिवानी, पृ0 – 28
2. स्वयंसिद्धा, शिवानी, पृ0 – 30
3. कृष्णवेणी, शिवानी, पृ0 – 7–8

– रोजवुड की बनी घूमने वाली कुर्सी, राइटिंग टेवल पर धारी धावमान अश्वों पर दोहरे हुए जौ की मनों की तस्वीरों की अखबारी कतरनें, बड़ा सा हाथी दाँत की मूढ़ लगा मैग्नीफाइंड ग्लास, यह उनका स्मृतिकक्ष है।[1]

– कलात्मक गढ़न के चैत्यगवाक्ष, अनेक द्वारों की भित्ति, मूर्तियों की छटा वास्तव में दर्शनीय थी, प्रत्येक कलाकृति में एक प्रकार की ऐतिहासिकता सूक्ष्म प्रतीकता और सांकेतिकता पारखी आँखो को बरवस बाँध लेती थी। एक कोने में, धरणीधर के किसी अरण्यपाल मित्र की कृपा से उपलब्ध, एक वृत्ताकार पथरीले आसन पर खड़ी एक भग्नमूर्ति देखने वालों को सबसे पहले आकर्षित करती थी। उस नारी–मूर्ति का मुखमंडन शांत एवं गम्भीर था। उसके दक्षिण हस्त ने श्रृंगार और वामहस्त में एक खण्डित मंजूषा थी। उसे उन्नत वक्ष एवं सुडौल पृष्ठमान को पीछे धरे टेबिल लैम्प का धूमिल प्रकाश बड़े कौशल से छन–छन कर आलोकित कर उठता था।[2]

– जामुन, कटहल, शिरीष, कंद व फूलों के वृक्षों से घिरा उनका अंग्रलिहाग्र प्रासाद दूर से देखने पर किसी भव्य जहाज सा ही लगता था। लोहे के कलात्मक जंगले, घेर–घुमावदार लोहे की सीढ़िया और छत के कटावदार कंगूरों को देखकर ही लगता था कि उसके निर्माण में कमी अकृपण हस्त से ही अर्थव्यय किया गया है।[3]

---

1. कृष्ण वेणी शिवानी पृ0 37
2. शमशान चंपा शिवानी पृ0 9
3. शमशान चंपा शिवानी पृ0 41

उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य में प्रकृति सौन्दर्य :-

उषा प्रियंवदा ने प्रकृति को आधुनिक जीवन के परिवर्तनशील आधारों पर चित्रित किया है –

> उजली, धूपभरी और बेहद ठंडी खिड़कियों के शीशों पर बर्फ की एक सफेद पर्त है, जो धूप से धीरे–धीरे पिघलेगी।[1]

लेखिका ने प्रकृति के उपेक्षित पक्षों पर अपनी संवेदनशील दृष्टि दौड़ाई है –

> शुरू शुरू में तमाम चिड़िया आती थी, शोर मचाती हुई गौरैया, मैना, कबूतर पर लगातार निराश होते रहने पर वह आगत कम होते गये और अब कोई भी नहीं आता, सिर्फ यह कबूतर ही भूला–भटका या बहुत भूखा होने पर आता है।[2]

प्रकृति उद्दीपन शैली में भी उषा प्रियंवदा के साहित्य में वर्णित हुई है ––––––

> जाड़े की कपकपाती, तुषारमयी हवा जागी और बार–बार उन्हें झकझोरने लगी।[3]

निराश मनःस्थितियों की व्यंजना भी प्रकृति की प्रतीकात्मकता से की गई है––––––––

> "खिड़की के बाहर हवा से पत्तियों की सरसराहट साफ सुनाई पड़ती है और इक्के–दुक्के पक्षी का स्वर।[4]

---

1. कितना बड़ा झूठ शिवानी पृ0 8
2. तदुपरिवत् पृ0 8
3. तदुपरिवत् पृ0 10
4. तदुपरिवत् पृ0 22

प्रतिध्वनियाँ में वसु का कथन प्रकृति प्रेम को घेषित करता है–

वुडिंगटन शहर में आजकल पानी बरसता होगा, घास फूस बेहद बढ़ गयी होगी। शायद फूल भी – विगौनिया, डैलिया।[1]

प्रकृति सौन्दर्य आंचलिकता का स्वर लिए हुए चित्रित हुई है –

छत की खपरैल पर बूँदो का स्वर सुनती रही।[2]

प्रकृति के समकुल क्षेत्र शिशुओं युवकों के लिए कितने अपरिहार्य हैं जहाँ वे खुलकर क्रीड़ा नहीं कर सकते इसी संवेदना को लेखिका ने मार्मिकता के साथ उद्घाटित किया है-----

पीछे घास का लम्बा-चौड़ा मैदान था, जहाँ रविवार को लड़के फुटबाल खेलते थे, आस-पास के फ्लैटों के सम्मिलित बगीचे थे, और पड़ोसिन के प्लाट में सूखे पौधों के बीच एक बहुत ऊँचे पौधे पर बड़ा सा सूरजमुखी का फूल दीख रहा था फूल का मुँह सचमुच सूरज की ओर था।

आधुनिक जीवन में हताश और खण्डित मनुष्य की चेतना प्रकृति के ठंड़े और मग्न रूपों से व्यक्त की गई है जो मनावैज्ञानिक है--------

पत्थर ठंडे थे और सामने लान पर पतझर की पहली हवाओं ने पत्तियाँ बिखेरना शुरु कर दिया था बायीं ओर इमारतों के बीच मन्दोता झील का एक चौखुटा टुकड़ा चमक रहा था, गहरा नीला।[3]

---

1. कितना बड़ा झूठ शिवानी पृ0 35
2. तदुपरिवत् पृ0 39
3. तदुपरिवत् पृ0 44
4. तदुपरिवत् पृ0 66

आर्थिक विषमताओं ने जीवन को प्रभावित किया है और उसका प्रभाव मनुष्य के सौन्दर्य बोध पर भी पड़ना स्वाभाविक है –

"धूमिल सा नीला, फिर मटमैलो, और बहुत पुरानी उपेक्षित सी दिखती पर्वत – शृंखलायें, दृष्टि और नीचे आकर आँगन की दीवार पर रुक जाती है; ईंटों की दीवार, जिस पर न जाने कब से मॉने पुताई नहीं करवाई है।"[1]

उषा द्वारा वाशिंगटन द्वीप के सौन्दर्य का वर्णन किया गया है, जो पाश्चात्य प्रभाव से रंजित है। विस्तृत जल राशि, जहाँ आकर ग्रीन वे मिशिगन सागर में खो जाती हैं, तट के किनारे सघन वृक्ष, जिनके पत्ते वृक्षों के पार छोटे–छोटे पर्वतों की एक शृंखला।[2]

आंचलिक जीवन आंचलिक प्रकृति के साथ आधुनिक संवेदना के स्वरों को लेकर मूर्त मन्त्त हुआ है -----

सड़क के किनारे – किनारे कँटीली झाड़, खेतों में कहीं–कहीं सरसों के फूल, एक–दो जगह कुओं पर चलता हुआ रहट।[3]

स्मृति चित्रण को लेकर प्रकृति का जीवन्त वर्णन लेखिका की मनोवैज्ञानिक सूझ–बूझ को व्यक्त करता है ------

वैसे तारों–भरा नीला आकाश तो वहाँ भी था, फूल खिलते थे, बर्फ पिघलती थी, झील के जल में इमारतों की परछाइयाँ काँपती थीं।[4]

---

1. कितना बड़ा झूठ, ऊषा प्रियंवदा, पृ0 – 70
2. कितना बड़ा झूठ, पृ0 – 80
3. रुकोगी नहीं राधिका, ऊषा प्रियंवदा, पृ0 – 7
4. रुकोगी नहीं राधिका, ऊषा प्रियंवदा, पृ0 – 12

ग्राम्य सौन्दर्य ही प्रकृति सौन्दर्य का मूल आधार है, लेखिका ने ग्राम्य सौन्दर्य का वर्णन किया है ---

हर ओर कोयले की पर्त थी, धूल का गुबार और जहाँ-तहाँ जंगली लताओं पर बैंगनी फूल और तलैयों में कोकावेली। ताड़ के पेड़, पिरोड़ से पुते गाँव के घर, अमराइयाँ, खेतों के बीच मंथर गति से चलते हल।[1]

प्रकृति का क्षेत्र किसी देश काल की सीमा में बँधा नहीं है -------

कैलीफोर्निया का सागर तट, पोलो रैडो के पहाड़, नदियाँ, हरे-भरे खेत, फूल के वृक्ष, लाल-पीली नारंगी पत्तियों की वर्षा और हिम-पात।[2]

प्रकृति के निर्मल आलंबन शैली के चित्र भी लेखिका की तूलिका ने उतारे हैं -----

चौंधियानेवाली धूप बिखरी है, पेड़ों की फुनगियाँ स्तब्ध, स्थिर और उजला आकाश इधर से उधर तक फैला हुआ है।[3]

---

1. रुकोगी नहीं राधिका, ऊषा प्रियंवदा, पृ0 - 14
2. रुकोगी नहीं राधिका, ऊषा प्रियंवदा, पृ0 - 78
3. रुकोगी नहीं राधिका, पृ0 - 108

उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य में वस्तु सौन्दर्य

सौन्दर्य प्रसाधन, परिधान आदि को सौन्दर्य की दृष्टि से उषा प्रियंवदा ने देखा है ---

हांगकांग वाली साड़ी है, सस्ती नहीं।"[1]

व्यवहारिक वस्तुएँ लकड़ी आदि के दुर्लभ सौन्दर्य को भी लेखिका ने विषय बनाया है -----

"बहुत पुराने और बढ़िया ओक की लकड़ी है, आजकल तो दुर्लभ ही है।"[2]

भोज्य पदार्थ और खाद्यान्न आदि वस्तुएँ भी लेखिका की सौन्दर्य दृष्टि में उतर आए हैं -----

"खूब फूली हुई कुरकुरी पूरियाँ, काबुली चनों की मसालेदार तरकारी जिस पर हरी मिर्च और नींबू के लंबे - लंबे टुकड़े सजे हों, पनीर-कोफ्ते, दही में डूबी गुझिएँ, चटनी, सब तरह के अचार, मिर्च वाले पापड़ और अंत में मेवे छिड़का हुआ गाजर का हलवा या ताजे कटे आमों की फांके, और मलाई या केसर से सुगंधित खूब गाढ़ी खीर।"[3]

---

1. कितना बड़ा झूठ, ऊषा प्रियंवदा, पृ0 - 47
2. कितना बड़ा झूठ, ऊषा प्रियंवदा, पृ0 - 68
3. रुकोगी नहीं राधिका, ऊषा प्रियंवदा, पृ0 - 9

आँचलिक जीवन की वस्तुएँ उषा प्रियंवदा के वस्तु सौन्दर्य चित्रण के अन्तर्गत आती हैं --

"मिल की सीटी, स्कूल की बस, चुराकर तोड़ी गई अंबिया, माँ की हीरे की लौंग, बचपन, विद्या, माँ की घर से विदाई, तोते मिट्ठू का पिंजरे में रह - रह कर व्याकुल घूमना और बार - बार पानी की कटोरी पटकना, रस की खीर की तेज गंध, जो दिवानी के घर अक्सर बनती थीं, लाल हरें, पानी से भीगे हुए सिंघाड़े।"[1]

उषा प्रियंवदा कांस्य प्रतिमा तथा स्थापत्य कला को वस्तु वर्णन के अन्तर्गत स्थान देती हैं ---

"दीवार पर एक नया तैल-चित्र है, गहरे, भूरे और स्लेटी रंगों की प्रधानता लिए हुए एक नई कांस्य प्रतिमा, शायद नेपाली पद्धति की।"[2]

परिधान के साथ लेखिका ने जिस सौन्दर्य दृष्टि को बुना है वह उल्लेखित है --------

"चिकन की सफेद साड़ी में, जिस पर नन्हीं-नन्हीं गुलाबी बूटियाँ कढ़ी हुई थीं।"[3]

पुरातात्विक दृष्टि से सौन्दर्य को लेखिका ने वस्तु जगत से जोड़ने में पर्याप्त सफलता प्राप्त की है -----

"ग्यारहवीं शताब्दी की श्रीदेवी की एक मूर्ति, दक्षिणी मंदिर के भग्नरथ के पहिए, मिनिचवर पेंटिग्स के कुछ सुन्दर नमूने, शैडनी द्वारा लिए गए भारतीय घड़ों के विभिन्न चित्र।"[4]

---

1. रुकोगी नहीं राधिका, ऊषा प्रियंवदा, पृ0 - 17
2. रुकोगी नहीं राधिका, पृ0 -32
3. रुकोगी नहीं राधिका, पृ0 - 76
4. रुकोगी नहीं राधिका, पृ0 - 87

तुलनात्मक समीक्षा

शिवानी और उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य में मानवेतर सौन्दर्य में अनुशीलन के पश्चात् जो निष्कर्ष शोध में उपलब्ध हुए हैं, वे निम्नवत् हैं ---

﴾1﴿ शिवानी के हृदय में प्रकृति के प्रति अपरिमित अनुराग है। रवीन्द्र की भाँति वे प्रकृति को जीवंत सत्ता के रूप में देखती हैं। प्रकृति की गोद में ही शिवानी का जन्म कुमायूँ अँचल में हुआ जिसके कारण प्रकृति के प्रति अत्यंत गहरा लगाव शिवानी के कथा साहित्य में परिलक्षित होता है। उषा प्रियंवदा ने प्रकृति को आधुनिक संवेदना के परिप्रेक्ष्य में चित्रित किया है वह उद्दीपन के रूप में मनुष्य की विषमता उसकी जटिलता और उसके द्वन्द्वों का प्रतिनिधित्व करती हैं।

﴾2﴿ शिवानी नीलवर्णी आकाश नीलवर्णी समुद्र पर अपनी व्यापक दृष्टि का परिचय देती हुई उसमें दार्शनिक मुद्राओं को उकेरती हैं जबकि उषा प्रियंवदा दार्शनिक से अलग सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में प्रकृति का उपयोग करती हैं।

﴾3﴿ शिवानी प्रकृति में मधु आनन्द और वासन्तिक छटाओं को चित्रित करती हैं जबकि उषा प्रियंवदा पतझड़ और शिशिर के चित्रों को पृष्ठभूमि के रूप में व्यक्त करती हैं।

(4) शिवानी भारतीय परिवेश में प्रकृति का उपयोग करती हैं साथ ही भारत से बाहर अन्य देशों में भी प्रकृति के अविभाज्य रूपों को देखती हुई उन्हें अखण्ड सौन्दर्य का अंग मानती हैं। जबकि उषा प्रियंवदा वाशिंगटन तथा अन्य विदेशी नगरों की बर्फ, ठंडक, उदासी आदि का चित्रण करती हैं।

(5) शिवानी में विभिन्न पर्वतों, नदियों एवं पुष्पों का मनोहारी वर्णन मिलता है जबकि उषा प्रियंवदा की प्रकृति बंगलों के आसपास चित्रित होती है।

(6) शिवानी की प्रकृति में पर्वतीय प्रदेशों का सौन्दर्य मुखरित होता है। उषा प्रियंवदा में आंचलिक सौन्दर्य मुखरित हुआ है।

(7) शिवानी ने हिन्द महासागर तथा भारतीय सागर तट, अधिकाँश रूप में व्यक्त हुए हैं जबकि उषा प्रियंवदा ने कैलिफोर्निया का सागर तट, कालोरैडो के पहाड़ आदि मुख्य रूप में अभिव्यक्ति पा सके हैं।

(8) शिवानी में प्रकृति के मादक चित्र पाए जाते हैं जबकि उषा प्रियंवदा में प्रकृति निराशा और विषाद को अभिव्यक्ति देने का साधन बन कर आयी है।

तुलनात्मक दृष्टि से मूल्यांकन करने पर यह ज्ञात होता है कि शिवानी का प्रकृति सौन्दर्य उषा प्रियंवदा के प्रकृति सौन्दर्य से अधिक व्यापक संवेदनशील उदात्त एवं विराट है।

(1) शिवानी और उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य में वस्तु सौन्दर्य की दृष्टि से मूर्तियों, प्रसाधनों, खाद्यान्नों एवं स्वदेशी तथा विदेशी वस्तुओं के सुन्दर चित्र पाये जाते हैं। शिवानी और उषा प्रियंवदा दोनों वस्तु चित्रण के क्षेत्र में समान रूप से अधिकार रखती हैं, शिवानी जहाँ वस्तु सौन्दर्य में कलात्मकता के दृष्टिकोण को लेकर चलती हैं, वहीं उषा प्रियंवदा उन वस्तुओं के सौन्दर्य वर्णन को आंचलिक संवेदनाओं तथा आधुनिक जीवन की मूल संवेदनाओं के साथ युक्त करती हुई चलती हैं।

(2) शिवानी वस्तु चित्रण के क्षेत्र में स्थापत्य पर अधिक बल देती हैं। उषा प्रियंवदा वस्तु विन्यास आदि पर।

(3) वस्तु चित्रण के अंतर्गत शिवानी रवीन्द्र कला को प्रश्रय देती हैं उषा प्रियंवदा तैल्य चित्रों और मिनच्यूर पेन्टिंग्स पर अधिक रुचि शील दिखाई पड़ती हैं।

(4) शिवानी वस्तु चित्रण के क्षेत्र में सामन्तीय संस्कारों के अधिक निकट हैं जबकि उषा प्रियंवदा लोक जीवन के संवेदनशील दृष्टिकोण को लेकर वस्तुओं में सौन्दर्य के मूल को स्थापित करती हुई चलती हैं इस प्रकार उषा प्रियंवदा शिवानी की तुलना में कुछ अधिक सफलता लिए हुए दिखाई पड़ती हैं।

पंचम अध्याय

अध्याय – 5

शिवानी एवं उषा प्रियवंदा के कथा साहित्य में भाव सौन्दर्य

भाव सौन्दर्य –

आचार्य भरत ने नाटयशास्त्र में भाव की विशद विवेचना की है–

"विभावेनाह्त्तो योडर्थो अनुभोवस्तु गम्यते
वागंगसत्वामिनयैः स भाव इति संज्ञितः ।"[1]

विभिन्न प्रकार के अभिनयों से सम्वद्ध रसों से भावित अर्थात् सहृदय समान के चित्त में परिव्याप्त करते है, उन्हें नाट्यकार भाव कहते है। जब विभाव अनुभाव का अर्थ दर्शक के मन में भावित या परिव्याप्त किया जाता है तो उसे भाव कहते है। साधारतः भरत ने मानसिक अवस्थाओं का व्यंजक भाव को माना है।[2] दश रूपककार धनंजय ने "आश्रय से सुख–दुख आदि भाव स्थितियों के ज्ञापन को भाव माना है।[3] आचार्य विश्वनाथ ने भावों का उल्लेख करते हुए कहा है जब संचारियों का वर्णन किसी स्थायी भाव के सहायक रूप में न होकर स्वतन्त्र रूप से तथा प्रधान रूप से होता है और देव आदि विषयक रति का उद्बुद्ध होने वाले स्थायी भाव का वर्णन ही भाव कहा जाता है।[4] मनोविज्ञान के अनुसार जब कोई संवेग

---

1. नाटक शास्त्र छ:38
2. हिन्दी रीतिकाव्य में सौन्दर्यबोध डॉ0 ऊषा गंगाधर राजापुरकर पृ0 228
3. दश रूपक, धनंजय, 4:4
4. साहित्य दर्पण, विश्वनाथ, 3:260–261

अर्थात् इमोशन व्यक्ति पदार्थ या विचार के प्रति स्थायी रूप से आबद्ध हो जाता है तब उसे मनोवृत्ति कहते हैं।[1] शिवानी मूलतः सौन्दर्यबोध की लेखिका है। उनके कथा साहित्य में सौन्दर्य के विशद चित्र हैं। प्रेम से सम्बन्धित कहानियों में प्रेम भाव का विशद निरूपण मिलता है। प्रेम के संचारी, ब्रीड़ा चपलता, आवेग, जड़ता गर्व आदि को दृष्टि में रखते हुए भावों को चित्रित किया गया है। प्रेम व्यापार ही मानव की मूल प्रवृत्ति है। शिवानी और उषा प्रियंवदा दोनों ही कथा साहित्य में प्रेम को केन्द्र में रखकर चरित्रों का विकास करते हैं। प्रेम ही उनके पात्रों की समस्या होती है। प्रेम के केन्द्र पर ही सम्पूर्ण कथा साहित्य केन्द्रित होता है।

शिवानी के कथा साहित्य में प्रेम

मानव की मनोवृत्तियों में प्रेम की वृत्ति प्रमुख है। प्रेम को गूँगे का गुड़, अकथ कहानी, प्रेम की कछू कही न जाये कहकर अवर्णनीय कहा गया है। महाकवि बिहारी ने –

"या अनुरागी चित्त की गति समुझै नहि कोई।
ज्यों ज्यों बूड़े स्याम रंग त्यो त्यों उज्ज्वल होई।।"

प्रेम को लौकिक और अलौकिक दो प्रकार का बताया गया है। वस्तुतः किसी व्यक्ति या वस्तु के प्रति लगाव होता है, उसे प्रेम कहते है। भारतीय साहित्य में लौकिक और ऐकात्तिक प्रेम वर्णन मिलता है। लोक सम्बद्ध में प्रेम में व्यापकता होती है, वह व्यक्ति तक केन्द्रित न होकर विश्वव्यापी होता है और लोक कल्याण की भावना से युक्त होता है।

---

1. हिन्दी रीतिकाव्य में सौन्दर्य बोध, ऊषा गंगाधरराव राजापुरकर पृ0232

ऐकान्तिक प्रेम एक पात्र एक विशेष के प्रति होता है । प्रेम की दो अवस्थाएँ होती हैं, पहली संयोगात्मक और दूसरी वियोगात्मक। शिवानी ने संयोग और वियोग दोनों ही अवस्थाओं का वर्णन किया है। नायक–नायिका के प्रेम और उसकी विविध दशाओं का मार्मिक वर्णन कहानी लेखिका ने किया है। प्रेमभाव की अभिव्यक्ति विभिन्न मुद्राओं, भंगिमाओं एवं चेष्टाओं के द्वारा कराई गई है। संयोगावस्था में प्रेम का जितना अधिक विस्तार होता है। वियोगावस्था में विरह की उतनी ही तीव्र अनुभूति होती है। सच्चे प्रेम का विकास वियोग वर्णन के द्वारा ही संभव हुआ है।

शिवानी के कथा साहित्य में प्रेमानुभूति की तीव्रता संयोग की अपेक्षा विरह में अधिक होती है, क्योंकि वे प्रेमानुभूति की गहराई, गम्भीरता को व्यक्त करना चाहती है। प्रेम की विभिन्न मानसिक अवस्थाओं का चित्रण अत्यन्त सफलता के साथ लेखिका ने किया है। शिवानी के प्रेम वर्णन में भौतिक आकर्षण कम नहीं है, वे शारीरिक सौन्दर्य की सराहना करते हुए नहीं चूकती। शारीरिक सौन्दर्य की अवहेलना नहीं की गई। गहरे मनोवैज्ञानिक सतर के प्रेम का निरूपण भी लेखिका ने किया है। वह प्रेम सागर की भाँति अनन्त है, निर्वाधित है उसके प्रेम निरूपण में रवीन्द्र का दर्शन भी प्रतिबिम्बित होता है। प्रेम की ऐसी सघन अनुभूति शिवानी के कथा साहित्य में मिलती है, जो सहृदयों को बाँध लेती है।

भावों के क्षेत्र में विरह आदि के भाव चित्र भी शिवानी के साहित्य में प्राप्त होते हैं।[1] गेंडा उपन्यास में सूर्पनखा का वियोग इस प्रकार व्यक्त किया गया है –

---

1. गैड़ा, शिवानी पृ0 22

(अ) पहले उसके ओंठ कांपे फिर आकार विहीन चिबुक फिर परस्पर जुड़ी अनाकर्षक घनी भौंहे और फिर वोह बद्नुमा चहेरा रूदन की सहस विकृत झुरियों में एकदम ही सिकुड़ गया।[1]

(ब) बिना कुछ कहे सुपर्णा आँसुओं के वेग को रोकती तीर सी बाहर निकल गयी।

शिवानी के कथा साहित्य में वत्सलता

शिवानी के कथा साहित्य में भाव सौन्दर्य के विविध रूपों का दर्शन होता है वाल्य भाव के सौन्दर्य के विशिष्ट चित्र वीर भी जनसामान्य के स्तर पर लोग ग्राही बन पड़े है उदा0 के लिए देखे-

(अ) वह राजसी शिशु कितना दरिद्र लगता था, कितना असहाय, न माँ का स्नेह न पिता का वात्सल्य, न दादा-दादी की दया दृषि ट न नाना का दुलार, एक नानी ही थी जो उसे बदरियर के मृत छौने सा छाती से चिपटाये ये मानने को तैयार नहीं थी कि वह जीवत होने पर भी मृत निष्प्राण मांस पिण्ड मात्र है। क्या भविष्य होगा उस अभागे का, ये रूपकहीन यह बालक कभी अपने पैरो पर खड़ा नहीं हो सकेगा जीवन भर ननिहाल की की परिधि मे केचुढ सा रेंगता रहेगा और जननी के समाचार ऋण का शोध करता रहेगा[3]

---

1. गैड़ा, शिवानी, पृष्ठ 22
2. तदुपरिवत् - पृ0 37
3. अतिथि, शिवानी, पृ0 213

वात्सल्य के चित्र भक्ति, पूजा, संस्कृति के प्रसंगो से जीवंत हो उठे है -

बहुत छोटी थी, तब ही से बाबा पूजा करने बैठते तो मैं लपक कर उनकी गोद में बैंठ जाती कि कब उनका जपार्चन पूरा हो और कब बताशे मिलें ।[1]

स्वदेश प्रेम भी शिवानी के रचना लोक का एक विशिष्ट भाव है कतिपय उद0 दृष्टव्य है -

(अ) उनका वह देश जिसके लिए वे कभी अपना सर काट हथेली पर रख देते थे, जिसके लिए वे अपने परिवार के मोह के बंधन काट, हाथ कुलाड़ी लिए फक्कड़ बने निकल पड़े थे कहाँ था वह देश।[2]

आज जब स्वतंत्रता के रजत जयन्ती के अवसर पर देश के कोने-कोने से स्वतंत्रता सेनानियों को ढूढ़-ढूढ़े सूद-ब्याज समेत उनके सर पर पड़ी लाठियो का मूल्य बड़ी ईमानदारी से चुकाया जा रहा है।[3]

शिवानी के कथा साहित्य में करूणा -

शिवानी ने वैधव्य जीवन की करूण अवस्था का मार्मिक चित्रण किया हैं -

"वो सदा श्वेत वसन वती ही रहती। न हाथो में चूड़िया न ललाट पर बिन्दी। कण्ठ में एक पतली सोने की चैन में, उसके लाकेट में, उसके दिवंगत सहचर की तस्वीर बंद रहती है।"

---

1. मेरा भाई, शिवानी, पृ0 122
2. अतिथि, शिवानी, पृ0 216
3. चिर स्वयबरा, शिवानी, पृ0 131

शोषित नारी के प्रति शिवानी-करूण हो उठती है -

"हम शोषित नारी के लिए भले ही संवेदना के अनुभव करें पर प्रतिष्ठित पुरूष का आज भी कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता। परंपरावादी सामाजिक शक्तियों ने अभी भी नारी को पूर्ण रूप से स्वतंत्र नहीं होने दिया।"

शिवानी के कथा साहित्य में क्रोध एवं घृणा -

क्रोध एवं घृणा के मनोभावो की मनोवैज्ञानिक व्यंजनाएँ शिवानी के कथा साहित्य में प्राप्त होती है, कतिपय उदाहरण दृष्टव्य है -

(अ) "वैमनस्य के अखाड़े में जूझती वीरागनाएं किसी कुशल फेतिंगा के कलाकार की दक्षता से प्रतिद्वद्विनी को कभी जिव्हा के प्रहार से धराशायिनी कर देती है। और कभी छल-बल से। जहाँ मूर्ख पुरुष क्रोध से अंधे बन कभी-कभी फाँसी के फँदे को भी भूलकर, शत्रु मुंड गंडासे से अलग कर देते है, वहाँ प्रतिशोध लेने के लिए नारी कभी ऐसी अविवेकपूर्ण मूर्खता नहीं करती। वह शत्रु को सुख्याति, सुनाम यहाँ तक कि उसका सर्वस्व भी हरण कर सकती है, केवल अपनी तीखी जिव्हा के कुटिल प्रहार से।"[1]

---

1. विषकन्या, शिवानी, पृष्ठ- 59

बुआ का लम्बा पत्र और माँ से अंत तक अभियोग आक्रोध एवं लांछना की भाषा से –

"तुम माँ–बेटियो ने मेरे साथ ऐसा फरेब क्यो किया ? इतनी बड़ी बात तुम मुझसे छिपा गई? जुही ने भागकर किसी मुसलमानके साथ नाक कटवा ली है, यह मैं जानती, तो क्या अंधी–बहरी थी जो ऐसे सुप्रतिष्ठित कुल के सामने तेरे रिश्ते के लिए आँचल फैलाती?[1] जी में आता है, तुझे लेकर किसी ऐसे अरण्य में चली जाँऊ बेटी, जहाँ हमारे हृदयहीन समाज का एक भी चेहरा हमें न देखे।"[2]

विस्मय आदि भावों का चित्रण भी शिवानी के कथा साहित्य को कौतूहल प्रदान करता है–

"राजेश्वरी काँप गई। यह क्या? यह बेहूदा छोकरा क्या उसी के सामने नंगा हो जायेगा? हड़बड़ाकर वह द्वार बन्द करने लगी, पर तब तक खुली वर्दी बाँस खोलकर ढहा दिय गए किसी छोटे तम्बू की ही भाँति नीचे ढहाकर गठरी–सी बन चुकी थी। राजेश्वरी ने देखा, उसके सामने कोई लड़का नहीं, छरहरे शरीर की उस लड़के की सी ही आकर्षक सूरत की एक सांवली हंसमुख लड़की खड़ी थी।"[3]

---

1. श्मशान चंपा, शिवानी पृ0 37
2. तदुपरिवत्, शिवानी पृ0 38
3. भैरवी, शिवानी पृ0 78

विस्मय और भय आदि के भावों को भी शिवानी ने सतर्कता पूर्वक व्यक्त किया है –

(अ) न जाने कब मेरी आँख लग गई। सहसा मुझे लगा कोई आकर मुझसे सटकर सो गया है, शायद मैं भय से चीख पड़ती, पर तब ही परिचित देह परिभल ने मुझे बेसुध कर दिया। बलिष्ठ बाहों के घेरे में मैं न जाने कब तक बैसे ही बेसुध पड़ी रही। हम दोनो के धड़कते हृदय एक साथ संलग्न होकर घड़ी के पैण्डुलय की सधी धड़कन में धड़क रहे थे।[1]

रूप सौन्दर्य के गर्वपूर्ण भाव चित्र भी शिवानी के साहित्य में उपलब्ध हैं –

वही दम्भ वही अकड़ और खड़ी होने की वहीं अहंदीप्त भंगिमा।[2]

निर्भीकता के भावों का भी शिवानी ने अपने कथा साहित्य में निरूपण किया हैं–

प्रगति के लिए समाज का प्रत्येक भय से मुक्त होना अनिवार्य है जब तक मानव सुरक्षा की भावना से संपूर्ण रूप जो आस्वस्त नहीं होता वह प्रगति कर भी कैसे सकता हैं। रवीन्द्र नाथ की प्रसिद्ध कविता "संकटेर विह्वलता निजरे अपमान संकटरे कल्प नाते होयो नाभ्रिय मान।"[3]

---

1. गैड़ा, शिवानी पृ0 54
2. अपराधिनी शिवानी पृ0
3. वातायन शिवानी पृ0 59

(इ) "डरो नहीं" इन शिकारी कुत्तों से बचने के लिए मेरे पास हमेशा, शत कौशल रहते है।[1]

(क) शिवानी आडम्बर पूर्ण खोखले प्रदर्शन के विरोध में तरूण वर्ग से दहेज के दानव से जूझने की भी प्रेरणा प्रदान करती है। आम्डबर पूर्ण खोखला प्रदर्शन आज हमारे निवीर्य जीवन का अभिन्न अंग बन गया है। इससे हमे मुक्त होना ही होगा यह तभी संभव है जब हमारे समाज का तरूण वर्ग स्वयं दहेज के इस दानव से जुझने का दृढ़ संकल्प ले।[2]

समाज पर नियंत्रण रखने के लिए सुरक्षा की भावना बनाए रखने के लिए अपराधी को दण्ड देना नितांत अनिवार्य एवं नैतिक है। जब तक अन्यायी और अपराधी को दण्ड देने की सुव्यवस्था संचालित नहीं होती तब तक मानव अपनी स्वतंत्रता व मौलिक अधिकारों से वंचित ही रहेगा--------- अब समय आ गया है कि हमारे देश के राजा भी इस धर्म का सम्मान करे क्यों कि इस धर्म का सम्मान स्वयं उन्हीं की सुरक्षा को सुदृढ़ करेगा।[3]

कुमायूँ का बोझा ढोने वाला कुली " दोरयाल " मुझे सदा ही कर्मठ जीवन का एक जीवंत प्रतीक लगता है। शरीर पर ह्स्वतय वस्त्र पीठ पर ढाई मन का बोझा और हाथों में मशीनी तत्परता से विने जा रहे, रंग बिरंगी गुलूबंद की इंद्र धनुषी छट। चिकने चुपड़े चेहरे पर झुंझलाहट की एक भी रेखा नहीं, दगदगाते स्वास्थ्य का जीवंत विज्ञापन बना, वह गतव्य स्थान पर एक बोझा पहुंचाते ही, फिर दूसरे पर्यटक के सम्मुख खड़ा, उसी ताजी-मुस्कान के साथ पूंछता है- "कुली होगा शाब"?[4]

---

1. स्मृति कलश शिवानी पृ0 7
2. वातायन शिवानी - पृ0 -23
3. तद्परिवत् पृ0 - 61
4. वातायन शिवानी पृ0 - 102

आज हनारे इस स्वार्थी अनुशासनहीन जीवन में भी यदि किसी ऐसे ही कर्मठ मेट की कण्ठ गर्जना "कोलये–कोलदे–कोलदे– के प्राण फूंक सकती तो तो शायद चिरदरिद्र बोरे की कथरी में भी मखमली रजाई की ऊष्णता आ जाती। जीवन की तीखी चढ़ाई भी हमें उतनी भारात्मक नहीं लगती ओर क्षीण कलेवरा नदी कि चिकने पत्थरों में मछली के शोखे का आनंद लेना हम सीख लेते।[1]

शिवानी में जीवन मूल्यों के प्रति आस्था दिखायी पड़ती है संस्कृति के प्रति अगाध निष्ठा –

आज जहाँ हमने अपने समय जीवन को अनेक नवीन उपलब्धियों से समृद्ध किया है वहीं अपनी संस्कृति की अनेक पुरातन उपलब्धियां गवाँ भी दी है। समय के साथ–साथ हमारी मान्यताएं बदली है। सुखी संयुक्त परिवारों की अब स्मृति ही शेष है। आपस में स्नेह सौहार्द, एक दूसरे के सुख–दुख में भागी होने के स्वाभाविक संस्कार धीरे–धीरे इन्हीं सम्मिलित परिवारों के अस्तित्व के साथ–साथ विलुप्त हो गए है।[2]

बढती हुई अनुशासनहीनता की धज्जियां उड़ाते हुए शिवानी की चिन्ता स्वाभाविक है।

आँखों के सामने ही पूरी पीढ़ी जिस तेजी से बदल गई है उसे ग्रहण कर उदरस्त कर पाना क्लान्त वार्धक्य के लिए सहज नहीं है। पौत्रों के कंधो तक लहराती अयाल पौत्रियों की विचित्र मर्यादाहीन वेशभूषा आधुनिका तीव्रगति से कार भगाती पुत्र वधु का निरन्तर गति शील भृमण, आधी–आधी रात तक चल रहे सहभाजों का मदालस अट्टाहास इन सब को आँखे

1. तद्परिवत् पृ0 – 105
2. वातायन शिवानी पृ0 – 40

मूंद मक्खी पड़े दूध की ही भांति घुटक लेना क्या सबके लिए सम्भव है। किस संतान का ढीला कैशोर्य माता-पिता का सरदर्द नहीं बनता? कौन पुत्र कंठ स्वर बदलते ही पिता के अनुशासन की धज्जियां उडाते नहीं मचलता "एक उम्र आने पर संसार का प्रत्येक पुत्र स्वयं को अपने पिता से बुद्धिमान समझता है?[1]

विदेशी संस्कृति, पर शिवानी व्यंग्यबाण चलाती हैं हमारा देश तुम्हारे भारत सा उदार नहीं है जहाँ बेटा मरे बाप को भी पानी देता है, तुम्हारे बहन को अपने बूढ़े सास-ससुर की सेवा करते देखती हूँ तो ईर्ष्या होती है उनके सौभाग्य पर? हमारे यहाँ केवल आडम्बर है तुम लोगो का सा शील-सौजन्य नहीं है।[2]

शील की स्थापना करते हुए नीति विरुद्ध आचरण की भर्त्सना भी शिवानी करती है और दुनीति को व्याधि की संज्ञा देती है –

दुर्नीति आज हमारे देश में सर्वाधिक आलोचित व्याधि है। कोई भी प्रदेश इसके आतंक से मुक्त नहीं है। इसके आतंक ने वयस्क से भी अधिक त्रस्त कर दिया है, हताश विछुब्ध तरुण वर्ग को।[3]

---

1. तद्परिवत् पृ0 – 31
2. वातायन शिवानी पृ0 – 33
3. तद्परिवत् पृ0 – 40

उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य में प्रेम –

उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य में प्रेम से आकंठ डूबने की लालसा है –

"कभी–कभी वह उसके कंधे झिंझोडकर कहना चाहता, जागो श्यामला, यह वैरागीपन तुम्हारा सहज स्वभाव नहीं है। हंसो, बोलो, आंकठ डूबकर प्यार करो।"[1]

सम्बन्ध कहानी में सर्जन श्यामला के प्रति अपना प्रेम व्यक्त करता है –

"सर्जन ने कहा था– श्यामला, मैं तुम्हें प्यार करता हूँ। मैं घर–बार, बाल–बच्चे सब तुम्हारे लिये छोड़ सकता हूँ।[2]

प्रेम संवेदना को सर्वाधिक महत्व देते हुए उसे पीडा के रूप में चित्रित किया है–

"ताज्जुब है, तब कभी न लगा था कि यही जिंदगी के मधुर दिन हैं, सब साथ थे, आपस में प्यार था, एक दूसरे का दिल न दुखे इसलिए निरन्तर सबका ध्यान रखते थे।"[3]

प्रेम की मानसिकता जो जीवन साथी की कामना करती है, उस मनोविज्ञान को रेखांकित किया है –

"नहीं, मैं रूग्ण नहीं हूँ, न मुझमें कोई मानसिक विकृति है। वह डाक्टर, मेरा मनोविद झूठ कहता है। मैं पूर्णतया स्वस्थ हूँ। मैं केवल साथ ढूढ़ती हूँ, कम्पेनियनशिप, तुम्हें जिलाए रखने के लिए।"[4]

1. कितना बड़ा झूठ, उषा प्रियंवदा, पृ0 – 9
2. तदुपरिवत्, पृ0 – 12
3. तदुपरिवत्, पृ0 – 15
4. तदुपरिवत् पृ0 68

उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य में वत्सलता –

प्रध्वनियों, कहानी शीर्षक में उषा प्रियंवदा ने राजू और मौसी के बीच के वात्सल्य प्रेम का निरूपण किया है –

"मौसी आइए, राजू पुकार रहा है। आवाज सुनकर वह मुड़ती है और बरामदे में आकर राजू को गोद में उठा लेती है। और एक बड़ा-सा चुम्बन उसके माथे पर रख देती है। यह सब राजू के लिए ही है, क्योंकि राजू जीजी का पेट पूछना बेटा है।"[1]

उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य में करूणा –

करूणा उषा प्रियंवदा के साहित्य का मुख्य भाव है। एकाकीपन का दुख ही प्रमुख है,

श्यामला रोई, और चुप हो गयी।[2]

रोना और चुप हो जाना ही जीवन की प्रकृति बन गयी है। करूणा का प्रसार लोकव्यापी है। वह प्रकृति एवं सृष्टि के विविध रूपों से करूणा का सम्बन्ध जोड़ने वाला है। लेखिका ने वन संरक्षण के प्रति चिंता व्यक्त करते हुए पेड़ों के कटने के

---

1. कितना बड़ा झूठ : उषा प्रियंवदा , पृ0 – 23
2. कितना बड़ा झूठ, उषा प्रियंवदा, पृ0 – 20

के प्रति दुख व्यक्त किया है।

"पहले आप, कटहल, मीठे नींबू, सरीफे के पेड़ों का सघन वन चारों ओर था। अब पहली नजर में ही राधिका ने जान लिया कि तमाम पेड़ कट गए है। केवल सामने यूकिलिप्ट्स के कुछ वृक्ष खड़े हुए है।" [1]

उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य में क्रोध एवं घृणा –

क्रोध भय एवं घृणा आदि मनोभावों को उषा प्रियंवदा ने अपनी कहानियों में यथा अवसर व्यक्त किया है–

मैं ठंड से नहीं डरती। केवल रात से डरती हूँ, अकेली, अंधेरी, लम्बी रात से। [2]

पात्रशीत से भयभीत नहीं है, से एकाकीपन, अंधेरी रात्रियों से चिंताग्रस्त है।

विद्रोह की भावना भी उषा प्रियंवदा में यथा अवसर व्यक्त हुयी है–

"एक ऐसी तिल–मिलाहट और विद्रोह उसके मन में भर उठा था,

1. रूकोनी नहीं राधिका, उषा प्रियंवदा पृ0 – 46
2. कितना बड़ा झूठ, उषा प्रियंवदा, पृ0 – 66

कि पापा की कोई बात, कोई सेंटीमेंट उसको नहीं छू पाया। वह बैठी-बैठी नाखूनों से कुर्सी खुरचती रही और होंठों में ही बुदबुदाती रही।" 1

क्रोध के मनोभावों को अनुभावों के रूप में लेखिका ने व्यक्त किया हैं -

"कसकर ओंठ भींजते हुए उसने प्याला खट्से नीचे रखा और हड़बड़ाती हुई अंदर की ओर बढ़ने लगी।"2

आक्रोश का रूप उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य में बराबर व्यक्त हुआ हैं। भारतीय जीवन दर्शन पर आस्था व्यक्त करती हुयी भी उषा प्रियंवदा भारतीय नैतिकता के धुंधले पर को झंझोड़ती है।

और भारतीय नैतिकता, आप बुरा न मानिए, सड़क पर चलना मुश्किल जबकि कोई साथ न लग जाए या फिर चेंज मनी सा "ब" मनी, कोई भारतीय भाषाओं से अनजान हो तो वहीं समझे कि चेंज मनी भारतीय ग्रीटिंग है।3

स्त्री-पुरूष की मैत्री के नैसगिक और स्वाभाविक सम्बन्धों पर ही जीवन साथी चुंनने की पद्वति का समर्थन उषा प्रियंवदा ने किया है। वे भौतिकवादी कहे जाने वाले देशों की सभ्यता को भारतीय सभ्यता की तुलना में श्रेष्ठतर बताती है और आक्रोध व्यक्त करती है-

---

1. रूकोनी नहीं राधिका, उषा प्रियंवदा पृ0 - 28
2. तदुपरिवत् पृ0 - 33
3. रूकोगी नहीं राधिका, उषा प्रियंवदा, पृ0 - 79

"हमारी सभ्यता में स्त्री-पुरुष की मैत्री बहुत नैसर्गिक, अकृत्रिम समझी जाती है। यह जीवन-साथी चुनने की एक पद्धति है। पर वही काम धन के लिए करना दूसरी कैटेगरी में आ जाता है----- और फिर हम लोग अपने आत्मिक ज्ञान को बघारते नहीं।"[1]

उषा प्रियंवदा पाश्चात्य प्रभावों से गहरे प्रभावित होकर भी भारतीय संस्कृति के प्रति आस्थावान है -

आह, कितना सुख, दोनों वाहों भरा सुख, मैं नारी हूँ, केवल एक नारी। फिर भी देवयानी अपनी भारतीयता को अपने व्यक्तित्व से अलग कर फेंक न सकी।[2]

उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य में कर्म -

कर्म ही जीवन की आधारशिला है। उषा प्रियंवदा ने अपने कथा साहित्य में कर्म के महत्व को रेखांकित किया है-

"नहीं हम तुम्हे नवा संसार गढ़ना सिखायेंगे।"[3]

डैन ने राधिका को जीवन के अस्तित्व के प्रति कर्म शील बनने का संदेश दिया है -

1. तदुपरिवत् पृ0 - 79
2. कितना बड़ा झूठ, उषा प्रियंवदा पृ0 30
3. रूकोगी नहीं राधिका, उषा प्रियंवदा पृ0 - 30

"तुमसे कहना भी चाहता हूँ के तुम बड़े होने की चेष्टा करो और जीवन से भागो नहीं, उसे दोनों हाथ फैलाकर ग्रहण करो।"[1]

श्रम से उषा प्रियवंदा के पात्र घबड़ाते नहीं हैं–

मजे की जिन्दगी हो तो मेहनत करने से मैं नहीं घबराती।[2]

भाव–सौन्दर्य का तुलनात्मक विश्लेषण –

शिवानी के कथा साहित्य में "प्रेम" मूल प्रेरणा के रूप में चित्रित हैं, उषा प्रियंवदा "प्रेम" को मनुष्य के लिए दुर्लभ मानती हैं, क्योंकि पाश्चात्य सभ्यता ने आक्रांत कर लिया है।

शिवानी के कथा साहित्य में प्रेम का संयोग पक्ष अधिक मुखर है, उषा प्रियंवदा, प्रेम के वियोग पर अधिक केन्द्रित होती हैं।

शिवानी के कथा साहित्य में प्रेम का विस्तार है, उषा प्रियंवदा प्रियंवदा प्रेम की तीव्रता।

शिवानी और उषा प्रियंवदा दोनों प्रेम में शारीरिक सौन्दर्य की उपेक्षा नहीं करतीं, किन्तु वे प्रेम को इन्द्रियों के धरातल तक ही नहीं सीमित करतीं।

शिवानी ने वात्सल्य भावों का अत्यन्त मार्मिक चित्रण किया है। उनके वात्सल्य वर्णन स्नेहिल सम्बन्धों की पृष्ठभूमि में विकसित होते हैं। उषा प्रियंवदा ने जहाँ कहीं वात्सल्य भावों का रेखांकन किया

1. रुकोगी नहीं राधिका, ऊषा प्रियंवदा, पृ0 – 30
2. तदुपरिवत् पृ0 – 60

है, उनमें आर्थिक विषमताएँ, उपेक्षित संवेदनाएँ मुखर हुयी हैं।

शिवानी के कथा साहित्य में शोषित नारियों, वैधव्य जीवन के प्रति मार्मिकता व्यक्त की गयी हैं। पुरुषों द्वारा प्रबंचित नारियों का वर्णन मिलता है, जो अत्यन्त हृदयवेधक है। ऊषा प्रियंवदा नारी की टूटन, एककाकीपन, हताशा के प्रति सघन संवेदना व्यक्त करती हैं।

भय और विद्रोह आदि भावों को शिवानी ने सामाजिक सुरक्षा की दृष्टि से व्यक्त किया है। समाज की प्रगति के लिए एक दार्शनिक समाज की आवश्यकता है और यह तभी संभव है, जब समाज को निर्भीक बनाया जाये। भयमुक्त समाज का स्वप्न शिवानी में व्यक्त हुआ है, ऊषा प्रियंवदा पुरुषों द्वारा प्रताड़ित, आर्थिक विषमताओं से पीड़ित समाज में व्याप्त भय, हिंसा के विरुद्ध वातावरण बनाने हेतु विद्रोह आदि भावों को अभिव्यक्त करती हैं।

"कर्म" शिवानी और ऊषा प्रियंवदा दोनों के कथा साहित्य में जीवन प्रेरणा के रूप में चित्रित हुआ है। कर्म से ही जीवन का अस्तित्व सुरक्षित होगा। कर्म को अंगीकृत करने का बीजमंत्र शिवानी तथा उषा प्रियंवदा दोनों को समान रूप से स्वीकार है। भाव–सौन्दर्य की दृष्टि से शिवानी का कथा साहित्य, ऊषा प्रियंवदा के कथा साहित्य की तुलना में अधिक समृद्ध है। शिवानी में भावात्मकता का प्राचुर्य है, उषा प्रियंवदा में वैचारिकता का प्राचुर्य है।

षष्ठ अध्याय

अध्याय – 6

शिवानी एवं उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य का अभिव्यंजनात्मक सौन्दर्य

भाषा :-

अर्थ सांकेतिक शब्दों या पदों के समूह को भाषा की संज्ञा दी जाती है। भाषा व्यक्त वाणी है- **भाष् व्यक्तायां वाचि।** इसलिए भाषा भावों की संवाहिका है। भाव प्रकाशन के अन्य साधन संकेत आदि भी है, किन्तु उनमें सूक्ष्म अभिव्यंजन संभव नहीं, अतः भाषा को ही भावबोध तथा विचारबोध का समर्थ साधन माना जाता है। भाषा का मूल आधार है- "शब्द" शब्द पर ही भाषा के विशाल भवन का निर्माण होता है। भाषा की प्रकृति परिवर्तनशील है और यही परिवर्तन जीवन्तता का प्रतीक है।

भाषा के संबंध में प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिकों ने इस प्रकार अपने मत व्यक्त किये हैं -

ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा विचारों का प्रतीकीकरण ही भाषा है।

स्वीट

मनुष्य ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा अपना विचार प्रकट करता है। मानव मस्तिष्क वस्तुतः विचारों के प्रकाशन के लिए ऐसे शब्दों का सदा उपयोग करता है। इस प्रकार के कार्य-कलाप को ही भाषा की संज्ञा दी जाती है। येस्वर्सन भाषा एक प्रकार का चिन्ह है। चिन्ह का तात्पर्य उन प्रतीको से है जिनके द्वारा मनुष्य अपने विचार दूसरों तक संप्रेषित करता है। वे प्रतीक भी कई प्रकार के हैं जैसे नेम ग्राह्य, सोत्र ग्राह्य, एवं स्पर्शग्राह्य,। भाषा की दृष्टि से वास्तव में श्रोत्रग्राह्य प्रतीक ही सर्वश्रेष्ठ है।"

वॉन्द्रिए

"ध्वन्यात्मक शब्दों का हृदयगत भावों तथा विचारों का प्रकटीकरण ही भाषा है।" गुणे

अर्थवान् कण्ठोद्गीर्ण ध्वनि–समष्टि ही भाषा है।"

–सुकुमारसेन

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि सार्थक ध्वनियों के माध्यम से एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति पर अपने विचार प्रकट करता है और यही भाषा की अभिद्या प्राप्त करता है। वागिन्द्रियों से प्रसूत अर्थवान, यादृच्छिक रूढ़, ध्वनि संकेत की वह व्यवस्था जिसके माध्यम से एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के भावों तथा विचारों का आदान प्रदान करता है, भाषा कही जाती है। भाषा अभिव्यक्ति का श्रेष्ठ माध्यम है।[1]

शिवानी का भाषा सौन्दर्य :-

शिवानी में शिल्पगत सौन्दर्य प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होता है। वे अपनी अभिव्यजंना को अधिकाधिक कयात्मक बनाती हैं। उनकी व्यंजनाएँ भाषा में चित्रात्मकता पैदा करती हैं। शिवानी अप्रतिम शब्द शिल्पी के रूप में सामने आती हैं। भाषा की कृत्रिमता से हटाकर सहज प्रयोगों द्वारा परिस्कार प्रदान किया है। जिस भाषा ने शिवानी ने गढ़ा है, वह एक प्रान्त की न होकर समूचे राष्ट्र जीवन का प्रतिनिधित्व करती है। शिवानी की भाषा साहित्य की भाषा है, वह मस्तिष्क की भाषा न होकर हृदय की भाषा बन जाती है। शिवानी नए प्रकार की भाषा शैली को चुनती है। उदाहरण के लिए देखें------

1. हिन्दी भाषा विद्वान , जी0 डी0 शर्मा, पृ0 4

"बड़ी रात तक नदी में तैरती भ्रमणार्थी आनन्दी भीड़ से उफनती दीर्घ वे ही नौकाएँ दूर से गंगा में तैरते घृत दीपों सी लगती हैं।"[1]

आधुनिक कहानी लेखिकाओं ने प्रेमचन्द की भाषा शैली से भिन्न भाषा शैली को आधुनिक सन्दर्भों में चुना है।

"आधुनिक कथाकारों ने कालानुकूल, पात्रानुकूल, भावानुकूल भाषा का प्रयोग अपनी कहानियों में दिया है। कमलेश्वर के शब्दों में नए कहानीकार ने इसी भाषा की खोज की है, अपने भीतर से और अपने समय से। इसी भाषा में उसने जीवन मूल्यों का स्पष्टीकरण किया है। इसी भाषा की उसने सारे विघटन, सारी घुटन, ऊब, बदहवासी और टूटने में से उठाया है– यह भाषा भरते हुए शानदार अतीत की नहीं उसी में से फूटते हुए विलक्षण वर्तमान की भाषा है। उस अनाम अनरक्षित आदिम मनुष्य की जो मूल्य और संस्कार चाहता है।"[2]

शिवानी भाषा के लिए शब्द चयन में उदार है। उन्होंने यथास्थान संस्कृत, अंग्रेजी, पहाड़ी बंगाली और हिन्दी के ठेठ शब्दों का प्रयोग किया है। भाषा की सामर्थ्य और सहजता के लिए शिवानी ने अनेक लोक प्रचलित ठेठ शब्दों का प्रयोग किया है। चौदह फेरे, किशुनली का ठाँठ, भैरवीं और मायापुरी आदि में पहाड़ी समाज का चित्रण लेखिका ने किया है।[3] शिवानी पर दुहराव का आरोप भी आलोचकों ने लगाया है, शिवानी ने इस तथ्य को स्वीकार करते हुए लिखा है –

1. चरैवेति, शिवानी पृ0 12
2. नई कहानी की भूमिका, कमलेश्वर, पृ0 175
3. शिवानी के उपन्यासों का रचनाविधान, कु0 शशि बाला पंजाबी पृ0 79

"अपने उसी परिवेश का सही चित्र–प्रस्तुत करने में जो शैली बड़ी स्वाभाविकता के साथ स्याही की भाँति मेरी लेखनी ने सोख ली है, उसे मेरे आलोचको ने मेरा दुहराव कहा है, किन्तु मैं डाँ0 जॉनसन की पंक्तियों में अटूट विश्वास रखती हूँ, वन्स अ मैन हैज डबल्ड स्टाइल, ही कैन सैल्डम राइट एन ऐनी अदर पे।" लेखक जिस शैली को एक बार अपना लेता है, उसे छोड़कर फिर किसी नई शैली में लिखना असम्भव नहीं तो कठिन तो अवश्य होता है।[1] शिवानी की भाषा शैली मनोभावों के अनुरूप अपना विन्यास करती है, कोमल और उग्रभावों की व्यंजना के लिए वे पृथक भाषा शैलियों को अपनाती है। पाखण्ड और ढ़ोग पर प्रहार करने के लिए वे व्यंग्य शैली को चुनती है।

शिवानी ने गाथा जड़ता को समाप्त करके नए–नए आयामों की शुरुआत भाषा के क्षेत्र में की है। भाषा की विविधता शिवानी की एक प्रमुख उपलब्धि है।

शिवानी की भाषा में संस्कृत तत्सम शब्दों का बाहुल्य है इतनी ही नही कहीं–कहीं संस्कृत की सूक्तियों, एवं श्लोंको का भी यथा संभव उपयोग किया गया है।

(1) झंकरि मिरलि कदम्ब द्रुम न मध्यमान,
परिमलेन मृणमद कर्पूर कुंकुमवास
सुरमिणा चन्दनेनानुलिप्त सर्वांगों।"[2]

---

1. रेखा चित्रों की भूमिका में, शिवानी पृ0 12

2. अतिथि, शिवानी पृ0 42

2. ग्रीष्म संध्या, आसन्न प्रसवा, जंगली हिरनी सी अलस उन्माद हो उठी वन कोह में लौट रहे क्लान्त वन पक्षियों कल-कूजन, उस उष्णता को सहसा स्निग्ध कर गया। पशिचमाकाश से रेंगती अरुणिया पूरे वन में वनान्तर को रंग गई।[1]

3. माता नास्ति पिता नास्ति
नास्ति बन्धु सहोदरा
आर्य नास्ति ग्रहं नास्ति
तस्मात् जागृत-जागृत्।[2]

4. नक्षत्र खचित गगन मण्डल में उसके अस्तित्व का कोई भी चिन्ह मुझे दृष्टिगोचर नहीं होता, खिली चन्द्रिका को आकाश में छिपी किरण अज्ञात मेघदायिनी के मेघ खण्डों ने गुरिल्ला सैनिकों को फुर्ती से दबोच लिया है। गहन अन्धकार को छौंटती देव द्रुमों की सी सीटी बजाती बयार सुदूर पाषाण देवी के बोरे में बँधे घण्टों को हिलाते वही चली जा रही है।3

5. कालिदास ने सुधा लिप्त प्रसादों पर जिन कुन्चित केश वाली युवतियों इन समीप आए सर्धकान्त युक्त अष्टमी के चन्द्रमा को पकड़ अपने द्रुशमध्य गुथी केवड़े सी कोपल से पूर्व

---

1. अतिथि शिवानी पृ0 89
2. तदुपरिवत् पृ0 181
3. चिर स्वयंबर शिवानी पृ0 106

करने का वर्णन किया है, उन्हीं मे से एक वन-विलास ने उसी क्षण उस नवगात चन्द को पकड़ अपने केश मे बाँध लिया।[1]

अरबी फारसी शब्दों का सटीक प्रयोग खड़ी बोली को राष्ट्रीय भाषा की ओर ले चलने का प्रयत्न जान पड़ता है। इस क्रम में शिवानी ने अरबी फारसी शब्दों का प्रयोग करके भाषा को गति और सौन्दर्य प्रदान किया है।

(ल) लाहौल विला कूबत क्या वाहियात त्योहार है? देख रहे हैं हम सफेद चिट्‌ट शेरवानी और धुली तमनिया पहने हैं फिर भी रंग डाल दिया कमबख्तो ने खुदा इनका बेड़ा गर्क करे।[2]

अरबी फारसी के शब्द ही नहीं उस भाषा में कविताओं का प्रयोग भी शिवानी ने किया है -

(अ) जवानी जा चुकी लेकिन,
खलिश दर्दे मुहब्बत की,
जहाँ महसूस होती थी,
वही महसूस होती है।

(ब) दीवार क्या माटी मेरे कच्चे मकान की
लोगों ने मेरे सहन में रस्ते बना लिये।

(स) खैरियत तो हैं? क्या हुआ हामिद भाई?
हामिद अब ऐसी हालत में तुम हमारे यहाँ मत आया करो।[3]

---

1. गौड़ा शिवानी पृ0 42
2. मेरा भाई शिवानी
3. तदुपरिवत् पृ0 15

अंग्रेजी वाक्यों तथा वाक्य शब्दों का प्रयोग हिन्दी के बीच जिस सहजता से शिवानी ने किया है उसकी एक नई शैली को जन्म मिल गया है ये मिश्रित शैली शिवानी में सर्वत्र दिखाई पड़ती है।

(A) Can I get some snacks?
उसने अपने मित्र से पूछा।

(B) उसने क्रुद्ध दृष्टि से मुझे भस्म कर कहा –
What I disclose my countings weather to to a goreighner? Never; Never in my life.

(C) What a beautiful song,[1]

(D) What do you know of its simphni. you don't know its meaning.[2]

(E) स्ट्रोवरी लीजिए चाय, पेटीचीफ, वास्केट हुजूर, ओनली वन रूपर वेरी स्वीट।[3]

पर्वतीय प्रदेश से जुड़ी होने के कारण शिवानी में उनके मूल निवास कुमायूँ के शब्द भी कहानियों में प्रयुक्त होते हैं। उदाहरण के लिए– पहाड़ में तो उनकी अनेक चक्कियाँ है जिनमें जल प्रवाह से आटा पीसा जाता है।

(अ) इन्हें हाट कहते हैं।[4]यहाँ हाट शब्द पर्वतीय अंचलों में

---

1. चौदह फेरे शिवानी पृ0 43
2. तदुपरिवत् पृ0 43
3. तदुपरिवत् पृ0 52
4. चरैवेति शिवानी पृ0 42

प्रयुक्त होने वाला है। इसी प्रकार अन्य पर्वतीय क्षेत्रों की शब्दावली भी शिवानी के कथा साहित्य में मिलती है।

(ब) पहाड़ी डोड़याली को देखा है न?[1] ड़ोडयाल शब्द का प्रयोग पहाड़ी बिल्ली के लिए किया गया है, जो पर्वतीय शब्द है।

पर्वतीय भाषाओं के शब्द ही नहीं पर्वतीय संस्कार गीतों का भी उपयोग कथा साहित्य में शिवानी ने किया है।

(स) शकुना दे क़ाजैय
प्रातः जो न्यूतू मैं सुर्ज वे
किरणन को अधिकार
समय बधाने न्युतिये।[2]

(द) जबहि महाराजा चौक से आए
चंदन चौक पुराये हो
मथुरा के हो वासी।[3]

(य) सकग बगमांड से न्यारा
हमारा देश हिन्दुस्तान।[4]

---

1. मेरा भाई शिवानी पृ08 2
2. कालिन्दी, शिवानी पृ0 30
3. तदुपरिवत् पृ0 45
4. कालिंदी, शिवानी पृ0 114

(र) जी रया चया लो जी रया।[1]

पर्वतीय भाषाओं के अनेकानेक शब्द शिवानी के कथा साहित्य में पाए जाते हैं। उदाहरण – बुडज्यू, बामड़ो, नांसपीटे, धड़ी, नरैड़।

(इ) बाबू सम्बन्ध भुन खायू

(क) जागना भुतणि

झुकुलै चिथड़ि

जागजा भुतड़ि

झकुलै चिथड़ि

पर्वतीय लोक गीतों का प्रयोग शिवानी के साहित्य में प्राप्त होता है क्योंकि मूलतः वे कुमायूँ क्षेत्र से जुड़ी हैं। यहाँ कतिपय लोक शैली के पर्वतीय उदाहरण प्रस्तुत किये जा रहे हैं ।

(अ) कालिंदी पंत

देखने की संत
आग की चुड़कंत
हृदय में बसंत

(ब) अनयारि कुढ़ैणी

तितरि बांसौ

बुड़ गजै सिंह

जुग मलाशौ।[4]

---

1. कालिंदी , शिवानी पृ0 115

2. कालिंदी, शिवानी पृ0 155

3. कालिंदी, शिवानी पृ0 177

4. तदुपरिवत् पृ0 201

(स) बंण गाँधी सिपाही

रहटा कातुंत्ता

देश का लीजिया

हम मरी मेदुला।[1]

(द) उड़कुची मुरकुच्ची

दैण दुहाडच्ची

लइया कैंची

फ्तिल ऐंची

चौराक नानतिन कसकस छूँनी

वृंदावन में व्यूर खेलनी।[2]

(इ) घुघली बासूती

नाम को छौ?

माल कोटी

के व्यालो?

दूध भाती

को खालो

तू खाली

भातै की तौली घुर्र–घुर्र।[3]

---

1. कालिंदी शिवानी पृ0 202
2. तदुपरिवत् पृ0 203
3. तदुपरिवत् पृ0 204

भाषा का एक विशेष लावण्य अलंकार युक्त भाषा प्रयोग का भी है। उदाहरण के लिए देखें –

(अ) वंगहन निद्रामग्न कच्छप की भाँति सिर छुपाए हुए परमानन्द में डूबे थे।[1]

(ब) जनम कुण्डली की यही भ्रामरी दशा मुझे न जाने कितने देश विदेश के साथ–साथ उड़ाती ले गई।[2]

(स) एकदम जैसे तारसप्तक के षडंग से मंद्र के षड्ग में उतर रहे हों।[3]

(द) तीव्र श्रोता – असीम शक्ति शालिनी बेकाल झील ने ही भूख प्यास मिटा दी थी।[4]

(य) अपनी वन सम्पदा की सुरक्षा कोई साइबेरियन से सीखे जिधर दृष्टि जाती उधर ही प्रहरी से खड़े लम्बे–लम्बे पेड़, हवा ऐसी लगता कि पुरवइया के मृदुल झोके हमें पुलकित कर रहे हों।[5]

---

1. चरैवेति, शिवानी पृ0 29
2. तदुपरिवत् पृ0 31
3. तदुपरिवत् पृ0 36
4. तदुपरिवत् पृ0 38
5. तदुपरिवत् पृ0 39

(र) बड़ी देर तक हम उनके किशोर हाथों को हिलते देखते रहे, फिर हमारी अन्तरधामन सर्पिणी की तीव्र गति से भागने लगी, पीन पाहन और ज्युयिभार वृक्षों की सघन छतरियाँ निरंतन हमारे स्तर पर चंवर सा डुला रही थी [1]

(ल) मलाई की तह और मिट्टी के भाड़ में खौलाए हमारे देश की गोरखपुरी दही की सी सोंधी मिठास।[2]

(व) एक निष्काय दीपशिखा का छोटा सा चित्र, दीपदान में जल भरी शिखा जैसे किसी तुषार में आच्छादित पार्वतय प्रदेश के काठ के घरौंदे में नन्हा सा मृत्तिका प्रदीप्त धरा हो।[3]

भाषा के मुहावरों के कारण लाक्षणिक व्यंजनाएँ बड़ी मनोहारी बन पड़ी हैं –

(अ) हमारे मन की क्षुब्ध खिसियानी बिल्ली उसी के खम्भे को नोचती है।[4]

(ब) कूटनीतिज्ञ ऐसे कि सदा चित्त भी मेरी, पट्ट भी मेरी, अण्टा मेरे बाप का।[5]

(स) जैसे दिन भर का भटका खगदल चहकता दिन डूबे अपने–अपने घोसले में लौट रहा हो।[6]

---

1. चरैवेति , शिवानी पृ0 45
2. तदुपरिवत् पृ0 45
3. तदुपरिवत् पृ0 79
4. तदुपरिवत् पृ0 54
5. तदुपरिवत् पृ0 57
6. तदुपरिवत् पृ0 59

(द) इहां कुम्हड़ बतिया कोउ नाहीं।[1]

(य) तुम्हें दातों के बीच, जीभ सा सेंत सा बचाया है।[2]

(र) फाइल और घोड़ा सरपट भागते रहना चाहिए।[3]

(ल) मेरा माथा ठनका।[4]

(व) रस्सी जल गई थी पर ऐंठ तो वैसी ही धरी थी।[5]

(श) कभी मौत से मत डरना, हमें देख दोनों पैर कब से कब्र में लटकाये बैठे हैं।[6]

(क) ऐसे बीसियों तहसीलदार नित्य मेरे चपरासियों की जूतियाँ चाटते हैं।[7]

सड़ – सड़ कर कुत्ते की मौत मरो।[8]

(ख) न हींग लगे न फिटकरी, रंग चोखा।[8]

(ग) सगे मौसेरे भाई से ही विवाह कर उसने हमारी बिरादरी की नाक कटाई[9]

(घ) और क्या बनेगी सरकार वही चने की दाल और रोटी बनी है।[10]

(च) आये दिन चोरी डकैती, राह चलती निरीह महिलाओं के गले

---

1. अतिथि, शिवानी, पृ० – 16
2. तदुपरिवत्, पृ० – 16
3. तदुपरिवत्, पृ० – 15.
4. मेरा भाई, शिवानी, पृ० – 7
5. तदुपरिवत् पृ० – 11
6. तदुपरिवत् पृ० – 16
7. कस्तूरी मृग, शिवानी, पृ० – 30
8. कस्तूरी मृग, पृ०34
9. कस्तूरी मृग, शिवानी, पृ० – 106
10. कालिंदी, पृ0–154
11. अपराधिकी, शिवानी, पृ० – 65

की चेन खीच लेना हमारे लिए दाल-भात हो गया है।

(छ) उसका माल ले उड़न छू हो जाते थे।[1]

हिन्दी सिनेमा की मार-धाड़, ढिसूँ-ढ़िसू ने आज के होनहार विरवान के पात और चीकने कर दिये हैं।[2]

(ज) चूना चटा सकते हैं।[3]

(अ) उसकी वयस है केवल 22 वर्ष, जिस वयस में, आजकल समृद्धि घरों की लड़कियों के दाँत टूटते हैं।[4]

(ब) सचमुच ही हमारे चुल्लू भर पानी में डूब मरने जैसी बात है। किएक ओर तो हम देश की प्रगति व सुरक्षा पर प्रगल्भ भाषण देते हैं और दूसरी ओर मानव जीवन का प्रत्येक क्षण आज आरक्षित है।[5]

(स) हम कितने ही बड़े अफसर क्यों न हो अवकाश प्राप्त करते ही हमारी सरकार हमें दूध की मक्खी सा दूर फेंक देती है।[6]

(द) प्रदेश के खड़पेंच मंत्री ने मेरा गला रेंत दिया।

(इ) अब आप ही बताइये मैं गंगू तेली भला राजा भोज से कैसे जूझ सकता था।[7]

---

1. वातायन शिवानी, पृ0 59 2. वातायन शिवानी पृ0 59

3. तदुपरिवत् पृ0 59 4. तदुपरिवत् पृ0 61

5. तदुपरिवत् पृ0 61 6. तदुपरिवत् पृ0 112

7. मणिमाला की हंसी शिवानी पृ0 152

(क) मन्नू ने नम्रता और शिष्टाचार की घूँटी तो अपने बच्चों को जन्म घुट्टी में घोलकर पिलाई थी।[1]

(ख) फिर किसकी छाती में इतना बाल है जो इस छाती से भिड़े।[2]

(ग) पर उड़ती चिड़िया को पहचानने वाले उस दुनियादार व्यक्ति से भी न जाने कहाँ चूक हो गई। ऊँची खिड़की से कूदकर जंगली बिल्ली सी राजराजेश्वरी भाग खड़ी हुई और साहसी प्रेमी की बाहों में खो गई।[3]

बंगला प्रभाव भी शिवानी में पूरी तरह से परिलक्षित होता है। उदाहरण के लिए देखें –

(1) वेष घुमाते पारेन भद्रलोक[4]

(2) कीजै बोलेन शिवानी दी, घूमाच्छी को चाप[5]

(3) रविहीन भजि दीप्ति प्रदोषे–प्रदोषे देशे
जगतेर नहि मणि दीप्ति नहीं–गिरि सकलेई शेषे।[6]

(4) ताकी ध्यच्छे सोना लागिये दवो दुधारे।[7]

(5) सड़ाले आल्टा बाजे
पांचटा कैनो बाजेना
ओ बाबू जी, बाबू जी।[8]

---

1. स्वंय सिद्धा, शिवानी पृ0 – 71
2. रथ्या शिवानी, पृ0 – 92
3. भैरवी, शिवानी, पृ0 – 45
4. परैवेति, शिवानी, पृ0 – 29
5. तदुपरिवत् पृ0
6. तदुपरिवत् पृ0 – 40
7. तदुपरिवत् पृ0 – 49
8. तदुपरिवत् पृ0 – 71

(6) की हे विश्वामित्र, कौन मेनका नाम छे आकाश थेकि।[1]

(7) ओगो अभार श्रावत्त मे होर
खेया तोरीर मांसी।[2]

(8) "तीरे त्रिभुवन, तीर बोनेरा ऐसो भालो बंग्ला बोले आरतुई तोरा
इंग्रेजी छाड़ बी ना? आज ऐके तोके बंग्ला बलतेई हवे"[3]

(9) कोलकता केवल भूले गया
भरी हाय रे –
बऊ बजारे गिया देखी,
बउता कोथायनाई
श्याम बाजारेगिया दे खिलाय
ना श्याम नाराई"[4]

(10) थाक–थाक टाक या, पुजिलाभी कुरिबै हौवेना[5]

(11) प्रभाते उठिया
जे मुख हेरीन
दिन जाबे आजीं भोलो
कहे चण्डीदास 6

(12) मेरी छे भेंगे छेरे, छेलेर हाथ गैंछे –[7]

---

1. चरैवेति, शिवानी, पृ0 – 70
2. तदुपरिवत् , पृ0 – 77
3. आमादेर:शान्ति निकेतन, शिवानी, पृ0 –13
4. तदुपरिवत् पृ0 –30
5. तदुपरिवत् पृ0 – 30
6. तदुपरिवत् पृ0 – 32
7. तदुपरिवत् पृ0 – 32

भाषा में ग्राम्यता और आञ्चलिकता भी पात्रानुकूल प्रयोग में लाई गई है। उदाहरण के लिए देखें --

(अ) बस उस बिसननौटा से बच के रहयौ जया। बड़ी आगलगौनी है। जब से भाई मंतरी बना, खुद परधान मंतरी बनी हवा में उड़ै है। मैं अपने भाई से कहके ये करवा दूँगी, वो करवाय दूंगी।[1]

(ब) अब बिटिया दामाद कनै है, अपनी इस फुफिया सास से बच के रहियो बिट्टी।[2]

भाषा में लोक गीतों का प्रयोग प्रभाव को संवर्धित करने को किया गया है। जैसे -

(अ) पानी भरे हो,

पानी भरे हो,

कोऊ अलबेले की नार झमाझम

हाथ रख दिया,

सर पे गगरिया,

तिरछी चितौन,

घायल करे रे

कोऊ अलबेले की नार, झमाझम [3]

---

1. अतिथि, शिवानी, पृ0 - 162
2. तदुपरिवत् पृ0 - 162
3. आमादेर शान्ति निकेतन पृ0 - 31

ये पूछो कि अब तक कितने मतारौं का मूड़ चांप चुकी है मरद ससुरे हैं हमारे दुश्मन, समझी छोटी जिज्जी? हर मरद को देख हमारा तन बदन सुलग जाता है। इसी से जब तक एक – एक से बदला लेकर कांख में न दबा लूँ कलेजे में ठण्डक नहीं पड़ेगी।[1]

पीतम चतुर सुजान्

गाँधी फीका चरखा लादे

शहर बरेली जादे

बरेली का सुरमा लाये,

चरखे में बसे हैं परान

गाँधी जी की चरखा ला दे।[2]

बुन्देलखण्डी का प्रभाव भी शिवानी में यत्र तत्र परिलक्षित होता जाता है –

अरी कानबाई कहाँ मर गई निगोड़ी, चून मिर्च की नजर उतार कर चौबारे पर तो घर आ, उमर गुजर गई, रजवाड़ों में, पर मुई पुलेदी भर शउर नहीं सीख पाई।[3]

1.. चिर स्वयंवरा, शिवानी, पृ0 – 117

2. तदुपरिवत् पृ0 – 110

3. तदुपरिवत् पृ0 – 133

भाषा –

बंगला भाषा के शब्द, वाक्य प्रयोग, पद प्रयोग, सभी शिवानी के साहित्य में विशेष रूप से प्रयुक्त हुए हैं।

(अ) श्रावनेर, गगनेर गाय, विद्युत चमचिया जाय,
छड़े – छड़े सरबरी, सिंहरियाउठे हाय – हाय,

(ब) तुई जे अमार संगे सो गाछी गिए छिल्ली, मां बाबा के किछू बलीश न, बूझली।[1]

शिवानी का कथा साहित्य विविध भारतीय भाषा समूहों से बना हुआ है। पंजाबी भाषा की शब्दावली भी शिवानी ने प्रयुक्त की है –

(अ) "खोती नू कुछ खिला दित्ता सी गुरू दे बच्चे ने।"[2]

---

1. संरगमा – शिवानी, पृ0 – 87
2. स्वयंसिद्धा, शिवानी, पृ0 – 72

उषा प्रियंवदा का शब्द संसार –

उषा प्रियंवदा के शब्द संसार का अध्ययन करने से ज्ञात होता हैं कि वे शब्द को सेतु की संज्ञा प्रदान करती हैं, जिसे मौन के सागर पर बाँधती है, अर्थात् उनका शब्द संसार ही आचरण को व्यक्त करता है ––

"शब्द वह सेतु हैं, जिन्हें हम मौन के सागर पर बाँधते हैं। मैं उसे तोड़ना नहीं चाहती। यदि वह क्षण फूल होते तो उन्हें बटोर कर रख लेती, सूखने पर भी वह हाथ से तो छुए जा सकते।"[1]

उषा प्रियंवदा की शब्दावली तत्सम प्रधान नहीं है, किन्तु वह कल्पना के प्रावल्प से, अनुभूति से सचित्र, अभिव्यंजना देने में समर्थ है ––

"उन अनाहूत आँसुओं और निद्राहीन रातों की स्मृति में पीछे ठेल देती हूँ और अक्षय की ओर मुस्करा कर देखती हूँ। अभी तो मेरे माथे पर लाल बिन्दु है और बालों में कुन्द का फूल।"[2]

भाषा की बिम्बों के स्तर पर ले चलने में शिवानी की भाँति उषा प्रियंवदा भी सफल सिद्ध हुयी हैं, भाषा ने चित्रमदता और गति दोनों को रूपायित किया है –– "मैंने एक कंकड़ी पानी में और फेंकी और नन्हें से वृत्त का लहरों में मिल जाते देखा।"[3]

---

1. एक कोई दूसरा, ऊषा प्रियंवदा, पृ0 – 56
2. तदुपरिवत् पृ0 – 56
3. तदुपरिवत् पृ0 – 23

वैचारिकता के साथ भावात्मक अभिव्यक्ति के लिए भाषा को सक्षम बनाने में लेखिका का प्रयत्न प्रशंसनीय है ---

"उसके चारों ओर गन्ध थी --- गीले पानी की, सागर की गन्ध। लहरें आकर उसके पैर भिगोने लगीं और फिर एक बड़ी - सी लहर आकर उसे सराबोर कर गयी।"[1]

मुहावरों के कारण उषा प्रियंवदा की भाषा लाक्षणिकता के साथ हृदय को छूती है, चेतना को झकझोरती है ---

"जाने किस - किस घाट का पानी पीकर तुम आई हो।"[2]

मुहावरों ने मनोजीवन को चित्रबद्ध करने में अपूर्व सफलता प्राप्त की है --

"यही कि तुम दुलार में बेहद सिरचढ़ी हो गयी हो।"[3]

तत्सम् शब्दावली -

उषा प्रियंवदा ने अपने कथा साहित्य में तत्सम् शब्दों का प्रयोग किया है, किन्तु उनकी संख्या शिवानी की भाँति नहीं है।

उषा प्रियंवदा यौगिक और योगरूढ़ शब्दों के प्रयोग के प्रति अधिक अभिरुचि नहीं लेतीं।

---

1. एक कोई दूसरा, ऊषा प्रियंवदा, पृ0 - 66
2. रुकोगी नहीं राधिका, ऊषा प्रियंवदा, पृ0 - 61
3. तदुपरिवत् पृ0 - 67

संस्कृत के शुद्ध या अधिकृत शब्द उनके कथा साहित्य में यत्र – तत्र ही पाये जाते हैं। ऐसे शब्दों का प्रतिशत अधिक नहीं है।

जहाँ कहीं सामंतीय पात्र हैं, वहीं भाषा में तत्सम् शब्दों का प्रयोग किया गया है। उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य में कुछ ऐसे शब्दों की तालिका दी जा रही है, जिसमें तत्सम शब्दों का प्रयोग पाया जाता है --

स्वंमित,[1] अवसुन्न[2], पलायन[3], संभ्रम[4], विन्यास[5], क्लांत[6], प्रत्युत्तर[7], प्रतीक्षा[8], निष्प्रभ[9], पुरातत्ववेत्ता[10], स्वामिनीत्व[11], सम्राज्ञी[12], उत्कंठित[13]।

तद्भव शब्दावली –

संस्कृत से निकले विकृत या विकसित शब्दों को तद्भव कहते हैं। तद्भव एवं देशज शब्दों का बाहुल्य आंचलिक उपन्यासों में पाया जाता है। उषा प्रियंवदा की कहानियों और उपन्यासों में तद्भव

---

1. कितना बड़ा झूठ, ऊषा प्रियंवदा, पृ0 – 18
2. तदुपरिवत्, पृ0 – 18
3. तदुपरिवत्, पृ0 – 20
4. तदुपरिवत् पृ0 – 21
5. तदुपरिवत्, पृ0 – 50
6. रुकोगी नहीं राधिका, शिवानी, पृ0 – 6
7. तदुपरिवत्, पृ0 – 7
8. तदुपरिवत् , पृ0 – 10
9. रुकोगी नहीं राधिका, पृ074
10. तदुपरिवत्, पृ0 – 75
11. तदुपरिवत्, पृ0 – 75
12. तदुपरिवत् पृ0 – 101
13. तदुपरिवत्, पृ0 – 101

प्रधान शब्दावली ही प्रयुक्त हुयी है। तद्‌भव के कतिपय उदाहरण प्रस्तुत किये जा रहे हैं --

देशज शब्दावली –

ऊषा प्रियंवदा ने लोक भाषा में प्रयुक्त होने वाले देशज शब्दों का प्रयोग किया है, किन्तु ऐसे शब्दों का बाहुल्य नहीं है ---

ठूँसो[1], देवरानी–जेठानी[2], लोचड़[3], परेपुछैना[4], चिन्दी–चिन्दी[5], धड़ाधड़[6], खचाखच[7]।

विदेशी शब्दावली –

उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य में विदेशी शब्द, अंग्रेजी का बाहुल्य है। इन्हें आगत या गृहीत कहना उचित होगा। विदेशी (अंग्रेजी) शब्दों के प्रयोग उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य में सर्वाधिक पाये जाते हैं –

---

1. कितना बड़ा झूठ, ऊषा प्रियंवदा, पृ0 – 15
2. तदुपरिवत्, पृ0 – 22
3. तदुपरिवत् पृ0 – 22
4. तदुपरिवत् पृ0 – 25.
6. रुकोगी नहीं राधिका, ऊषा प्रियंवदा, पृ0 – 19
7. तदुपरिवत् , पृ0 – 103

ट्रांसप्लांट[1], नार्मल[2], बिजी[3], हेडलाइन[4], क्वार्टर[5], जर्नलिज्म[6], स्कोप[7], अफोर्ड[8], कमिटमेंट[9], नोटिस[10], कंडोलेंस[11],

सुसाइड[12], ओवरकोट[13], टेबललैंप[14], अपसेट[15], डिटोस[16] वैस्ट[17], हार्ट[18], टार्चर[19], अबार्शन[20], पेरायूरिटेक[21],

वैलिड[22], शाट्स[23], चेंज[24], ब्यूटीपार्लर[25], फैल्ट[26],

पोजीशन[27], डिनर[28], अफोर्ड[29], कम्युनिकेशन[30], एयरपोर्ट[31],

सेंसटिव[32], अपार्टमेंट[33], सोफेस्टिकेटेड[34], कन्वीनियंट[35],

इंटिलेक्चुअल[36], एडजस्ट[37], रिजेक्ट[38],

---

1. कितना बड़ा झूठ, ऊषा प्रियंवदा, पृ0–10
2. कितना बड़ा झूठ, पृ0 – 10
3. तदुपरिवत् पृ0 – 11
4. तदुपरिवत् पृ0 – 14
5. तदुपरिवत् पृ0 – 15
6. तदुपरिवत् पृ0 – 17
7. तदुपरिवत् पृ0 – 17
8. तदुपरिवत् पृ0 – 17
9. तदुपरिवत् पृ0 – 17
10. तदुपरिवत् पृ0 – 17
11. तदुपरिवत् पृ0 – 18
12. तदुपरिवत् पृ0 –18
13. तदुपरिवत्, पृ0 – 18
14. तदुपरिवत् पृ0 – 18
15. तदुपरिवत् पृ0 – 19
16. तदुपरिवत् पृ0 – 19
17. तदुपरिवत् पृ0 – 19
18. तदुपरिवत् पृ0 – 19
19. तदुपरिवत् पृ0 – 19
20. तदुपरवित् पृ0 – 19
21. तदुपरिवत् पृ0 – 20
22. तदुपरवितन् पृ0 –29
23. तदुपरिवत् पृ0 – 29
24. तदुपरिवत् पृ0 – 32
25. तदुपरिवत् पृ0 32
26. तदुपरिवत् पृ0 – 35
27. तदुपरिवत् पृ0 – 37
28. तदुपरवित् पृ0 – 38
29. तदुपरिवत् पृ0 – 28
30. तदुपरिवत् पृ0 – 30
31. तदुपरिवत् पृ0 – 38
32. तदुपरवित् पृ0 – 58
33. तदुपरवित् पृ0 – 102
34. तदुपरिवत् पृ0 – 102
35. तदुपरिवत् पृ0 – 103
36. तदुपरिवत् पृ0 – 103
37. रुकोगी नहीं राधिका, ऊषा प्रियंवदा, पृ0 –29
38. रुकोगी नहीं राधिका पृ0–29

अरबी– फारसी भाषाओं के शब्द यत्र–तत्र मिलते हैं। उनकी संख्या अधिक नहीं है ––

कोशिश[1], तलखी[2], महसूस[3], मतलब[4], ताज्जुब[5] असलियत[6], मेहरबानी[7]

शब्दावली के अध्ययन से ज्ञात होता है कि ऊषा प्रियंवदा का शब्द संसार मुख्य रूप से खड़ी बोली हिन्दी और अंग्रेजी पर आधारित है। आंचलिक और विदशी भाषाओं के मिश्रित प्रयोग से उन्होंने एक ऐसी भाषा का निर्माण किया है जो आधुनिक जीवन की विषमताओं एवं व्यक्ति तथा समाज की मनः स्थितियों की अभिव्यक्ति दे सकें।

---

1. कितना बड़ा झूठ, ऊषा प्रियंवदा, पृ0 – 10
2. तदुपरिवत् पृ0 – 10
3. तदुपरिवत् पृ0 – 10
4. तदुपरिवत् पृ0 – 18
5. तदुपरिवत् पृ0 –23
6. तदुपरिवत् पृ0 –35
7. तदुपरिवत् पृ0 – 51

शैली –

हिन्दी कथा क्षेत्र में जितनी बहुरूपता विषयों के क्षेत्र में है उससे कहीं अधिक शैलीगत विविधता दृष्टिगोचर होती है। शैली को संस्कृत के आचार्य वामन ने "रीति" की संज्ञा प्रदान की है –– विशिस्ट पद रचना रीति । कवि शैली ने शैली को अभिव्यक्ति का विशिष्ट अंग बताया है।

शैली से अभिप्राय उस विशिष्ट एवं वैचारिक अभिव्यक्ति से है जिसके द्वारा हम किसी लेखक को पहचानते हैं। शैली शिल्प का बाह्य परिधान ही नहीं, अपितु शब्द की वह शक्ति है जो परिधान को रंगकर प्रस्तुत करती है।

प्रत्येक रचनाकार की, एक स्वतंत्र शैली होती है। यह शैली लेखक के विचार, भाव, कल्पना, संस्कार, स्वभाव, प्रतिभा, और जीवन दृष्टि के अनुरूप अभिव्यक्ति पाती है। शैली अभिव्यक्ति की रीति है। शैली कथाकार के समुचित रुचि के अनुरूप वियोजित होती है।

---

1. फणीश्वरनाथ रेणुका कथा शिल्प, डॉ0 रेणुशाह, पृ0 – 14

शिवानी के कथा साहित्य में शैली सौन्दर्य –

शिवानी में भारतीय मूल्यों के प्रति एक विरोध आस्था दिखाई पड़ती है। लेखिका के शब्दों में –– "मनुष्य स्वभावतः मूल्थानुपेशी प्राणी है, जिस व्यक्ति में मौलिक मूल्यानुचिंतन के प्रति ईमानदार निष्ठा होती है, उसी में ऐसी जिज्ञासा हो सकती है। आकांडी की जिज्ञासा प्रवृत्ति एवं मिथ्याडम्बर नहीं थी, जितने बुद्धजीवियों, लेखकों, चिन्तकों से मैं मिली। प्रत्येक में भारत की संस्कृति के प्रति ये सहज मैंने पाई। टैगोर का तो नाम लेते ही वे गद्‌गद् हो जाते हैं। जो स्थान रूसी हृदय में टैगोर के लिए है, वह शायद विदेश में अन्यत्र कहीं देखने को भी नहीं मिलेगा।[1] शिवानी संस्मरण शैली का उपयोग करती हैं। वे रवीन्द्र के सानिध्य में कई वर्षों तक शान्ति निकेतन में रहीं, वहीं शिक्षा प्राप्त की, अतः रवीन्द्र नाथ के लेखन संस्कार शिवानी की रचनाओं में परिलक्षित होना स्वाभाविक है। जहाँ कहीं रवीन्द्र साहित्य या संगीत की चर्चा होती है, शिवानी गहराई से उसका रेखांकन करने में नहीं चूकती। अपने संस्मरणों की चर्चा करते हुए वे चरैवेति में लिखती हैं ---- कि एक रूसी युवती ने आत्म विभोर होकर जब गाया ----

हृदय आभार नाची रे आजी के

भायतिर मत नाच रे

रात वर नेर भवच्छवारत्

काला पीर मत करछे विकास

---

1. चरैवेति, शिवानी, पृ0 – 18

आकुल परान आकाशे चाड़िया,

उल्लासे करे जाचि[1]

तो लग रहा था, वह स्वयं मयूरी बनी उस परिवेश से कहीं दूर, किसी नृत्यरत मयूरी को देखती गा रही हैं।

"मैंने कलकत्ते में कुछ वर्ष रहकर बड़ी लगन से ही रवीन्द्र संगीत सीखा है।" उसने बताया।

अपने संस्मरणों में शिवानी नगरों, संग्रहालयों, दुलर्भ पाण्डुलिपियों तथा अन्य छोटी – बड़ी चीजों का उल्लेख भी करना नहीं भूलतीं। उदाहरण के लिए --- "मास्को के भवन, वहाँ की चौड़ी सड़कें वास्तव में दर्शनीय हैं। हमने वहाँ अनेक संग्रहालय देखे, ऐतिहासिक संग्रहालय, गोर्की संग्रहालय, लेनिन, चेखव म्यूजियम, गोर्की की कलम, पाण्डुलिपियाँ, अनेक दुलर्भ आयल पेंटिग्स, वह काटेज जहाँ गोर्की ने **"मदर"** लिखी थी, **"मदर"** का अंग्रेजी से रूसी में अनूदित प्रथम संस्करण चीन से मिला, लाडदार योगी का चोगा टोपी, भारत से मिली छड़ी, उनकी अनेक कहानियों के चित्र, उस प्रिय हाथ के पंजे की अनुकृति में ढाला गया **"पेपर वेट"**।[2]

स्पष्ट है कि शिवानी की मूल दृष्टि ऐतिहासिक, साहित्यिक एवं समाजशास्त्रीय है इसीलिए उनके संस्मरण जानकारियों से भरे हुए हैं। रूस के साथ गोर्की भारत के साथ रवीन्द्र को छोड़ पाना उनके लिए संभव नहीं है। "रूस के जितने स्मृतिकक्ष मैंने देखे, उनसे सबसे सुन्दर मुझे गोर्की म्यूजियम लगा। वैसे कोई भी म्यूजियम ऐसा नहीं है जिसे पूरा

---

1. चरैवेति, शिवानी, पृ0 – 18

2. तदुपरिवत् पृ0 – 22

देखने में 2–3 घण्टे न लगे हों। रूस के संग्रहालय, लक्ष – 2 पर्यटकों को महत्वपूर्ण जानकारी दे रहे हैं और देते रहेंगे।[2]

मुझे लगा ये ऐसा देश है जो बाहर से देखने में पहाड़ी, प्राणी, अखरोट सा ही कठोर है, किन्तु गूदा है एकदम दूधिया, मीठा। इसीलिए शायद चलती बेरिया अनेक स्नेही रूसी चेहरों की स्मृति विह्वल कर रही थी।[2] शांति निकेतन का एक संस्मरण प्रभात दा एक विलक्षण गुरू थे, वे हमें इतिहास पढ़ाते थे, पठप्रायः ही इतिहास की परिधि लांध वे अपने अतीत की स्मृतियों की मंजूषा हमारे सन्मुख खोलकर रख देते थे।[3]

शिवानी स्मृति पटल पर विभिन्न कालखण्डों को रूपाइत करती हुई चलती है। जिनसे लेखिका की कलात्मक दृष्टि का भी परिचय मिलता है –– "वही हाथ में नवनीत का गोला लिए शिशु कृष्ण की सोलहवीं शताब्दी की मूर्ति कहीं सैन्ड स्टोन की बनी उमा महेश्वर के नीचे लिखी पट्टी दसवीं शताब्दी कहीं राजपूत सिरमौर, स्कूल की शिव पावर्ती की मूर्ति।[4]

संस्मरणों में अतीत के चित्र हैं। इतिहास और संस्कृत की झलकियाँ हैं। कला और संगीत के घराने हैं। विभिन्न संस्कृतियों और सभ्यताओं के द्रव्य चित्र हैं, कतिपय चित्र दृष्टव्य हैं ––

---

1. चरैवेति, शिवानी, पृ0 – 23
2. तदुपरिवत् पृ0 – 58
3. तदुपरिवत् पृ0 – 70
4. अतिथि, शिवानी, पृ0 – 206

(अ) वर्षों पूर्व रामपुर के ऐसे कितने ही खुशबू दार रेशमी बुरूकों की स्मृति मुझे विह्वल कर उठी, मुहम्मद अली पेशकार साहब की सुन्दरी बेगम के काले रेशमी बुरुके की ऐसी ही सुवास फिर नवाब साहब की राजमाता हुजूरे आलादि रेशमी बुरके की ऐसी ही परिचित सुगंध और भी न जाने कितने ही परिचित सुवासित, रेशमी बुरके एक-एक कर अदृश्य पैराशूट में बंधे: मेरी स्मृति प्रांगण में उतरने लगे।[1]

आमादेर शान्ति निकेतन नामक संकलन में शिवानी ने गुरूपल्ली, गुरूदेव की कर्म भूमि, शान्ति निकेतन की गुरू पल्ली आश्रम के पर्व गाँधी जी और गुरूदेव, अनेक विभूतियों का आगमन, श्री निकेतन दा भेला, छात्रों का अतिथि प्रेम, गुरूदेव की आत्मीयता, आश्रम पर काले बादल, आदि अनेक विषयों पर संस्मरण लिखे हैं। जो शिवानी की असाधारण सफलताओं को व्यक्त करते ही शिवानी की तूलिका ने शान्ति निकेतन और रवीन्द्र संस्कृति का बड़ा ही मार्मिक निरूपण किया है। गुरूदेव चलेगी शीर्षक वृतान्त तो अत्यन्त हृदय बेधक है।

साहित्यिक संस्मरणों की छटा भी निराली है। महादेवी वर्मा के शांति निकेतन पहुँचने पर कि –केशव कहि न जाय, नामक संस्मरण के शिवानी ने महादेवी वर्मा का संवेदनशील रेखाचित्र उपस्थिति किया है --

"उनके संवेदनशील हृदय का परिचय मुझे अनेक बार मिला और और जितनी ही बार मैंने उनका यह वात्सल्यमय रूप देखा, उतनी ही

---

1. चिरस्वयंवरा, शिवानी, पृ0 – 100

बार एक नवीन चेहरे से नई युक्ति पाई है। संघर्ष से जूझने के उनके कहानियों, आदि कहने ----- महादेवी जी का प्रथम ----- स्मृति अपने हृदय में है। महादेवी जी जब शांति निकेतन पधारी, में स्कूल की छात्रा थी। उन्हें जब पहली बार देखा तो मंत्र-मुग्ध होकर देखती ही रही थी, खादी की श्वेत साड़ी सर पर आञ्चल सीधा पल्ला, एक तेजस्वी भव्य मूर्ति।[1]

भाषा अभिव्यक्ति का सक्षम साधन तो है ही, वह अवर्णनीय सत्वों को भी भाव के माध्यम से व्यक्त करता है। शिवानी भाषा की उसी अपरिमित शक्ति को पहचानती हैं। "भाषा यहीं पर व्यर्थ प्रतीत होने लगती है। लग रहा था हम एक ऐसे विराट गम्भीर लोक में पहुँच गये हैं, जिसका सोन्दर्य वर्णन अतीत है।[2]

आञ्चलिकता -

आञ्चलिकता अभिव्यक्तियों में कहीं नवजात शिशु को छाती से लगा दुलराती लोरियाँ गाती हुई नारियों के मधुर कण्ठ से स्वर लहरियाँ सुनाई पड़ती हैं। और कहीं पैरों में घुंघरू बाँध शृंगार की और प्रणय की मनोहर मुद्राएँ अंकित हुई है।

(अ) जच्चा किसरी हो तुम पुत्रवधू
जच्चा कौन सजन की घी।

---

1. मेरा भाई, शिवानी, पृ0 - 84
2. चरैवेति, शिवानी, पृ0 - 40

महर – 2 हरे वाकरे?[1]

(ब) सास मोरी ढूढ़े

ननद मोरी ढूढ़े

सइयां ढूढ़ै री गले में बहयाँ डाल – डाल।[2]

संथाल युवतियाँ आकर्षक पद्चापों का मृदु संगीत भी शिवानी के कथा साहित्य के मध्य झाँक – झाँक जाता है ---

(अ) राजा गैलो सरके – सरकी

रानी गैलो कांची सरकी,

ओ राजार छाता पड़े गैलो जाले,

रानी हाँ सिलो मने – मने।

(ब) का दावत देइ बहुजि, गरीब मनई हैं। आज फलानी निदया गई की भांत तरकारी खाब।[3]

(स) का कहत हो दीदी -- आश्चर्य से मुझे देख कर वो बोली "हमार बिटिया, बिटिया का कुत्ता का पिल्ला है जो बाँट देई।"[4]

---

1. गैंडा, शिवानी, पृ0 – 12
2. तदुपरिवत्, पृ0 – 12
3. कस्तूरी मृग, शिवानी, पृ0 – 80
4. कस्तूरी मृग, शिवानी, पृ0 – 126

मुँह में धूल, नाक में धूल, कहीं बच्चों का कल.. कहीं वंश पिपरी की पें पें ओर कहीं नागर दोले की चर्रक चूँ। मेले में उल्लास सर्वत्र एक सा ही रहता चाहे वो उत्तराखंड की नंदा देवी का मेला हो, लखनऊ की गुड़ियों का या रामपुर की ईद का मेंने मेलों के बहुचर्चित रूपी हृदयग्राही दृश्य देखे हैं।

बुंदेलखण्डी कूड़ादेव के मेले का आयोजन, बृहत रहता, बित्ते-बित्ते भर की दूरी पर फैली अंकना - कंकना, हुमेल, चंद्रहार की दुकानों ने मेरे कैशोर्य की आँखों को चोंध आया है। बुन्देलखण्डी ललनाओं का दल आनी तीखी आवाज से दिशाएँ गुंजाता मेले से गुजर जाता था -- आज आऊँगी बड़ी भोर दहिया ले के, न मानौ चुनरी धरि राखौ, मोतियन लागी छोर आ जाऊँगी बड़ी भोर।[1]

शिवानी के भाषा - शैली आञ्चलिक जीवन को चित्रित करने में सर्वथा समर्थ है। नंदा देवी के मेले का एक चित्र देखिये -----

"नंदा देवी के मेले का भला क्या कहना? बलि के लिए महिष जाता भी तो ऐसे झूमकर, जैसे सेहरा बाँधे दूल्हा हो। पीछे - पीछे गाती बजाती भीड़, काले लंहगे, कमर पर कसा धोती का आंचल, कंठ में हुलसती मूँगे-चाँदी की मालाओं का वैभव और स्वर-लहरी की मौलिक

---

1. वातायन, शिवानी, पृ0 - 26

मिठास ---- 'मार झपेका नंदा देवी कौतिका लागो मार झपेका, मार झपेका, मैं कै लें जांण दीयो ज्यू ही मार झपैका'।[1]

शिवानी ने कथा साहित्य में पत्र शैली का भी उपयोग किया है। पत्र शैली के कतिपय उदाहरण इस प्रकार हैं ---

(अ) "माधवी, -

तुमसे कुछ कहने का अब अधिकार नहीं रहा। फिर भी, कर्तव्य वश, आज तुम्हें लिखना जरूरी हो गया। मैंने तुम्हारा कन्यादान किया था। तुम्हारे उस श्लोक की आकृति का मैं भी साक्षी हूँ। आर्ते आती भविष्यामि सुखदुः खानुगामिनी।" आज कौस्तुभ मृत्युशय्या पर है। इसी से तुम्हारे कर्तव्य से तुम्हें अवगत कराना अपना भी कर्तव्य समझता हूँ।[2]

— शिवदत्त

पिता जी,

आपके आदेश का पालन कर सप्तपदी के उस पावन श्लोक की महिमा रखने जा रही हूँ। जानती हूँ, मेरा अपराध आपकी दृष्टि में ही नहीं, स्वयं, मेरी अपनी दृष्टि में भी अक्षम्य था किन्तु क्या मेरा यह पश्चाताप उस कलुष को स्वयं प्रक्षालित नहीं कर देगा? वहाँ जाकर कम से कम उस अदालत में तो सिर उठाकर कह ही सकूँगी ---

अति आर्ता भविष्यामि

सुखदुः खानुगामिनी।

आपकी --

माधवी

---

1. वातायन, शिवानी, पृ0 – 26
2. स्वयंसिद्धा, शिवानी, पृ0 – 10

शिवानी ने आत्म–चरितात्मक शैली में लेखन कार्य किया है। ऐसी रचनाओं में लेखिका ने अपने विषय में या अपनी कृति के विषय में या अपने दृष्टिकोण के विषय में अपना मन्तव्य प्रकट किया है। आत्म चरित्रात्मक शैली के माध्यम से लेखिका अपने अनुभवों का लाभ अन्य लोगों को प्रदान करना चाहती है। ऐसे प्रयोगों द्वारा लेखिका का आत्मदर्शन, आत्म निरीक्षण और अन्तः विश्लेषण देखने को मिलता है। उषा प्रियंवदा ने मनोविश्लेषण, स्वप्न, आदि शैलियों का प्रयोग किया है।

शिवानी ने अपने कथा साहित्य में संस्मरणात्मक शैली का प्रयोग किया है। इस शैली के द्वारा लेखिका ने अपनी अनुभूतियों और संवेदनाओं को व्यक्त किया है। संस्मरण अत्यन्त रोचक हैं। जीवन की घटनाओं, महापुरुषों के संस्मरण, गुरूदेव रवीन्द्र नाथ टैगोर तथा शान्ति निकेतन और विदेश यात्रा के न जाने कितने संस्मरण शिवानी के कथा साहित्य के उज्जवल प्रसंग हैं ----- उषा प्रियंवदा ने संस्मरणात्मक शैली को प्रमुख स्थान नहीं प्रदान किया।

शिवानी ने अपने पर्यटन–काल के अनुभवों का उल्लेख स्थान – स्थान पर किया है। शिवानी का यात्रा क्षेत्र व्यापक है। यात्राओं में जैसी संवेदना, दृश्य विधान एवं भावरंग तथा जीवन राग का समावेश किया गया है, वह अत्यन्त प्रभावी है। यात्रा में मिलने वाले लोगों, उनके व्यवहार, चरित्र, खान–पान, वेश–भूषा आदि का विवरण भी शिवानी के साहित्य में मिलता है।

यात्रा शैली के द्वारा लेखिका का उद्देश्य केवल यात्रा का भौगोलिक परिचय भर देना नहीं रहा, बल्कि यात्रा में आने वाले प्रदेशों, देशों, स्थानों का सांस्कृतिक, सामाजिक जीवन में रेखांकित हो गया है। देश–देश में बिखरे हुए इतिहास, संस्कृति, लोक जीवन को अपनी अनुभूति का अंग बनाकर शिवानी ने जितना विस्तार किया है, उषा प्रियंवदान ने उतना नहीं।

शिवानी और ऊषा प्रियंवदा ने मनोविश्लेषणात्मक शैली का प्रयोग किया है। इस शैली के अंतगर्त कहानीकार पात्रों के अंतर्द्वन्द्व का चित्रण करता है। उषा प्रियंवदा ने पात्रों का मनोभावों--- घुटन, वेदना, विषाद, कुण्ठा, छटपटाहट, शून्यता, एकाकीपन, आदि का चित्रण इसी शैली में किया है।

शिवानी और उषा प्रियंवदा दोनों ने संवाद शैली का प्रयोग किया है। पात्र संवाद के माध्यम से ही वैचारिक मतभेदों को व्यक्त करते हैं। संवाद शैली के द्वारा प्रसंग को चमत्कृति और औसुक्य प्रदान किया जाता है।

कथा साहित्य में पत्र शैली का प्रयोग शिवानी और उषा प्रियंवदा दोनों ने किया है। शिवानी ने निजी पत्रों तथा साहित्यिक पत्रों का प्रयोग किया है। पत्र शैली के माध्यम से लेखिकाओं ने देश काल की दूरियों को सामिप्य प्रदान किया है। इस शैली के अन्तर्गत कहानी लेखिकाओं ने नायक–नायिका से परस्पर पत्र – व्यवहार कराया है।

"प्रतिध्वनियाँ" कहानी में ऊषा प्रियंवदा ने पत्र शैली का प्रयोग किया है ----

डाक्टर जूलियन,

मैंने आपसे ठीक ही कहा था। मेरे चारों ओर एक जीवित, स्पंदित, संसार है, जो मेरे लिए मर चुका है। इन सबके बीच में हूँ।"[1]

प्रिय डाक्टर जूलियन,

मैं कुछ दिन हुए, यहाँ सकुशल आ गयी। मैं जानती हूँ कि मेरे चारों ओर जो संसार, जो सम्बन्धी हैं, सब मृत हैं। केवल मैं जीवित हूँ। कैसी विडम्बना है।"[2]

तुलनात्मक विश्लेषण -

शिवानी और ऊषा प्रियंवदा ने आधुनिक युग के अनुकूल युगीन वैचारिकता से सम्वृत्त होकर जिन नये भाव बोध एवं वैचारिक वातावरण के निर्माण में नवीन भाषा को चुना है तथा उसके माध्यम से सशक्त अभिव्यक्ति दी है, उसे साहित्य जगत में सदैव स्मरण किया जायेगा।

---

1. कितना बड़ा झूठ, ऊषा प्रियंवदा, पृ0 - 24
2. तदुपरिवत् पृ0 - 25

शिवानी ने एक ऐसी भाषा का निर्माण किया है जो उनके मनोविज्ञान को एक समर्थ अभिव्यक्ति दे सके। उन्होंने भाषा को स्वाभाविकता प्रदान की। इनके लिए उन्होंने हिन्दी के साथ पंजाबी, बंगला, अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग किया है। प्रयोग भी ऐसा जिससे ज्ञात होता है कि भाषा अपने सहज रूप में प्रभावपूर्ण हो उठती है। लेखिका को अनुभूतियों को व्यक्त करने में, जिस शब्द की आवश्यकता पड़ी है, उसका सटीक प्रयोग किया गया है।

शिवानी ने हिन्दी भाषा का एक ऐसा स्वरूप विकसित किया है, जिसमें हमारे देश की सभी भाषाएँ अपना प्रतिबिम्ब देख सकती हैं। शिवानी ने जहाँ तक शब्द-ग्रहण का प्रश्न है, वहाँ वे अधिक-से-अधिक उदार है। दूसरी भाषाओं के शब्द, ग्रहण करके भाषा को मजबूत बनाया है। उसका विस्तार किया है तथा युगानुकूलता प्रदान की है।

हिन्दी कहानियों के द्वारा शिवानी ने अन्य भाषाभाषियों के मन में बैठे हुए भ्रम को दूर करने का वातावरण प्रदान किया। राष्ट्रभाषा हिन्दी के रूप में एक ऐसी भाषा का विस्तार करना लेखिका का भाषागत उद्देश्य प्रतीत होता है, इस दृष्टि से शिवानी तथा उ.षा प्रियंवदा ने भाषाई क्षेत्रों के बीच परस्पर आत्मीयता बढ़ाने का प्रशंसनीय कार्य किया है।

भाषा एवं शैली की दृष्टि से शिवानी और उषा प्रियंवदा को विशेष सफलता मिली है। दोनों ने विषयवस्तु एवम् कथ्य के अनुरूप व्यंजनात्मक भाषा का प्रयोग अपने कथा साहित्य में किया है। इन कहानीकारों ने आत्मानुकूल, पात्रानुकूल एवं भावानुकूल भाषा का प्रयोग किया है। भाषा के माध्यम से जीवन मूल्यों का भी स्पष्टीकरण किया है। भाषा के माध्यम से ही इन दोनों लेखिकाओं ने आधुनिक जीवन के विघटन, घुटन, ऊब, बदहवासी, टूटन, जीवन आस्था आदि के जीवंत वर्णन किये हैं।

शिवानी ने भाषा एवं शैली को एक नया उन्मेष प्रदान किया है। शिवानी ने भाषा में पर्वतीय आंचली के शब्द, बंगला, पंजाबी, अंग्रेजी आदि के शब्दों का प्रयोग इस प्रकार किया है कि वे उनकी शैली के अंग बन गये हैं। भाषा को जीवन प्रवाह के साथ प्रस्तुत करने में शिवानी को अद्‌भुत सफलता मिली है। ऊषा प्रियंवदा की भाषा में भी गतिशीलता, प्रवाह एवं जनस्वशितका का गुण पाया जाता है। उषा प्रियंवदा की भाषा में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग अधिकांश रूप में पाया जाता है। दक्षिण एशिया की भाषाओं के शब्द भी उनकी कहानियों में प्रयुक्त हुए हैं।

शिवानी और उषा प्रियंवदा की कहानियों में प्रयुक्त भाषाओं के तुलनात्मक अध्ययन से जहाँ हम एक ओर दोनों रचनाकारों की आंतरिक संरचना का ज्ञान प्राप्त करते हैं, वहीं दोनों के समाजगत रूपों को भी भाषा व्यक्त करती हैं। दोनों लेखिकाओं ने भाषा को किस स्तर तक

जीवंत बनाया है, जीवित भाषा को हिन्दी कहानियों में प्रतिष्ठित करने का कार्य शिवानी ने विशेष रूप से किया है। शिवानी की भाषा, भाषा विज्ञान के शोधार्थियों के लिए स्वतंत्र विषय की अपेक्षा रखती है।

शिवानी ने भाषा को जितनी गतिशीलता तथा व्यापकता प्रदान की है, उससे वह जीवन के विविध क्षेत्रों को व्यक्त करने में सफल सिद्ध हुयी हैं। शिवानी ने भाषा को मनोविज्ञान से जोड़ने का स्तुत्य प्रयत्न किया है। साथ ही वह भाषा साहित्य, दर्शन एवं समाजविज्ञान की व्यापक भूमि पर चित्रित हुयी है। शिवानी की भाषा ने समग्र राष्ट्रीय जीवन को अभिव्यक्ति देने में सफलता प्राप्त की है, वह किसी एक क्षेत्र की भाषा में बँधकर नहीं रह जाती। विस्तृत भू-भाग की जनता का प्रतिनिधित्व शिवानी ने भाषा के माध्यम से किया है, उ.षा प्रियंवदा को इस क्षेत्र में वैसी सफलता नहीं मिली।

भाषा सोन्दर्य की एक दूसरी विशेषता यह है कि वह समकालिक होकर सार्वदेशिक महत्व की है। शिवानी की भाषा पर रवीन्द्र एवं बंगीय संस्कृति का प्रभाव व्यापक रूप से परिलक्षित होता है, जबकि उषा प्रियंवदा में आंग्ल साहित्य का प्रभाव ही मुख्य रूप से दिखाई पड़ता है।

विदेशी भाषा के प्रयोग में शिवानी और उषा प्रियंवदा दोनों समान रूप से सर्तक हैं। दिभाषाओं का प्रभाव भी दोनों में दिखाई पड़ता है।

भाषा को अर्थसम्पन्न बनाने में शिवानी को उषा प्रियंवदा की अपेक्षा अधिक सफलता मिली है। शब्द को अर्थ सम्पन्न बनाने की दिशा में शिवानी ने अथक प्रयत्न किया है। भाषा को लोक व्यवहार के अनुकूल बनाने के लिए शिवानी का योगदान विशेष रूप से कथा साहित्य में अविस्मरणीय रहेगा।

शिवानी की भाषा ने विविध भारतीय भाषाओं की शब्दावली को कलात्मक स्तर पर संयोजित किया हैं। भाषा जीवंत है।

उषा प्रियवंदा के कथा साहित्य में भाषा का वैविध्य शिवानी जैसा नहीं है। उसमें हिन्दी के साथ अंग्रेजी के शब्दों का बाहुल्य है।

शिवानी की भाषा में गतिशीलता, संप्रेषणीयता, प्रवाहमयता पायी जाती है। उषा प्रियंवदा की भाषा में वैसा लालित्य नहीं है।

शिवानी की भाषा पात्रानुकूल है। ग्रामीण पात्रों, नागरिक पात्रों, वंगभाषी पात्रों, पर्वतीय पात्रों एवं पाश्चात्य सभ्यता में रंगे पात्रों की भाषा पृथक – पृथक हैं।

उषा प्रियंवदा के पात्र भी पृथक–पृथक भाषा का प्रयोग करते हैं, किन्तु उनमें भाषा का वैविध्य शिवानी जैसा नहीं है।

शिवानी पर्वतीय भाषाएँ, बंगला, पंजाबी, हिन्दी, भोजपुरी, अंग्रेजी, संस्कृत आदि भाषाओं के समकेत प्रयोग से सप्तरंगी छवि-छटा प्रस्तुत करने में बेजोड़ हैं, उषा प्रियंवदा की भाषा में संस्कृत तत्सम् शब्दों का बाहुल्य नहीं है, उसमें अंग्रेजी का बाहुल्य है।

शिवानी की भाषा में चित्रमयता, संगीतात्मकता एवं लयात्मकता का वर्चस्व है। उषा प्रियंवदा की भाषा आधुनिकता, मनोविज्ञान एवं समाजशास्त्रीय शब्दावली को लेकर चलती है।

चित्र विधायिनी भाषा-शैली ने शिवानी को अद्‌भुत सफलता प्रदान की है, उषा प्रियंवदा ने चित्र, विधान किए हैं, किन्तु वैसी अपूर्व सफलता उन्हें नहीं मिली।

शिवानी की भाषा-शैली की एक प्रमुख विशेषता भावात्मकता एवं संस्मरणात्मक शैली का होना है। उषा प्रियंवदा भावात्मकता के स्थान पर वैचारिकता को महत्व देती हैं।

शिवानी ने जितनी भाषाओं के शब्दों का प्रयोग किया हैं, उससे भारतीय भाषाओं के बीच एक समन्वय भी उत्पन्न हुआ है। उषा प्रियंवदा की भाषा समन्वय की दृष्टि से उतनी सफल नहीं है।

शिवानी बंगला और पहाड़ी शब्दों के प्रयोग में अधिक सफल सिद्ध हुई हैं, वैसी सफलता उषा प्रियंवदा में नहीं दिखती।

शिवानी ने मुहावरों और लोकोक्तियों को चुनने में पर्याप्त रुचि दिखाई है, इससे उनकी भाषा की व्यंजना शक्ति उत्कर्षपूर्ण हो उठी है। उषा प्रियंवदा ने मुहावरों और लोकोक्तियों के प्रयोग में कम रुचि दिखाई है।

शिवानी की भाषा का स्वर साहित्यिक, दार्शनिक एवं उच्च स्तरीय कलात्मकता से युक्त है। उषा प्रियंवदा की भाषा मनोविज्ञान, समाजशास्त्र एवं आधुनिक जीवन के अधिक निकट है।

शिवानी ने लोकभाषाओं, लोकगीतों, आंचलिक गीतों के उपयोग से भाषा–शैली को उदात्त बनाया है, तथा उच्च कोटि की रसात्मकता प्रदान की है। उषा प्रियंवदा ने खीझ, उदासीनता, संत्रास, एकाकीपन, टूटन, हताशा आदि की व्यंजनाओं के लिए वैचारिक स्वप्नशैली आदि का प्रयोग किया है, जो कि विश्लेषणवादी है तथा समाज के अन्तर्गत सम्बन्धों को विश्लेषित करने में सहायक सिद्ध होती है।

परिशिष्ट

उपसंहार

परिशोध/परिशिष्ट

पार्थिव - अपार्थिव सौन्दर्य

मानवीय सोन्दर्य के पार्थिव ओर अपार्थिव दोनों रूपों का वर्णन शिवानी ओर उषा पियंवदा के कथा साहित्य मे व्यक्त हुआ है।

शिवानी ओर उषा प्रियवदा ने जिन पात्रों के रूप योवन का वर्णन किया है, उनमें पार्थिव सोन्दर्य का समुद्र लहराया है। उनका मासल अस्तित्व है। वे शरीरी पात्र है, केवल लेखको की कल्पना से गढ़े हुए लोक और धरती से दूर के पात्र नही हैं।

शिवानी ओर उषा प्रियंवदा ने रोमेटिक प्रेम-सम्बन्धों को लेकर पार्थिव सोन्दर्य की अनूठी कहानियाँ लिखी हैं।

शीलगत सौंदर्य

सौन्दर्य का शील अथवा आचरण से घनिष्ठ सम्बन्ध है। शिवानी और उषा प्रियंवदा ने जिस सौन्दर्य का वर्णन किया है, वह रूप और रंग में नहीं खोजाता बल्कि उस सौन्दर्य से भारतीय जीवन आस्थाएँ, शील एवं आचरण भी ध्वनित होता है। सांस्कृतिक एवं नैतिक मूल्यों से युक्त होने के कारण सौन्दर्य बाजारू नहीं होने पाता। सौन्दर्य विलास की वस्तु न होकर जीवन और प्रेम की वस्तु बन जाता है। सौन्दर्य प्रेरक होता है, नए सृजन के लिए वह नयी मखभूमि तैयार करता है।

जिस सौन्दर्य का वर्णन शिवानी और उषा प्रियंवदा ने किया है, उसमें परिवार, समाज, कुल कुटुम्ब और राष्ट्र सभी सीमाएँ समायी हुई है। कुलवधू का शील है, परिवार की प्रतिष्ठा का प्रश्न है। आलिंगन, परिरम्भण के चित्रों में नग्नता, फूहडपन न होकर सर्वत्र शालीनता दिखाई देती है। पात्र–प्रेम की वेदना को सहन करते हैं, कठिनाइयों से जूझते हें और पवित्र प्रेम के लिए उत्सर्ग करते हैं। शिवानी ने नारी के निर्मल और उज्ज्वल चरित्र को व्यक्त किया है और लज्जा ही नारी का आभूषण है, जहाँ पतिव्रत धर्म ही सर्वत्र है। सम्पूर्ण भारतीय संस्कृति इस आदर्श से अनुप्राणित है, उषा प्रियंवदा ने भी भारतीय संस्कृति के टूटते हुए मूल्यों पर चिंता व्यक्त की है अतः दोनों रचनाकारों ने सौन्दर्य के शील पक्ष को वांछनीय माना है।

सौन्दर्य और प्रेम की अन्योन्याश्रितता

सौन्दर्य ही जीवन है।[1] और जीवन प्रेम का ही पर्याय है। प्रेम प्रिय शब्द का भावात्मक रूप है। प्रिय शब्द का अर्थ है तृप्तिकारक (प्रीणातीति प्रियः) उसके भाववाचक रूप का अर्थ हुआ 'तृप्ति'। प्रेम शब्द से हृदय के उस तृप्ति रूप आनन्द का संकेत होता है जो हमें किसी विषय के दर्शनादि से मिलता है।[2] किसी विषय के दर्शनादि से तृप्ति इसलिए प्राप्त होती है क्योंकि उसमें सौन्दर्य का गुण सन्निहत होता हे। अतः सौन्दर्य और प्रेम की अन्योन्याश्रिता है। जो वस्तु प्रिय है, वह सौन्दर्य युक्त है, और जिसमें सौन्दर्य है वही प्रिय होती है।

प्रेम दोनों की वृत्ति अन्तकरण से सम्बन्धित है। सौन्दर्य से चित्त दूषित होता है, और प्रेम से भी चित्त द्रवित होता है, अतः सौन्दर्य और प्रेम चित्त को द्रवित करते हैं, इसलिए दोनों एक दूसरे से अन्योन्याश्रित है। प्रेम और सौन्दर्य ही जीवन के ऐसे सान्द्र भाव है, जो सर्वव्यापी है। शिवानी और उषा प्रियंवदा दोनों के कथा साहित्य में प्रेम और सौन्दर्य का एकाकार हुआ है। प्रेम में सौन्दर्य के रहस्यमय संकेत विद्यमान रहते हैं। प्रेम का प्रारम्भिक रूप शारीरिक है। रूप सौन्दर्य में इन्द्रियों का रीझना स्वाभाविक है। प्रेमी की मनःस्थिति सौन्दर्य पर टिकी रहती है। रूप के सेनापति को देखकर धैर्य रूपी दुर्ग रक्षक दुर्ग छोड़कर भाग जाता है। प्रेम के हृदय नगर में प्रवेश करते ही नेत्र उनसे जा मिलते हैं। लज्जा लूट ली गई–

---

1. लैक्चर्स आन आर्ट, जान रस्किन, जार्जर लेन, 1984
2. घनानंद और स्वच्छन्द काव्यधारा, डॉ0 मनोहर लाल गौड़, पृ0 318

"रूप चमूष सज्यो दल देखि भज्यौ तजि देसहि धीर मवासी,

नैन मिले उर के पूर बैठत लाज लूटी न छूटी तिनका सी,.

प्रेम दुहाई फिरी घन आनंद बाँधि लिए कुछ नेम गुढ़ा सी

रीझि सुझान सची पटरानि बची बुधि वापुरी है कर दासी।।"

सौन्दर्य के कारण ही प्रेम का होना भली-भाँति सिद्ध है। शिवानी उषा प्रियंवदा ने अपने कथा साहित्य में सौन्दर्य और प्रेम की अन्योन्याश्रितता की भरपूर व्यंजनाएँ की हैं। सौन्दर्य प्रिय अभिरुचि के कारण पात्रों में प्रेम का उदय होता है और प्रेमी अपने प्रेम पात्रों के सौन्दर्य से सरावोर होते हैं।

शिवानी ओर उषा प्रियंवदा दोनों सौन्दर्य दृष्टि वाली कथाकार हैं। सोन्दर्य ही उनका दर्शन है। सौन्दर्य ही उनकी जीवन दृष्टि है। सौन्दर्य को नसा रूपों ने देखा है। यही सौदंर्य भुवन भर में व्याप्त है उसी का उल्लास जीवन का धर्म बन गया है।

शिवानी के कथा साहित्य में सौन्दर्य सम्बन्धी विशिष्ट शब्दावली तथा वाक्यांशी

शिवानी के रचना संसार के महत्वपूर्ण वाक्यांश इस प्रकार हैं:-

1. कुछ ही अमूल्य क्षणों ने के का अस्तित्व सदा के लिए मिटा दिया था। उसके दाएं-बाएं दामिनी सी दमकती बित्ते भर की छोकरी उसे उँगलियों पर नचा रही थी। शिवानी के/करिये छिमा पृ0 52

2. छब्बीस वर्ष तक एक–दूसरे से रक्त, मज्जा, माँस की डोर से बँधी स्यामी जुड़वां सी बहनों को पल भर में केशव ने किसी कुशल सर्जन की शल्य क्रिया से सदा के लिए विलग कर दिया।

दो बहने : पृ0 86

3. हम दोनों के बीच बर्लिन की सी अभेद्य दीवार खड़ी हो गई। कितना अविश्वास....... निरर्थक संदेह के घातक कैंसर कीटाणुओं से घुलता मेरा हतभाग पति।

उपहार पृ0 156

4. आँखे बन्द किये हुए उसकी चौड़ी छाती से लगी पुष्पा पंत अपने विगत जीवन में कलुष कलंक को भूल– बिसराकर रह गई।

तर्पण : पृ0 186

5. सरकार आप तो दिन–रात पहाड़ों का दौरा करते हैं। कई झरनों का पानी पीते होगें। कभी आपको जुकाम भी हो जाता होगा। क्या आप बता सकते हैं कि किस झरने के पानी से आपको जुकाम हुआ?

करिये छिमा पृ0 221

6. सोचा था कि मैं तो बदनाम हूँ ही, तुम्हें कीचड़ में क्यों घसीटूँ? सारा गाँव तुम्हे पूजता था, बड़ा होता तो सब पहचान लेते कि किसका बेटा है।

तद्‌परिवत पृ0 223

7. पर अब वह ताहिरा नहीं थी। वह सोलह वर्ष पूर्व की चंचल बालिग नवबधू सुधा थी। जो सास की नजर बचाकर तरुणा पति के गालों पर अबीर मलने जा रही थी। मिलन के उन अमूल्य क्षणों में सैयद वंश के रहमान अली का अस्तित्व मिट गया था।

लाल हवेली पृ0 8

8. वह कुमाऊँ की मिस कीलर थी, प्राचीन युग की मेनका। किन्तु वह स्वयं एक ही प्रेमी की वास्तविक प्रेमिका थी, और वह प्रेमी था धरणीधर।

9. पर अगर हार गये तो तुम आज ही की रात से मेरी रहोगी। तुम्हारे जीवन की प्रत्येक रात्रि पर मेरा अधिकार रहेगा। मैं इसका विशेष प्रबन्ध रखूंगा कि तुम्हारे पति की हार और मेरी जीत का प्राण रहते हम तीनों को छोड़ और कोई भी नहीं जान पायेगा।

पिटी हुई गोटः पृ0 42

10. उसके माथे पर एक भारी पोटली थी। क्या पता कुछ चुरा ले जा रही हो? पर उसके गृह की वह सबसे मूल्यवान निधि चुरा चुकी थी........ अब क्या लेगी?

गहरी नींद : पृ0 77

11. कभी–कभी हनीमून के मधुर स्वप्नाकाश पर तैरती जलपरी आ जाती है तो वह व्याकुल हो उठता। लगता पानी से भीगी देह परिमल उसे उत्तराखण्ड की ओर खींच रही है।

मास्टरनी : पृ0 93

12. इस धूनी को फूँककर वह (माँ) धुँआ मिटा देगी, पर जो उस छोकरी के हृदय में निरन्तर धूनी धधक रही है उसका धुँआ भी क्या वह फूँक मार कर हटा सकेगी।

धुँआ : पृ0 112

13. जिस दुर्बल हृदय निर्वीय पुरुष ने उसे निर्ममता से फेंक दिया था, उस पर उसका विश्वास कितना अगाध था, कितना महान।

अनाथः पृ0 120

14. पर मेजर जिन्दगी में दौड़ में बहुत आगे निकल आया था, पीछे लौटकर बिछुड़े को लौटकर साथ लाना सबसे बड़ी मूर्खता होती।

लाटी : पृ0 182

15. इस बयस में मुझे इस किशोरी का पावन प्रेम मिला, यह मेरे प्रभू का श्रमदान है। यह कहती है मेरे बिना अब इसके जीवन का एक भी पल सार्थक नहीं है।

रति विलाप : पृ0 31

16. कल जब निम्मी तुम्हें कोट थमा रही थी, लज्जा, समर्पण और असहायता की त्रिवेणी का संगम न देख पाती ऐसी मूर्ख नहीं हूँ मैं। समझे

गजदत्त पृ0 41

17. छि: छि: तुम्हारे लिए मैंने क्या नहीं सुना? क्या नहीं सहा? समाज का प्रश्न व्यंग्य विद्रूप! केवल तुम्हारी इज्जत बचाने, मैने यदि स्वयं अपने हाथो अपने मातृत्व का गला न घोंटा होता, तो क्या पता आज ही के दिन मैं शायद तुम्हारी उस अजन्मा माँ की सन्तान बन जाती..........

अभिनय : पृ0 80

18. आधी–आधी रात को कुमाऊँ के बीथावान गाँव की तलहटी में दुस्साहसी मंत्री गुनगुने पानी की झील के किनारे बैठा अपनी प्रेमिका की प्रतीक्षा करता। कभी केवल दोनों प्रणय का जिरह बख्तर पहने उस अरण्य की हरीतिमा में हरे युगल सर्प से ही लिपटकर एकाकार हो जाते।

पुष्पाहार : पृ0 17

19. पर मैं अकेली कहाँ हूँ? खुदा बाप क्या मुझे अकेली रहने देता? एक गरीब मरीज उसने फिर भेज दिया है।

तोप पृ0 50

20. विदेश से आई दोनों बेटों की तस्वीर को उसने ऐसे कोनों में सजाकर रख दिया जैसे आते ही लीला को डस ले।

शर्त : पृ0 77

21. केवल तिप्पी ही प्रस्तर मूर्ति सी खड़ी थी। उसके भव्य ललाट की निर्दोष गठन में, एक तिरछे घाव का निशान था।

भूल पृ0 89–90

22. वह तो अपने कल्पना लोक के वर्षों में मरघट में पहुँच गया था, जहाँ उसके 18 वर्ष की प्रेमिका अपना सर्वस्व उसे समर्पण कर उस मरघट से भी उसे अमृत की एक ही घूँट पिलाकर इतनी दूर लौटा लाई थी।

शायद : पृ0 170

23. आज कपूर की लौ की ही भाँति उनके प्रेम की लपट उड़ गई थी। वेदी सात दिन घर रहा था पर उसके कमरे में सोया केवल एक दिन, बाँकी छः दिन उसने छः विभिन्न नारियों के संसर्ग में हँस खेलकर गुजार दिये थे।

मौसी : पृ0 35

24. पर वह क्या जानती थी कि उसे बनाने में स्वयं उसका पति ही एक दिन पंगु बनकर रह जायेगा?

गैड़ा : पृ0 20

25. बेचारी तब क्या जानती थी कि जिसे इतने विश्वास से अपनी बहुमूल्य सौभाग्य कोश की चाबी सौंप रही है, वही प्रवंचिका एक दिन उनका ताला तोड़कर सर्वस्व हरण कर लेगी।

भीलनी : पृ0 62

26. वैश्या के गले का एक अप्राप्य मूँगा यदि सुहागिन बहन ले ले तो वह वैश्या का अटल अहिवात पाती है। अर्थात् अखण्ड सौभाग्य।

शपथ : पृ0 111

27. किन्तु अनु बदल गई थी। मैं उसके कन्धे पर हाथ भी धरता तो वह ऐसे सिमट जाती जैसे कन्धे पर प्रियतम महत्ता का हाथ नहीं, कोई लिजलिजी छिपकली गिर पड़ी हो।

मन का प्रहरी पृ0 71

28. बेबी मेरी वागदत्ता पत्नी है। मैं इसे जब चाहूँ घुमाने ले जा सकता हूँ। सच पूछिये तो मैं इस लम्बी सगाई से ऊब चुका हूँ। जितनी बार भी आया हूँ: आपने यही असहयोग आन्दोलन किया है।

तीन कन्या : पृ0 84

29. सरला तो कहती थी कि उसके प्रेम पत्रों के पुलिन्दे के बारे में किसी ने योगेश जीजा को बतला दिया है।

चन्नी पृ0 93

उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य में सौन्दर्य सम्बन्धी विशिष्ट शब्दावली तथा वाक्यावली

विशिष्ट शब्दावली तथा वाक्यावली जो उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य में सौन्दर्य को व्यंजित करती है इस प्रकार है–

श्यामला अभी–अभी नहाकर आई थी। सामनें के बाल भीगकर अपने आप दो तीन सेटों घुँघरा गये थे।

सम्बन्ध पृ0 7

शुरु–शुरु में तमाम चिड़ियाँ आती थी, शोर मचाती हुई गौरैया, मैना, कबूतर;।

सम्बन्ध पृ0 8

दुबली-पतली साँवली श्यामला, अविवाहित शरीर अभी गठा हुआ है, उसमें युवावस्था की लचक है, चेहरे पर लावण्य आकर थम गया है।

– सम्बन्ध, पृ0 – 9

खिड़की के बाहर हवा से पत्तियों की सरसराहट साफ सुनाई पड़ती है और इक्के-दुक्के पक्षी का स्वर।

– प्रतिध्वनियाँ, पृ0 – 23

कैसे कहें कि मुक्त होकर उसे पहली बार लगा था कि वह एक आकर्षक युवती है, उमंगे और कामनाएँ मरी नहीं हैं।

– प्रतिध्वनियाँ, पृ0 – 34

अ ब्यूटीफुल माइंड ऐंड अ ब्यूटीफुल बाडी।

– प्रतिध्वनियाँ, पृ0 – 36

सम्भावनाएँ, जो कि उसके असंभव दिवास्वप्नों में घटी थीं, अब रंगीन तितलियों की तरह उसके सामने फड़फड़ा रही थीं।

– प्रतिध्वनियाँ, पृ0 – 43

जिन्दगी उन रोमैंटिक कहानियों की तरह नहीं हो सकती। हर शुरुआत कहानी की तरह होती थी, एक उच्छवसित वेग से और अन्त प्रायः एक बड़े ही अनरोमैंटिक ढंग से।

– ट्रिप, पृ0 – 58

मैंने एक कंकड़ी पानी में और फेंकी और नन्हे से वृत्त को लहरों में मिल जाते देखा।

– एक कोई दूसरा, पृ0 – 3

मेरी शब्दावली में कुछ शब्द नये लेकर आये थे। प्लेजर और पेन, यह सुख और यह पीड़ा, मैंने पहले कहाँ जानी थी।

– एक कोई दूसरा, पृ0 – 31

वर्षान्त। आकाश में सफेद बादलों की चहल – पहल हवा में शरद के आगमन का प्रथम सन्देश।

– एक कोई दूसरा, पृ0 – 33

शब्द वह सेतु हैं जिन्हें हम मौन के सागर पर बाँधते हैं।

– कोई नहीं, पृ0 – 56.

गठा, गेहुँआ शरीर, झँपी–सी आँखे, ओठों के कोने थोड़े – से उठे हुए।

– चाँदनी के बर्फ पर, पृ0 – 113

विवेच्य कथाकारों के सौन्दर्यबोध का लोकरुचि और परवर्ती साहित्य पर प्रभाव

शिवानी और उषा प्रियंवदा ने कथा क्षेत्र में जो नवीनतम युगबोध, भाव बोध, आधुनिक मनोवैज्ञानिक दृष्टि प्रदान की है, उसका लोकरुचि और परवर्ती साहित्य पर गहरा प्रभाव पड़ा है।

शिवानी और उषा प्रियंवदा दोनों अतिशय लोकप्रिय कहानीकार हैं। उनके पाठकों की संख्या बहुत अधिक है। लोकमानस में वे गहरी पकड़ बनाये हुए हैं। शिवानी की पुस्तकों के कई – कई लोकप्रिय संस्करण होना इस बात के सूचक हैं, कि वे लोकमानस में अत्यधिक लोकप्रिय हैं। शिवानी और उषा प्रियंवदा का परवर्ती साहित्य में भी व्यापक प्रभाव परिलक्षित होता है। इन दोनों कहानी लेखिकाओं से प्रभावित होकर आधुनिक युग की अन्य लेखिकाओं और कथाकारों ने भी सामाजिक विषमताओं, विसंगतियों के मार्मिक एवं यर्थाथ पूर्ण चित्रण के साथ – साथ कहानी के शिल्प के क्षेत्र में अनेक सफल प्रयोग किये हैं। नए कहानीकारों ने महानगर, नगर, कस्बा गाँव एवं अंचल विशेष के जीवन का विशद चित्रण अपनी कहानियों में किया है। जीवन की घुटन, कुंठा, विषाद, वंदना, एकाकीपन, संमास का यथार्थपूर्ण चित्रण बहुत कुछ शिवानी और उषा प्रियंवदा की ही देन है।

नारी प्रचेतन – आन्दोलन ने स्वतंत्र भारत में विशेष जोर पकड़ा है। दाम्पत्य प्रेम, स्त्री – पुरुष के परस्पर सम्बन्धों एवं सह अस्तित्व को लेकर जो प्रयोग शिवानी और उषा प्रियंवदा ने किए हैं, उनके व्यापक

परिणति भी आधुनिक नए कथाकारों में परिलक्षित होती है। शिवानी और ऊषा प्रियंवदा नए कहानीकारों के आधार स्तंभ हैं। भाव, भाषा एवं शिल्प सभी दृष्टियों से परवर्ती साहित्य पर शिवानी और ऊषा प्रियंवदा का प्रभाव परिलक्षित होता है, जो स्वयं में स्वतंत्र शोध विषय भी बन सकता है।

ग्रन्थ सूची

ग्रन्थ - सूची

ग्रंथ-सूची

आलोच्य साहित्य

शिवानी कृत रचनाएँ

कालिंदी

अपराधिनी

मायापुरी

चौदह फेरे

रति विलाप

विषकन्या

कैंजा

हे दत्तात्रेयं

सुरंगमा

जातक

भैरवी

कृष्णवेणी

यांत्रिक

चल खुसरो घर अपने

आमादेर शान्ति निकेतन

विवर्त्त

स्वयंसिद्धा

गैंडा

माणिक

पूतोंवाली

अतिथि

चरैवेति

कस्तूरी मृग

रथ्या

वातायनं

उपप्रेती

श्मशान चम्पा

मेरा भाई

चिर स्वयंवरा

करिए छिमा

शिवानी के उपन्यास –

मायापुरी

चौदह फेरे

कृष्णकली

भैरवी

श्मशान चम्पा

सुरंगमा

कैंजा

विषकन्या

रतिविलाप

माणिक

रथ्या

गैंडा

किशनली का ठाँट

ऊषा प्रियंवदा का कथा साहित्य –

जिंदगी और गुलाब के फूल

एक कोई दूसरा

मेरी प्रिय कहानियाँ

हिन्दी कहानियाँ

कितना बड़ा झूठ

ऊषा प्रियंवदा के उपन्यास –

पचपन खंभे लाल दीवारें

रुकोगी नहीं राधिका

2. सहायक ग्रंथ –

हिन्दी –

सौन्दर्य शास्त्र के तत्व	डॉ0 कुमार विमल
सत्यं शिवम् सुन्दरम	डॉ0 रामानुज तिवारी

साहित्य और सौन्दर्य	डॉ0 फतह सिंह
सौन्दर्य तत्व और काव्य सिद्धांत	डॉ0 सुरेन्द्र वारलिंगे
सौन्दर्य विज्ञान	डॉ0 हरिवंश सिंह
सौन्दर्य शास्त्र	डॉ0 हरद्वारी लाल शर्मा
हिन्दी साहित्य का इतिहास	सं0 डॉ0 नगेन्द्र
हिन्दी सहित्य का इतिहास	आचार्य पं0 रामचन्द्र शुक्ल
हिन्दी उपन्यासों में नारी चित्रण	डॉ0 विन्दु अग्रवाल
हिन्दी कथा साहित्य में नायिका की परिकल्पना	डॉ सुरेश सिन्हा
हिन्दी कथा साहित्य के विकास में महिलाओं का योगदान	डॉ0 उर्मिला
काम सम्बन्धों का यर्थाथ और समकालीन कहानी	डॉ0 वीरेन्द्र सक्सेना
नई कहानी में आधुनिकता बोध	डॉ0 साधना साह
हिन्दी कहानी में जीवन मूल्य	डॉ0 रमेश चन्द्र
हिन्दी कथा में प्रेम एवं सौन्दर्य तत्व का निरूपण	डॉ0 देव कुमारी
हिन्दी उपन्यासों का रचना विधान	डॉ0 शशिबाला पंजाबी
सौन्दर्य शास्त्र के तत्व	डॉ0 कुमार विमल
साहित्य और सौन्दर्य बोध	डॉ0 रामशंकर द्विवेदी
अमिशप्त – शिला	डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित ललित
बीसवीं शती की हिन्दी कहानी का समाज–मनोवैज्ञानिक अध्ययन	डॉ0 महेश चन्द्र दिवाकर

हिन्दी नई कहानी का समाजशास्त्रीय अध्ययन	डॉ0 महेश चन्द्र दिवाकर
फणीश्वर नाथ रेणु का कथाशिल्प	डॉ0 रेणु साह
हिन्दी रीति काव्य में सौन्दर्य बोध	डॉ0 ऊषा गंगाधर राव सानापुरकर
महाकवि कालिदास	डॉ0 रमाशंकर तिवारी
हिन्दी के आंचलिक उपन्यास	डॉ0 मृत्युंजय उपाध्याय

संस्कृत –

आनन्द लहरी	शंकराचार्य
अभिज्ञान शाकुन्तलं	कालिदास
उत्तर रामचरित	भवभूवि
छांदोगयोपनिषद	
तैत्तिरीयोपनिषद	
ध्वन्यालोक	
कठोपनिषद	
काव्यालंकार	भामह
काव्यप्रकाश	
मुण्डकोपनिषद	
वेदान्तसूत्रं	
वक्रोक्तिजीवितम्	कुन्तक
साहित्यदपर्ण	आ0 विश्वनाथ
सौन्दर्यलहरी	शंकराचार्य

अंग्रेजी –

A History of Aesthetics - Bernard Bosanquet, George Allen & Unewen, London - 1956

Beauty and Other forms of value
S. Allexander, 1933, Macmillon

Comparative Aesthetics Vol. II,
Western Aesthetics Dr. K.C. Pandey,
Chowhhamba, 1956

History of Bengali Language and Literature by Dinesh Chandra on University of Calcutta, 1954.

Rabindra Nath Tagor, A Philosphical Study, V.S. Nara vane, Centre, Book Depo, Allahabad.

विविध –

पत्रिकाएँ

धर्मयुग बम्बई

कादम्बिनी, नई दिल्ली

सारिका, नई दिल्ली तथा बम्बई

नई कहानी, इलाहाबाद, दिल्ली

माध्यम, इलाहाबाद

ज्ञानोदय, कलकत्ता

कल्पना, हैदराबाद

लहर, अजमेर

सरिता, दिल्ली

नवनीत, बम्बई

कहानी, हैदराबाद